



णमो समणम्म भगवओ महाद्वाग्म्म ।  
 प्रातःस्मरणीय प्रभु श्रीमद् विजयराजेन्द्रहर्षाक्ष महगुण्डर-  
 चण्णादिन्द्रेभ्यो नमः ।

# मुनिराज श्रीसत्त्वसाकल्याणजी गुम्फिन श्री अष्टाह्निका व्याख्यानम् ।



— : भाषाण्यर : —

परमयोगीशज, ज्ञानप्रभावक, धार्मिकानन्दप्रदाय, सर्वत्र स्तुतेऽस्मिन्  
 प्रभु श्रीमद् विजयराजेन्द्रहर्षाक्ष महगुण्डर

ॐ (०

— : गुरुसत्त्वसाकल्याणजी गुम्फिन : —

शुद्धेय परमहंसस्य प्रतिपद  
 मुनि जयन्तविजय 'सत्त्वसाकल्याण'

ॐ

— : महाराज : —

श्री गुरुदेवस्य प्रतिपद इत्येतत् स्तुतिः

अष्टाह्निका [संस्कृत]

प्रथम सहायक :  
श्री राजेन्द्रश्वरि जैन ज्ञानमन्दिर  
श्राविका मण्डल  
अहमदाबाद [गुजरात]

५५

श्री राजेन्द्रश्वरि ज्ञानमंदिर  
रतनपोळ-हाथीखाना,  
अहमदाबाद

—: प्राप्तिस्थान :—

श्री मांगीलालजी वूरड  
राणापुर [ म. प्र. ]  
( जि० झाबुआ )

१. १५. ५५

श्री वीर निर्वाण सं. २५००  
श्री राजेन्द्रश्वरि सं. ६७  
विक्रम सं २०३०  
द्वितीय संस्करण  
मूल्य : २-०० रुपये ।

★

मुद्रक :  
कांतिलाल डी. शाह  
भगत प्रिन्टरी,  
दाणापीठ पाल्हा,  
पालिताणा



## प्र का श की य

—५५०—

प्रस्तुत 'अष्टान्तिका व्याख्यान' जिन के मूल निर्माता 'श्रीमद् क्षमाकल्याणजी महाराज' हैं, पाठकों के सामने प्रस्तुत है।

भाषान्तरकार है सकलागमरहस्यद्रष्टा, उत्कृष्ट क्रिया चारित्र्य पालक प्रातःस्मरणीय गुरुदेव प्रभु श्री राजेन्द्रधरीश्वरजी म.।

पूर्व में पत्राकार में प्रस्तुत प्रकाशन प्रकाशित हुआ था किन्तु वर्तमान में उस प्रतियां अप्राप्य होने से विदुषी साध्वीजी श्रीमती हेतुश्रीजी परम विनेया विदुषी साध्वीजी श्री मुक्तिश्रीजी का विशेष आग्रह रहा कि पुनर्मुद्रण कराया जाय। उन की भावनानुसार यह प्रकाशन त्रिभाषात्मक प्रकाशित किया जा रहा है, जिस से तद् भाषा भाषी इसका उपयोग कर सकें।

इसका प्रकाशन भी उन्हीं के उपदेश से श्री राजेन्द्रधरि ज्ञानमन्दिर के श्राविका मण्डल की ओर से किया जा रहा है। इस काम में गुरुदेवभक्तिपरायणा श्रीम चन्द्रावेन भणसाली का सहयोग भी अवश्य ही उल्लेखनीय रहा है।

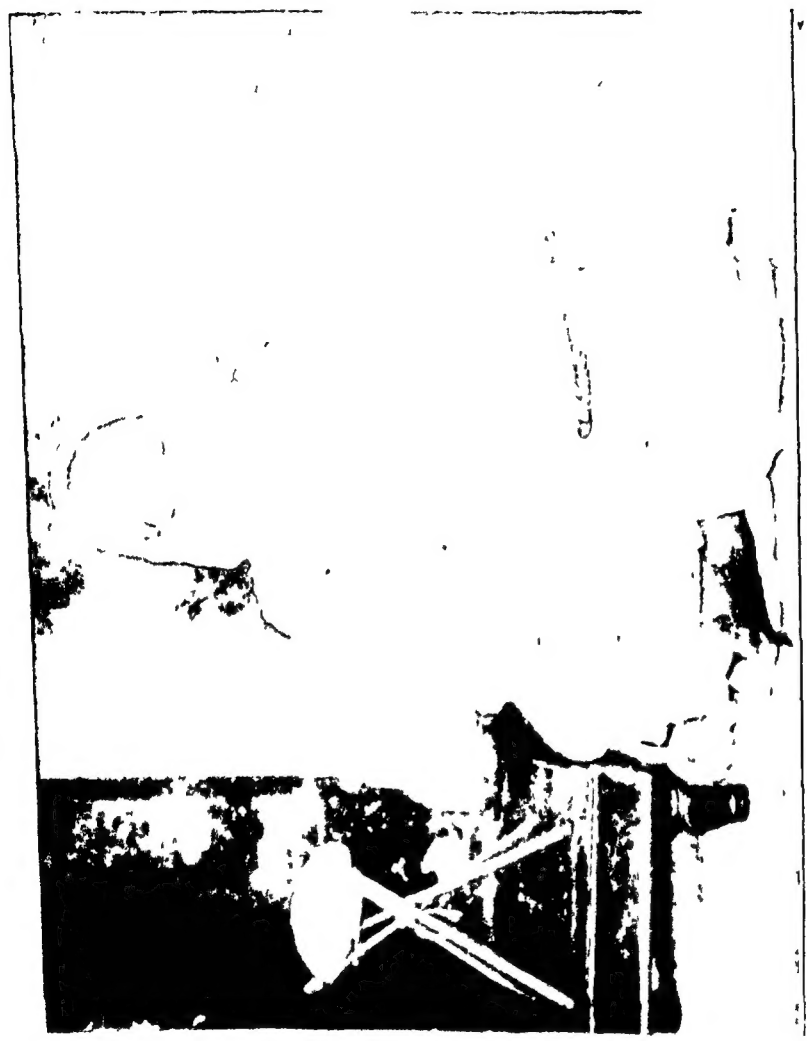
पर्याधिराज के दिनों में अष्टान्तिका व्याख्यान का वांचन किया जाता है कि में आराधक आत्मा के कर्तव्यों की सम्पूर्ण व्याख्या है।

पाठक इस का लाभ उठावेंगे. यही

—प्र का श क







(०६१) श्रीमानश्रीजी म० की शिवा

## सादर वन्दना ।

ज्ञान्तरस्य-निमग्न !

विनय-गुण-संपन्ना !

वेदा-गुण-संगुणा !

परमात्मा गुणोंकी विधि  
श्रीमती ईश्वरीय सत्तागत की  
श्रेष्ठा मेरे सीखनेवाले मे  
समस्त रही और सदा रही  
सें हम की लाला मेरे पर,  
हम के लक्षणों से हमारे  
भक्तिद्वारे हृदय से ललित  
संज्ञा !

—सिद्धाचरण मुनि ।



१९८२ कुक्षी, १९८४ भैंसवाडा, १९८५ तमपगढ, १९८६ शीवगंज, १९८७ भीनमाल, १९८८ भीनमाल, १९८९ पालीताणा, १९९० अहमदाबाद, १९९१ अहमदाबाद, १९९२ थराद, १९९३ वागरा, १९९४ आहोर, १९९५ गुडा, १९९६ भैंसवाडा; इस प्रकार गुरुणीजी श्री मानश्रीजी, विनयश्रीजी आदि के साथ चातुर्मास किये।

१९९९ पालीताणा, २००० पालीताणा, २००१ पालीताणा, २००२ अहमदाबाद, २००३ वागरा, २००४ थराद, २००५ थराद, २००६ ग्याचरोद, २००७ उड्डैन, २००८ जावरा, २००९ आली राजपुर, २०१० कुक्षी, २०११ राजगढ, २०१२ राजगढ, २०१३ मन्दसौर, २०१४ रतलाम क्रमशः श्रीमती कमलश्रीजी के साथ चातुर्मास व्यतीत किये।

१९९७ आहोर, १९९८ पाली, २०१५ जावरा, २०१६ आहोर, २०१७ आहोर, २०१८ थराद, २०१९ थराद, २०२० थराद और २०२१ से २०३० तक क्रमशः सभी चातुर्मास आपने स्वयंने किये।

सर्वप्र चातुर्मास में बहुत यश को प्राप्त किया और अपनी गुणगरिमा को प्रसारित किया।

आप की विनय सम्पन्नता एवं सेवा भावना प्रत्येक के लिये अनुकरणीय एवं अनुमोदनीय है। समुदाय में आप की शिष्याएं निम्नांकित हैं जो आप की निश्चा में आत्मसाधना एवं ज्ञानोपासना में रत हैं।

साध्वीजी श्री जयश्रीजी, २ श्री जयन्तश्रीजी, ३ श्री कुसुमश्रीजी, ४ श्री कुमुदश्रीजी, ५ श्री चन्द्रप्रभाश्रीजी, ६ श्री महाप्रभाश्रीजी, ७ श्री महेन्द्रश्रीजी, ८ श्री स्वयंप्रभाश्रीजी, ९ श्री प्रेमलताश्रीजी, १० श्री पूर्णकिरणाश्रीजी, ११ श्री प्रियदर्शनाश्रीजी, १२ श्री तिलकप्रभाश्रीजी, १३ कनकप्रभाश्रीजी, १४ श्री किरणप्रभाश्रीजी, १५ श्री कल्पलताश्रीजी, १६ श्री कुशलप्रभाश्रीजी, १७ श्री कीर्तिप्रभाश्रीजी, १८ श्री प्रियलताश्रीजी, १९ श्री सुनन्दाश्रीजी २० श्री विजयाश्रीजी २१ श्री महिलाश्रीजी, २२ श्री सुदर्शनाश्रीजी, २३ श्री हर्षपूर्णाश्रीजी।

प्रस्तुत चरित्रनायिकाने अपने जीवन में ज्ञान-ध्यान के साथ दस उपवास, आठ उपवास व विश्वस्थानक तप की आराधना, वर्धमान चौबीसी तपाराधना की और आज इतनी वृद्धावस्था में भी अपनी क्रिया में अप्रमत्तभाव अवश्य ही उल्लेखनीय है। अष्टमी, चतुर्दशी को उपवास व पंचतिथि में आर्यविल की तपस्या नियमित चलती है।

वैयासकी भावना व प्रवृत्ति एक सदाक को भी शर्मिन्दा कर दे अमी है। सभी के साथ प्रेम, यात्रात्मक और स्नेहाद्रि हृदय सब का प्रीतिपात्र बना चुका है।

दीक्षा के पुर्य सम्प्रेतशिष्यादि पुर्य के क्षेत्रों की और दीक्षा के बाद गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश में विहार कर शत्रुंजय, गिरनार, आनु, शंखेश्वर, मक्षीजी, माण्डवगढ, जैमलमेर, भद्रेश्वर आदि तीर्थों की यात्रा की।

अपने गृहस्थाश्रम के पिताजी श्री जवानमलजी को आपने अन्तिम समय की आराधना करवा कर आत्मशान्ति दिलाई।

इस प्रकार अपने जीवन को मार्थक बनाने हुये श्रीमती विदुषी गुरुणीजी म० श्री शिष्यता प्राप्त कर रही हैं। हम धन्य हैं। हमे उनकी निश्चा प्राप्त हुई है।

उपशान्तु हैं आप यही जन्तु की कामना के साथ आप के चरणारविन्द में मगनि सादर मविधि यन्दनांजलि। शुभम्।

॥ ॐ अर्हते नमः ॥

जान्तीजं ज्ञानिकर्तारं, नम्य स्मृत्या च मान्ये ।

अष्टाद्विकाया व्याख्यानं, निगम्यते गजगन्धनः ॥ १ ॥

[ हिन्दी ] जन गण मानस में एवं विश्व में ज्ञानि स्थापित करने वाले श्री ज्ञानिनाथ प्रभु को नमस्कार करते उनका हृदय में स्मरण करते गजगन्धन हैं मैं अष्टाद्विका व्याख्यान निगमता हूँ ॥ १ ॥

पर्युषण विगने कहते हैं ?

साधु (श्रमण) जन शत्रु और शत्रु शत्रु से ८ साल तक भयानक होते हैं, वे वर्षाकाल में आपात अवस्था पूर्णता से पचास दिन पचास रात तक भयानक भयानक पर हैं, ऐसे पर्युषण (पतयण) कहते हैं ।

[ગું] સર્વ પ્રકારના દુષ્કર્મેની દૂર કરનારા, આલોક અને પરલોકમાં પણ કલ્યાણ કરનારા પર્વાધિરાજ શ્રી પર્યુપણના આગમન સમયે ૬૪ ઇન્દ્રો પોતાના સર્વ દેવી-દેવતાના પરિવાર સાથે ધર્મની પ્રભાવતા અને આરાધના માટે નંદીશ્વર નામના આઠમા દ્વીપમાં જાય છે.

[સં૦] તત્ર તાવત્ નન્દીશ્વરદ્વીપસ્ય મધ્યભાગે ચતુર્દિક્ષુ ચત્વારોઽંજનગિરયઃ સન્તિ । અંજનવર્ણાઃ પર્વતા इत्यर्थः । તેપાં પ્રત્યેકં ચતુર્દિક્ષુ ચત્સો વાપ્યઃ સન્તિ તાસાં વાપીનાં મધ્યભાગેષુ દધિમુખપર્વતાઃ દધિવર્ણાઃ શ્વેતાઃ સન્તિ પુનર્દયોર્વાપ્યોરન્તરેષુ દ્વૌ દ્વૌ રતિકરપર્વતૌ વર્તેતે સર્વે રક્તવર્ણાઃ इत्यर्थः ॥

[હિન્દી] વહાં (અષ્ટ દ્વીપ મેં) નન્દીશ્વર દ્વીપ કે મધ્ય ભાગ મેં ચારોં દિશાઓં મેં અંજનગિરિ નામ કે કૃષ્ણવર્ણ વાલે ચાર પર્વત હૈં । उन पर्वतों में प्रत्येक पर्वत की चारों दिशाओं में चार वावडियां हैं । उनमें से प्रत्येक वापिका के मध्य भाग में दही के समान श्वेत रंग के दधिमुख नाम के पर्वत हैं । फिर प्रत्येक वापिकाओं के अन्तर में दो दो लाल रंग वाले रतिकर नामक पर्वत हैं ।

અષ્ટ દ્વીપ કૌન ૨ સે હેં ?

इस तिर्यक् लोक में जो जंबूद्वीप प्रमुख असंख्याता द्वीप हैं, और लवण समुद्र प्रमुख असंख्याता समुद्र हैं । जिनमें से ८ ये हैं:—(१) जम्बूद्वीप (२) धातकीखण्ड (३) पुण्ड्रवर द्वीप (४) वारुणीवर द्वीप (५) क्षीरवर द्वीप (६) घृतवर द्वीप (७) इक्षुवर द्वीप (८) नन्दीश्वर द्वीप.

[ગું] ત્યાં આઠમા નંદીશ્વર દ્વીપના મધ્ય ભાગમાં ચારે દિશાઓમાં અંજનગિરિ નામના કાળા વર્ણના ચાર પર્વતો છે. એ દરેકના ઉપર ચારે દિશાઓમાં ચાર વાવડીઓ છે. તેમાં પ્રત્યેક વાવડીની વચ્ચે દહીંના જેવા સફેદ રંગના દધિમુખ નામના પર્વતો છે. વળી પ્રત્યેક બીજી વાવડીઓ વચ્ચે લાલરંગના રતિકર નામના બે બે પર્વતો છે.

આઠ દ્વીપ કયા કયા ?

આ તિર્યક્લોકમાં જંબૂદ્વીપ પ્રમુખ અસંખ્યાતા દ્વીપો છે, અને લવણસમુદ્ર પ્રમુખ અસંખ્યાતા સમુદ્રો છે. જેમાં આઠ દ્વીપ આ પ્રમાણે છે:— (૧) જંબૂદ્વીપ, (૨) ધાતકીખંડ, (૩) પુન્ડ્રવરદ્વીપ, (૪) વારુણીવર દ્વીપ, (૫) ક્ષીરવરદ્વીપ, (૬) ઘૃતવરદ્વીપ, (૭) ઇક્ષુવરદ્વીપ, (૮) નંદીશ્વરદ્વીપ.

[ सं० ] एवं चैकेकाक्षनगिरः समन्तात् चन्द्राग्रे दक्षिण्युक्ता उष्ट्री च गतिरुक्तः सन्ति । सीमन्ते जाता त्रिषञ्चागत गिर्यः ते च पृथक् २ नामसंज्ञक्य चन्द्राग्रेऽवत-  
गिर्यः (४) द्रोण्या दक्षिण्युक्ताः (१६) द्राष्टिग्नद्विनिकराः (३२) तेनानुसंगिकं जि-  
भवनमस्तीति त्रिषञ्चाग्नद्विनचर्ग्यानि सन्ति तेषु जिनचर्ग्येषु प्रत्येकं चतुर्विंशत्यद्विकृतं  
जिनचर्ग्यानि सन्ति, सर्वेषां मिलितं दृष्टव्याग्निदक्षिण्युक्तः पट्टितानि जिनचर्ग्यानि  
भवन्ति ( ६४४८ ) ॥

[ हिन्दी ] इस प्रकार एक एक श्रृङ्गनगिरिनाम पर्वत के आसपास बार बार  
दक्षिण्युक्ता और आठ आठ गिरिनाम पर्वत हैं । श्रृङ्गनगिरि समस्त प्रत्येक द्विज है तेन तेन  
पर्वत है । चारों दिशाओं की मिलाने से (५२) पर्वत होते हैं । चार नामसंज्ञक,  
सोना दक्षिण्युक्ता और ग्रीष्म गिरिनाम पर्वत सब समस्त (५२) हैं । इन सबके ऊपर के  
ऊपर एक २ जिनमन्दिर हैं । इन मन्दिरों से प्रत्येक एक की दिशा में एक एक  
चन्द्रानन, वाग्मिना, वर्तमान आदि तीर्थदशों की प्रतिमाएँ हैं । इन प्रतिमाओं से  
प्रतिमाएँ की संख्या [ ६४४८ ] ए हज़ार साठ सौ अठ्ठावन होती है ।

“ प्रतिमाएँ की अष्टमाष्टना संख्या की प्रत्येक एक की दिशा में एक एक  
छांदी सात सात की हैं । ये सब प्रतिमाएँ बनसर्ग हैं । इन प्रतिमाओं से  
आष्टागिरी एक एक की संख्या में सब दिशा में हैं ।

द्विकामहोत्सवं कुर्वन्ति । जल-चन्दन-पुष्प-धूपाद्यष्टविधद्रव्यैर्जिनविम्बानि पूजयन्ति, जिनगुणान् गायन्ति, स्तुवन्ति नाटकं च विदधति । इत्यमष्टदिनावधि महोत्सवं समाप्य पुनः स्वस्थानं गच्छन्ति ॥

[ हिन्दी ] वे सारे जिनचैत्य चार चार दरवाजों वाले हैं । प्रत्येक मन्दिर शाश्वत रहनेवाले प्रवर तोरणों आदि से अलंकृत हैं । ये शाश्वत जिनालय अत्यन्त भव्य एवं सुन्दर हैं । वहां चौसठों इन्द्र बहुत से देवी और देवताओं के साथ बढ़ती हुई भावनाओं के साथ अष्टाद्विका महोत्सव करते हैं । इन दिनों में सब जल, चन्दन, पुष्प, धूप आदि अष्टविध द्रव्यों से जिनविम्बों की पूजा करते हैं । जिनेश्वर भगवान के गुणों को गाते हैं, उनकी स्तुति करते हैं एवं वहां नाटक भी करते हैं । इस प्रकार आठ दिनों तक इस महोत्सव को करके फिर अपने अपने स्थान को चले जाते हैं ॥

“ इस प्रकार का उत्सव चौमासी तथा भगवान के कल्याणक प्रमुख का भी करते हैं । यह बात श्री जीवाभिगम सूत्र तथा ज्ञाताधर्मकथा सूत्र में कही है ॥ ”

[ गु० ] दरेक जिनालय बार बार दरवाजवाला छे. शाश्वत रहनेवाला अने सुंदर तोरणोथी विभूषित छे. ओ शाश्वत जिनलवनो लव्य अने सुंदरताथी युक्त छे. त्यां चौसठ धन्द्रो देव-देवीओना परिवार साथे भावना-भक्तिथी भरपूर हृदयथी अछाछ महोत्सव करे छे. अष्ट द्रव्योथी जिनेन्द्र-पूजन करे छे जिनेश्वर भगवानना गुणगान करे छे. भावलरी स्तुति अने नृत्य पणु करे छे. आ प्रभाणे आठे दिवस उत्सव करीने दरेक पोतपोताना स्थाने लय छे.

आबो उत्सव चौमासी अने तीर्थकर भगवतोना कल्याणक प्रमुख प्रसंगाभां पणु करे छे. आ बात श्री जीवाभिगम सूत्र तथा ज्ञातासूत्रभां पणु कहेली छे.

[ सं० ] एवं श्रावकैरपि श्रीमत्तीर्थंकरप्रकाशितेऽस्मिन् पर्वणि समागते धर्म-कर्मणि यन्तो विधेयः तथा चास्मिन् पर्वणि श्रावकाणां कृत्यान्याह :—

[ हिन्दी ] इस प्रकार में श्रावकों को भी श्रीमत्तीर्थंकर द्वारा प्रकाशित इस पर्वण्य पर पर्व के आने पर धर्म कर्म के सम्पादन करने में प्रयत्न करना चाहिये ।

और इस पर्व में श्रावकों के क्या कर्तव्य-कृत्य हैं, उन्हें बताते हैं :—

[ अ० ] आ दीन शायक्ये पाण् श्रीमन् तीर्थंकर कारा इत्येवावेत्त  
आ पर्युपण् पर्व आये त्यागे धर्म-कर्मना अंशान्तरमां विद्वेत् प्रथम  
कृते। वेदक्ये।

आ पर्वमां शायक्ये शुं शुं धर्म-कर्म करवांवेदक्ये ने कृते कृते:-

### पर्युपण पर्व:-

[ हिन्दी ] “यह पर्युपण पर्व मा पर्वों में बड़ा पर्व है। मछले दूध का दूध  
बोता भी पर्व नहीं है, इस लिये विशेष कर्मों, प्रसाद का स्नान कर पर्व मा कर्ते हैं। इस  
वर्षना जाहिये, बघों बि. यह मनुष्य जन्म, जन्म नाति, जन्म जन्म, जन्म विद्वेत्ते क-  
सनाया धर्म धारधार मिलना पारित है। मते, पुण्यो के योग ने कर्त मा कृते - ने  
तो अस अर्थ के, प्रसाद में यह जीवन नहीं मिलाना पारित है। इस पर्व मा कर्ते  
पितृ श्रोतरी तत्त जीवायोनियों में अमण पर्वे दूध मिलाना पर्व है। यह पर्व मा कर्ते

इस लिये इस पर्व में तो अत्यन्त धर्म, ईश्वर, अमण, अमण, अमण, अमण, अमण  
मपल पर लना जाहिये ॥

વિરુદ્ધ ન હો।” દેવ અરિહંત, ગુરુ નિર્ગ્રંથ, કેવલિભાષિત દયામૂલ ધર્મ, इन तीनों तत्वों को अन्तःकरण से पालन करने वालें ही श्रावक, सही अर्थों में श्रावक हैं।”

[ગુ૦] દુનિયામાં સૌ ધર્મ, ધર્મ એમ કહે છે પણ ધર્મ શું ચીજ છે તેને ઓળખવો અને જાણવો એ બહુ મુશ્કેલ વસ્તુ છે. પાખંડી લોકો પોતાનું પેટ ભરવા માટે ધર્મના જુદા જુદા રીતે અર્થ કરે છે, પરંતુ આ પાખંડીઓનું કહેવું બધું અસત્ય છે; કારણ કે તેમને ધર્મનો માર્ગ પણ હાથ લાગ્યો નથી. સાચો ધર્મ એ કહેવાય જેમાં હિંસા વગેરે આશ્રવોનો ત્યાગ હોય અને જે કેવળીઓના વચનોથી વિરુદ્ધ ન હોય. “દેવ અરિહંત, ગુરુ નિર્ગ્રંથ, અને કેવળીઓએ કહેલો દયા જેના મૂળમાં છે એવો ધર્મ—આ ત્રણે તત્ત્વોનું અંતઃકરણપૂર્વક પાલન કરનારા શ્રાવકો જ ખરા અર્થમાં શ્રાવકો છે.”

આશ્રવ—કપાય—રોધઃ કર્તવ્યઃ શ્રાવકૈઃ શુભાચારૈઃ ।

સામાયિક—જિનપૂજા—ત્ત્વોવિધાનાદિ—કૃત્યપરઃ ॥ ૧ ॥

[સં૦] તત્ત્વશ્રવાઃ પશ્ચ તે ચામી,—પ્રાણાતિપાત—મૃપાવાદાદ્દત્તાદાન—મૈથુન—પરિગ્રહાસ્તેષાં રોધો નિરોધઃ અર્થાત્ત્યાગઃ કર્તવ્યઃ ।

[હિન્દી] આશ્રવ કપાયોં કો રોકના ચાહિયે । સામાયિક, જિનપૂજા, તપ કે વિધાનાદિ કૃત્ય કરને મેં શુભ આચરણ સે યુક્ત શ્રાવકોં કો તત્પર રહના ચાહિયે । આશ્રવ પાંચ હૈં, વે હૈં...(૧) પ્રાણાતિપાત (૨) મૃપાવાદ (૩) અદત્તાદાન (૪) મૈથુન (૫) પરિગ્રહ; इन पांचों का रोध अर्थात् त्याग करना चाहिये ।

[ગુ૦] આશ્રવ—કપાયોને રોકવા જોઈએ. સામાયિક, જિનપૂજા, અને તપના વિધાનો વગેરે શુભકૃત્યોમાં સારા આચરણવાળા શ્રાવકોએ હંમેશા તત્પર રહેવું જોઈએ. આશ્રવ પાંચ છે. (૧) પ્રાણાતિપાત, (૨) મૃપાવાદ, (૩) અદત્તાદાન, (૪) મૈથુન, (૫) પરિગ્રહ આ પાંચેયનો રોધ એટલે ત્યાગ કરવો જોઈએ.

[हिन्दी] इन सब में प्रथम द्वि इन्द्रिय आदि जीवों की विनियम (उन्हे उपयोग सन्नि सामना) आशकों को छोड़ देना चाहिए, कारण कि “मनी माने मे अमरदान ही अमर है, ऐसा “समस्तान्तरी इत में कहा है” तथा अन्य की कहा है।

[illegible]

[ ૩૮ ] આ બધામાં સૌથી પહેલાં જિન્દગીનાં સંસ્કારો બનાવવા (જિન્દગી પંથોજી સાથે માનવતા) કામગીરી શરૂ કરવાની છે. આ દાનામાં અભયદાન જે કામ છે તે સંસ્કારોમાં સૌથી પહેલાં તથા બીજાં વાક્યમાં છે.



બરાબર સોના (સુવર્ણ) કિસી કો દાન મેં દેવેં ઓર એક સમ્પૂર્ણ પૃથ્વી કા દાન દેવેં, ઓર એક મનુષ્ય કિસી મી પ્રાણી કોં અભયદાન દેવેં તો મી પ્રથમ કે દોનો દાની અભયદાન દેને વાલે કં આગે હીન હેં, ક્યોં કિ હસ સંસાર મેં અહિંસા કે તુલ્ય કુદ મી નહીં હેં ॥ ૨ ॥

[ગુ.] મરવાવાળા મનુષ્યને કોઈ કરોડ રૂપિયાની આજીવિકા આપી દે, તો પણ તે તેને લેવાની ઇચ્છા નહીં કરે; કેમ કે સૌને પોતાનો પ્રાણ સૌથી વહાલો છે. મર્યા પછી તે ધન શું કામમાં આવશે? ”

શ્રીકૃષ્ણ યુધિષ્ઠિરને કહે છે કે હે યુધિષ્ઠિર, ! કોઈ માણસ મેરુ પર્વત જેટલું સોનું કોઈને દાનમાં દે, કોઈ આખી પૃથ્વી દાનમાં આપે અને એક માણસ કોઈ પ્રાણીને અભયદાન આપે તો પહેલા બન્ને દાની અભયદાન આપવાવાળા માણસ કરતાં નીચા છે. કારણ કે આ સંસારમાં અહિંસા જેવું શ્રેષ્ઠ કાંઈ પણ નથી. ૨.

[હિન્દી] “ હસ સંસાર મેં મરને ( મૃત્યુ ) કે સમાન મય નહીં હેં, પૈદલ ચલને કે સમાન દુઃખ નહીં હેં, મૂર્ખોં મરનેં કે સમાન તકલીફ (વેદના) નહીં હેં, દરિદ્રતા કે સમાન માનહીનપના નહીં હેં તથા સંસાર કે સમી પ્રાણી સુખ કે અમિલાપી હેં, કોઈ મી દુઃખ કા અમિલાપી નહીં હોતા હેં ।

અતઃ શ્રાવકોં કોં ચાહિયે કિ વે કુત્યાપાર નહીં કરેં, વિના છાનેં પાનીં કો કામ મેં ન લેં, હમ પર્યૂષણ પર્વ મેં તો સ્વાસ કરકે હિસા કે કાર્ય ન કરેં, કેવલ ભોજન કે વિના કામ નહો ચલતા અતઃ કાર્ય, ઉપયોગપૂર્વક સ્થાને જિતના હી આરંભ કરેં । કિન્તુ જ્યાદા આરંભ નહીં કરે । ઉસમેં મી કંડે (છાંખા) લકડી દેખ કે જીવ-જન્તુ ગદ્દિત કામ મેં લેવે । ચૂલ્હે કોં વર્તનો કે સ્થાન કોં અચ્છી તરહ દેખ લેવેં, જલ કે વર્તન ગુલે ન મ્કવેં, ચંદોવા (વિતાન) વાંધે વિના મ્મોઈં ઇત્યાદિ કાર્ય ન કરેં, હમ તરહ જીવદયા કા પાલન કરમેં દુઃખ હમ મય મેં હી સુખપ્રદ હોં તો પરમય મે સુખ પ્રદ હોં. હમ મેં કયા આશ્ચર્ય ? અર્થાત્ દુઃખ મય મેં તો સુખ દેને વાલે હોંગે હી ।

[ગુ.] આ સંસારમાં મૃત્યુ જેવો કોઈ ભય નથી, પગે ચાલવ જેવું કોઈ દુઃખ નથી, ભખે મરવા જેવી કોઈ વેદના નથી, અને ગરી આઈ જેવું કોઈ અપમાનકારક નથી. સંસારમાં સૌ પ્રાણી મુખના અભિલાષી છે. કોઈ દુઃખ ઇચ્છતું નથી.

એટલા માટે શ્રાવકોએ કોઈ વિચાર આચર્યું ન કર્યું તેમજ  
 ગળ્યા વિનાના પાણીના ઉપયોગ ન કર્યો તેમજ આ ચતુર્થાણ પર્વમાં  
 નો ખાસ કરીને દિવસ થાય એવું કામ કોઈ ન કરે. આખરે બાજન  
 વિના આસનું નથી. નથી ઉપયોગ એટલું જ નહીં પણ પ્રધાન મંત્રી તરીકે.  
 એમાં છાયા, સાકાર વગેરે ખાસ નવાઈને જુદાં જુદાં કરવામાં  
 કે. એવા અને વાચન મળવાની જગ્યા મળવાને તેમજ કે. એવા  
 વાચન ઉપર ન મળે. એવાના ઉપરના ભાગમાં ઉપરના ઉપરના  
 માંથી વિચાર મેળાઈ ન કરે. આ રીતે જુદાં જુદાં કરવામાં  
 આ ભવમાં મળ મેળવે. નો મહા મળવે. આ રીતે તેમજ  
 આદ્ય. મતલબ કે આ જુદાં જુદાં કરવામાં મળવે. આ રીતે  
 અવરજ અવરજ.

[सं०] सच कीदृशः—कण्ठन्यस्त—रक्त—करवीरमालो रक्त—वस्त्र—परिधानो, रक्त चन्दनानुलिप्त—गात्रः पुरस्ताद्वाद्यमान—वध्य—डिडिमः इत्थं विविध—विडम्बनाभिर्विडम्ब्यमानं तं चौरं दृष्ट्वा राज्ञीभिः पृष्टं, किमकार्यमनेनाकारीति ॥

[हिन्दी] उस चोर के कण्ठ में लाल कणेर के फूलों की माला थी, उसके वस्त्र भी लाल थे, उसके शरीर पर लाल चन्दन का लेप लगा हुआ था। वह कठिन रज्जुओं से बंधा हुआ था, उसके आगे एक राजपुरुष ढिंढोरा पीटता हुआ चल रहा था। (वह ढिंढोरेवाला उच्च स्वर में कह रहा था—देखो रे लोकों ! “जा कोई भी उस की तरह चोरी करेगा उसका यही हाल होगा।) ”

इस तरह की तकलीफ व अपमान पाता हुआ वह चोर वध्य स्थल को ओर ले जाया रहा था। ऐसे चोर को देख कर राजा की इन चारों रानियोंने पूछा, हे महाराज ! इसने क्या अकृत्य किया है ?

[गु०] એ ચોરના ગળામાં લાલ કણેરના ફુલની માળા હતી, એનાં વસ્ત્રો પણ લાલ હતાં અને એના શરીર ઉપર લાલ ચંદનનો લેપ કરેલો હતો. તેને કઠણ દોરણોથી બાંધેલો હતો અને તેની આગળ એક રાજકર્મચારી ઢંઢેરો પીટતો ચાલતો હતો અને ઊંચે સ્વરે લોકોને કહેતો હતો કે “જે કોઈ આની જેમ ચોરી કરશે તેના આવા હાલ થશે.”

આ પ્રમાણે તકલીફ અને અપમાન પામતા તે ચોરને વध्यस्थળે લઈ જવામાં આવતો હતો. આવા ચોરને બોધને રાજની એ ચારે રાણી-ઓએ પૂછ્યું “હા મહારાજ ! આ માણસે શું ગુનહો કર્યો છે ?”

[मं०] तदा एकेन गजपुरुषेण तामां पुरः कथितं पद्मव्यापहारेण राजविरुद्ध-मनेन व्रतमिति ततः मन्नातकृपया एकया राज्या विज्रप्तो गजा । स्वामिन् ! यो भवता मयं प्राग्वगः प्रतिपन्नः मोञ्चुना दीयतां येनाहमेकदिनमुपकरोमि चोगम् । तदा कथंचिद्राजा प्रतिपन्नं च तद्वचः ।

[हिन्दी] तब एक गजपुरुषने बताया कि इस चोगने दूतों के धन को चुराया है, इस तरह गजा के नियमों के विरुद्ध करने से यह दण्डित हुआ है। (प्राणदण्ड के दिने ले जाया रहा है) तब एक गनी के मन में यह मुन कर दिया उत्पन्न हुई। उसने गजा में निवेदन किया कि हे स्वामी ! आपने मुझे पहले जो एक वर देने को

કહા થા જી જી આપ મું છે. તાકિ મેં હમ જોગ જા જી દિન હજાર કરું ।  
ગજાને વિલો નગ્ગ ઉમ ગની જા કરના માન લિયા । (ઉમ દિન જી જોગ જીગજીગ  
જો જોગ નર્ગ ગયા જોગ ગજા જે, જીગજીગ નર્ગ ગની જે જીગજીગ જીગજીગ ॥

[ગુરુ] ત્યાં એક મહાપુરુષ કહ્યું કે “આ આપણે જીગજીગ જીગજીગ  
જી. આથી મહાપુરુષ નિયમોની વિગતો કાઢી દેવા માટે નેને મહાપુરુષ  
જીગજીગ આવી જી, ને મહાપુરુષ દેવા માટે નેને જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ  
આવી જી.” આ આપણીને એક મહાપુરુષ મહાપુરુષ દેવા દેવા જી, ને  
મહાપુરુષ પ્રાર્થના કરી કે— મહાપુરુષ ! આપે જી, જીગજીગ જીગજીગ  
મહાપુરુષ દેવા ને આપે જી મહાપુરુષ જી. “આ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ  
જીગજીગ જી, ને નેને જીગજીગ આપવા જીગજીગ જી.” જીગજીગ જીગજીગ  
જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ  
જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ જીગજીગ

[सं०] ततः पञ्चम्या दुर्भगाया राज्या पञ्चमदिने राज्ञः समीपमागत्य विनय-  
नम्रतया दीनवचसा नृपो विज्ञप्तः । स्वामिन् ! मम दुर्भगाया उपरि भवदीया तादृशी  
कृपा नास्ति तेन मया कदापि भवन्तो न याचिताः । अधुनाऽस्य चौरस्य जीवितदानं  
मया त्वं याच्यसे तदा राज्ञापि जीवितप्रदानपूर्वकं चौराऽस्य प्रदत्तोऽनया च तं चौरं  
स्वगृहे नीत्वा सामान्यभोजनेन भोजयित्वा कथितं “मया तुभ्यं जीवितं प्रदत्तं पुनः  
चौर्यं मा कार्षीः ॥

[हिन्दी] तब पांचवी दुर्भगा रानीने पांचवे दिन राजा के पास आकर सविनय  
कहा, “हे स्वामी ! मुझ अभागिन पर आपकी वैसी कृपा नहीं है, अतः मैंने कभी  
भी आप से वर नहीं प्राप्त किया । अब इस चोर को “जीवनदान” देने की मेरी  
प्रार्थना है । राजानें भी चोर को ‘जीवनदान’ देने की उसकी प्रार्थना स्वीकार की ।  
और वह चोर रानी को साँप दिया । रानी उसे अपने महल में ले गई, उसे उसने  
सामान्य भोजन कराकर कहा, हे चोर ! मैंने तुझे जीवन से अभयदान दिलाया है, अब  
तुम्हें मृत्यु का भय नहीं है, अब से तुम फिर कभी भी चोरी का काम मत करना ।

[गु०] पांचमे दिवसे पेली अलागी पांचमी राणीअे राजनी पासे  
जधने सविनय प्रार्थना करी: “हे स्वामी ! भारी अलागणी पर आपनी  
अेवी डोछ कृपा यध नथी तेथी मने डोछ वरदान भण्युं नथी. पणु आ  
थोरने आप “जवनदान” आपो अेवी भारी प्रार्थना छे-तेने आप  
छोडी भूके. ” राजअे ते थोरने जवनदान देवानी राणीनी प्रार्थनाने  
स्वीकार कर्यो गने ते थोरने राणीने साँपी दीधा. राणी अेने पोताना  
भण्डभां लध गध तेने तेणे सामान्य भोजन करावीने पछी कहुं: “हे  
थोर ! मे' तने जवनदान अपाव्युं छे. हवे तने मृत्युने डोछ लय नथी,  
भारे हवेथी तुं करी थोरी करीश नहि. ”

[सं०] ततोऽमौ दृष्ट्वा तदा मयन्तीभिर्हसितं नारय त्वया किञ्चित्सुखकारि कृतं  
तानां च परम्परं वक्ष्यकारविषये विवादे मंजाने राजा स एव चौरः समाहूय पृष्ठोऽहो  
कदा नम वक्ष्यकारः जनः ? उति ।

[हिन्दी] उस से वह चोर प्रमन हो बग चला गया । इसके बाद उस रानी की  
मरविनयने पांचवी रानी का मजाक उड़ाया । उन्होंने कहा कि तुमने हमारे बराबर  
उस चोर का कोई उपकार नहीं किया । हम से वह चोर ज्यादा उपकृत हुआ है ।

ત્ય તમ મલ્લે લગ્ન ઉત્ત યોગ ય કિલ્લે ઉચ્ચત્ત યિગ્ન ? હન યિગ્ન ય હન  
 યાંત્રી મેં યાદચિત્ત દયા । હમ ય નજાને ઉત્ત યોગ યો હો નિર્મિત્ત કે નિર્મિત્ત દુઃખ ।  
 નજાને યોગ મેં વજા, યજાશો ! હન યાંત્રી નનિયો મેં મેં મલ્લે ઉચ્ચત્ત દુઃખ યો-  
 યાગ યિગ્ને યિગ્ન ?

[ગૃહ] આથી ને યોગ પ્રયત્ન થત્તે યોગ યાદચિત્ત ઉચ્ચ, યોગ યોગ,  
 યાંત્રી નાગીની યાદચિત્તે યાગીને નેની યાદચિત્ત દુઃખ, નેની યાદચિત્ત  
 ને યોગ યિગ્ન યાગીને યોગીને યિગ્ન નથી દુઃખ, યોગ યોગ નેની યોગ  
 યોગીને યિગ્ન દુઃખ છે, આથી યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને  
 યોગ યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને  
 યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને  
 યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને યોગીને

શાસ્ત્રોંં કા સૂત્ર પઠન, યે સત્ર વસ્તુએં અભયદાન કે પુણ્ય કી સોલહવીં કલા કી મી  
ચરાવરી નહીં કર સક્તી હૈ । અર્થાત્ ઇન તપાદિ કાર્યોંં કા ફલ અભયદાન કે  
પુણ્ય કે આગે તુચ્છ હૈ ॥ ૭ ॥

[ગુઁ] “હે યુધિષ્ઠિર ! હજારો કપિલા ગાયોનું બ્રાહ્મણોને દાન કર-  
વાથી જોટલું ઇજા મળતું નથી તેટલું કોઈ એક પ્રાણીને જીવનદાન  
દેવાથી મળે છે. ॥ ૬ ॥ ખૂબ ઇચ્છાનુસાર કરેલું તપ, તીર્થયાત્રા અને  
તીર્થસેવન, વેદ વગેરે શાસ્ત્રોનું અધ્યયન-આ બધી વસ્તુઓ અભયદાનના  
પુણ્યની સોળમી કળાની પણ બરોબરી કરી શકતાં નથી. એટલે કે આ  
બધાં તપોનું પુણ્ય અભયદાનના પુણ્ય આગળ તુચ્છ છે. ॥ ૭ ॥

[સં૦] હેમ-ધેનુ-ધરાદીનાં, દાતારઃ સુલભા મુવિ ।

દુર્લભઃ પુરુષો લોકે, યઃ પ્રાણિષ્વભયપ્રદઃ ॥ ૮ ॥

સપદ્મોષાં સરત્નાં ચ, દદ્યાત્ મેરું ચ કાશ્વનમ્ ।

યસ્ય જીવદયા નાસ્તિ, સર્વમેતન્નિરર્થકમ્ ॥ ૯ ॥

[હિન્દી] હમ સંસાર મેં સુવર્ણ, ગાય ઓર પૃથ્વી કો દાન દેને વાલે લોગ સર-  
લતા સે મિલ સક્તે હૈં, કિન્તુ પ્રાણિયોંં કો અભયદાન દેને વાલા વ્યક્તિ મિલના  
કઠિન હૈ ॥ ૮ ॥

ચાહે કોઈ સાત ટીપ રત્નોંં સે મર કર દાન મેં દે દે, સોને કા મેરુપર્વત દાન મેં  
દે દે કિન્તુ જિસકે ચિત્ત મેં દયા ન હો. ઉમકે યે સત્ર દાન નિરર્થક હૈ ॥ ૯ ॥

વિશેષઃ-માગ્ન મેં મી કહા હૈ । (યહ જાંતિ પર્વ મેં કહા હૈ) કિ મનુષ્ય કો  
ત્યાગ, ભોગ ઓર ઉમકી શોભા કી વૃદ્ધિ ઇત્યાદિ સારે કાર્ય ‘અભયદાન’ સે હી  
મકલ હોતે હૈ ॥

[ગુઁ] આ સંસારમાં સોનું, ગાય અને પૃથ્વીનું દાન કરવાવાળા  
કોડો સરળતાથી મળી શકે છે, પણ પ્રાણીઓને અભયદાન દેનાર વ્યક્તિ  
મળવી કઠણ છે. ॥ ૮ ॥

બસ કોઈ સાત બેટ રત્નોથી ભરીને દાનમાં દઈ દે, સોનાનો મેરુ-  
પર્વત દાનમાં દઈ દે, પણ જેના ચિત્તમાં દયા ન હોય એનાં એ બધાં  
દાન નિરર્થક છે. ( આ! જ્ઞાન્તિપર્વમાં કહ્યું છે. )

મહાબાલ્યનાં યુગ ક્રિષ્ણ છે કે—‘અનુબંધના આગ, બેગ અને કાગળની  
તૃષ્ઠિ વગેરે બધાં કાર્ય’ ‘આબરુદાન’થી જ મહત્ત્વ ધાય છે.

[સૃ] જિંદગી પસંદ કર્યું—અનુબંધના પસંદ કર્યું ।

જિંદગી પસંદ કર્યું, જિંદગી પસંદ કર્યું ૥૧૭૥

જિંદગી પસંદ કર્યું, જિંદગી પસંદ કર્યું ।

જિંદગી પસંદ કર્યું,—અનુબંધના પસંદ કર્યું ૥૧૭૥

[નિર્દેશ] જિંદગી અત્યંત મહત્ત્વ છે, જો તે અત્યંત મહત્ત્વ છે તો જિંદગી અત્યંત મહત્ત્વ છે ।  
જિંદગી જો અત્યંત મહત્ત્વ છે ૥૧૭૥ જો તે અત્યંત મહત્ત્વ છે, જિંદગી અત્યંત મહત્ત્વ  
રમણ છે, જો તે અત્યંત મહત્ત્વ છે । આ જિંદગી અત્યંત મહત્ત્વ રમણ છે ।





महाभारतमां पण्डुं छेडे-‘मनुष्यना त्याग, भोग अने शोभानी  
वृद्धि वगेरे अर्थां कार्य’ ‘अभयदान’ थी न सङ्ग थाय छे.

[सं०] अहिंसा परमो धर्म-स्तथाऽहिंसा परं तपः ।

अहिंसा परमं ज्ञानं, अहिंसा परमं पदम् ॥१०॥

अहिंसा परमं दानं, अहिंसा परमो दमः ।

अहिंसा परमो यज्ञः-स्तथाऽहिंसा परं पदम् ॥११॥

[हिन्दी] अहिंसा उत्कृष्ट धर्म है, अहिंसा उत्कृष्ट तप है, अहिंसा उत्कृष्ट ज्ञान है ।  
अहिंसा ही उत्कृष्ट स्थान है ॥१०॥ अहिंसा उत्कृष्ट दान है, अहिंसा उत्कृष्ट इन्द्रिय  
दमन है, अहिंसा उत्कृष्ट यज्ञ है और अहिंसाही सबसे बड़ा ठिकाना है ॥११॥

[गु०] “अहिंसा श्रेष्ठ धर्म छे, अहिंसा श्रेष्ठ तप छे, अहिंसा  
परम ज्ञान छे. अहिंसा न उत्कृष्ट स्थान छे. ॥ १० ॥

अहिंसा उत्कृष्ट दान छे, अहिंसा उत्कृष्ट इन्द्रियदमन छे, अहिंसा  
उत्कृष्ट यज्ञ छे अने अहिंसा न सौथी मोटुं पद छे. ॥ ११ ॥

[सं०] उदकं नैव पातव्यं, रात्रौ च हे युधिष्ठिर ।

तपस्वीनां विशेषेण, गृहिणां च विवेकनाम् ॥१२॥

अस्तं गते दिवानाथे, आपो रुधिरमुच्यते ।

अन्नं मांससमं प्रोक्तं, मार्कण्डेन महर्षिणा ॥१३॥

[ हिन्दी ] हे युधिष्ठिर ! अहिंसा ब्रतधारी मानवों को श्रावकों को और विवेकी  
पुरुषोंको तथा खामकर तपस्वी मावुओं को रात्रि में जल नहीं पीना चाहिये ॥१२॥  
क्योंकि मार्कण्डेय ऋषिने बताया है कि सूर्य अस्त हो जाने के बाद पानी खून के  
समान माना जाता है, और अन्न मांस के बराबर कहा गया है ॥१३॥

विशेष:-रात्रि को जल ढोलना भी नहीं चाहिये क्योंकि इससे अनेक जीवों  
का नाश होता है । त्यागी पुरुषों को भी अगर जल से काम पड़े तो थोड़े से जलसे  
काम निकाल लेना चाहिये । गृहस्थों को विवेकसे जल ढोलना चाहिये । इमी तरह  
रात्रि भोजन भी वर्जनीय है ।

खासकर पर्युषण पर्वमें रात को भोजन का त्याग करना ही चाहिये । अगर हो सके तो चार महिना चौमासे में रात को नहीं खाना चाहिये, क्योंकि अगर खाने में कीड़ी आजाय तो मानव बुद्धिहीन होवे, जूँ (यूका) खानें में आवे तो जलोदर रोग हो, कोली (करोलिया) खाने में आवे तो रक्तपीतिया कोढ़ रोग हो, माखी खानें में आवे तो वमन (उलटी, कै) हो जाय ।

और भी कहा है कि रात्रि को खाने वाले लोग मरने के बाद प्रायः (वृष्ट) उल्लू, वागुल, चमगादड़, बिलाड़, गर्दभ इत्यादि योनियों को प्राप्त होते हैं । जो लोग इन दिनों में रात्रिभोजन का त्याग करते हैं, उन्हें एक पक्षकी तपस्या का लाभ होता है ।

[ગુ૦] “હે યુધિષ્ઠિર ! અહિંસા વ્રતધારી માણસોએ, શ્રાવકોએ અને વિવેચી પુરુષોએ તથા ખાસ કરીને તપસ્વી સાધુઓએ રાત્રે પાણી નહીં પીવું જોઈએ. ॥ ૧૨ ॥ કારણ કે માકડેય ઋષિએ કહ્યું છે કે સૂર્યાસ્ત પછી પાણી લોહીની બરોબર અને અન્ન માંસની બરોબર ગણવામાં આવે છે. ॥ ૧૩ ॥

“રાત્રે પાણી ઢાળવું પણ ન જોઈએ. કારણ કે તેથી અનેક છવોનો નાશ થાય છે. ત્યાગી પુરુષોને પણ જો પાણીની જરૂર પડે તો થોડામાં થોડા પાણીથી કામ પતાવી લેવું જોઈએ. ગૃહસ્થોએ વિવેકથી પાણી ઢાળવું જોઈએ. એ રીતે રાત્રિ-ભોજન પણ વળ્યું છે.

ખાસ કરીને પર્યુષણ પર્વમાં રાત્રિ-ભોજનનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. બની શકે તો ચોમાસાના ચાર મહિના રાત્રે જમવું ન જોઈએ. કારણ કે જો ખાવામાં થીરી આવી જાય તો માણસ બુદ્ધિહીન થઈ જાય; જૂ આવી જાય તો જળાદરનો રોગ થાય, કરોળિયો ખાવામાં આવે તો રક્તપિતિયા કાઠ રોગ થાય, માખી ખાવામાં આવે તો ઉલટી થઈ જાય.

વર્ગી એમ પણ કહ્યું છે કે રાત્રે ભોજન કરવાવાળા લોકો મર્યા પછી મોટે ભાગે ધ્રુવદ, બગલા, કાનકડિયાં, બિલાડા, ગધેડાં વગેરે ચોનિમાં જન્મ પામે છે. જે માણસો આ દિવસોમાં રાત્રિ-ભોજનનો ત્યાગ કરે છે તેમને એક પાપવાણિયાની તપસ્યાનો લાભ મળે છે.”

[નિં૦] વ્રતઃ મુશ્વાવકેનાત્ર પર્વણિ મનન-પેષણ-ચન્દ્રકાલનાચાગ્મો વિવર્જનીયઃ ।  
 નૈવિર-ગાન્ધાર-સાદ-રુમેરુગદિષ્ વાચા, ધનવ્યવેન ચાગ્મો નિવાર્ણીયઃ, મ્વ-

शक्त्या वन्दिमोक्षश्च कार्यः, ग्राम-नगर-मध्येऽस्मादिषोपणा कारयितव्या येन केनापि प्रकारेण जीवरक्षा कार्या ॥

[हिन्दी] इसलिये सुश्रावक को इस पर्युषण पर्वमें खोदना, पीसना, वस्त्र धोना आदि कार्यों को नहीं करना चाहिये, और घाणी निकलवाना आदि तैल निकालने के कार्य, लोहार के कार्य, माटी कर्म (चूड़ीगर-भटभूंजा के कर्म) इत्यादि कार्यों को वचन से अथवा धन खर्च करके भी वन्द कराने चाहिये। अपनी शक्ति के अनुसार वन्दी मोचन कार्य करना चाहिये, गांव और शहर के मध्यमें अभयदान की घोषणा करानी चाहिये और किसी भी तरह से जीवों की रक्षा करनी चाहिये ॥ इस प्रकार पर्युषण पर्वमें विशेष करके प्रथम आश्रवका त्याग करना चाहिये।

[गु०] अटला भाटे सारा श्रावकोये आ पयुषण पर्वमां 'पोदबु', 'दणबु', वस्त्रो धोवां वगेरे कामो न करवां नेधये. वणी धाणी कढाववी तथा धाणी यलाववी, लुहारनी लहरी यलाववी, लाडलू'जनु' काम वगेरे कार्यो समजवीने अथवा पैसा भरवीने पणु अंध कराववां नेधये. पोतानी शक्ति अनुसार डेहीओने छोडाववानु' काम पणु करबु' नेधये. गाभ अने शहरमां 'अलयदान'नी घोषणा कराववी नेधये अने कोध पणु रीते लवोनु' रक्षणु करवानु' काम करबु' नेधये. आ रीते पयुषण पर्वमां भास करीने पढेला आश्रवको त्याग करवो नेधये.

[मं०] द्वितीयाश्रवपरित्यागे मृपावचनमत्र पर्वणि न वक्तव्यं गालिप्रदानादि-कठिनवाणी न वाच्या सर्वथा वाक्शुद्धिः कार्या।

[हिन्दी] द्वितीय आश्रव त्याग में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये। पर्युषण पर्वके आने पर विशेषतः झूठ न बोलें, गाली नहीं दें, कटोश्रवचन नहीं बोलें, मग्न तरह से वचनशुद्धि करें। झूठी साक्षी नहीं भें, मित्र वचन नहीं कहना।

विशेषः—वसुगजानें थोड़ा ही मिश्रवचन कहा था जिससे वह नरक में गया और अनन्ताभव संसार बढ़ा लिया, जिसकी कथा आत्म प्रबोध-प्रमुख ग्रन्थों में प्रसिद्ध है. इसलिये यहां नहीं लिखी।

झूठ बोलने वाला मृत्यु के उपरान्त नये जन्म में भूक (गंगा) होता है, वह महा दुःख देखना है। कहा भी है :-

[ગુ.] બીજા આશ્રવના ત્યાગમાં નીચેની બાબતોનું ધ્યાન રાખવું જોઈએ.

પર્યુપણ પર્વ આવે ત્યારે ખાસ કરીને જુદું ન બોલે. ગાળ ન દે, કઠોર વચનો ન બોલે, ખોટી સાક્ષી ન દે, અને મિશ્રવચનો ન કહે એમ બધી રીતે વચનશુદ્ધિ કરે.

વસુરાજાએ થોડાંક જ મિશ્ર વચનો કહ્યાં હતાં તેથી તે નરકમાં ગયો અને અનંતાભવ સંસાર વહોરી લીધો જેની કથા આત્મપ્રબોધ વગેરે ગ્રંથોમાં પ્રસિદ્ધ છે તેથી અહીં લખી નથી.

ખોટું બોલવાવાળા મૃત્યુ પછી નવા જન્મમાં મુ'ગા થાય છે અને મહાદુઃખને પામે છે. કહ્યું છે કે—

[સં.] વચનમ્મિ જસસ વચનં, નિચ્ચમસચ્ચં વહ્હ વચ્ચસો ।

સુદ્ધીં જલસણ્હં, કુણમાણં તહ સંતિ વુહા ॥ ૧ ॥

ચિત્તં રાગાદિભિઃ શ્લિષ્ટમલીકવચનૈર્મુલ્લમ્ ।

જીવઘાતાદિભિઃ કોયો, ગંગા તસ્ય પરાડ્મુખી ॥ ૨ ॥

[હિન્દી] जिस मनुष्य के मुख में असत्य वचन रहता है, उसके मुँहसे निरन्तर वर्चरस (विष्टा) बहती है। अतः वचनशुद्धि के लिये सत्य सम्भाषण करना चाहिये यही जल स्नान भी है, ऐसा पंडितजन कहते हैं ॥ १ ॥

अन्यमत के विद्वान् कहते हैं कि जिन् मनुष्य का चित्त राग आदि मोहों से व्याप्त है, और जिसका मुख झूठे वचनों से व्याप्त है व जिसका शरीर जीमों के घातआदि पाप कार्यों से व्याप्त है, उस से गंगा भी पराड्मुख रहती है। अर्थात् ऐसा पानकी अगर गंगा स्नान करके पवित्र होना चाहे तो वह नहीं हो सकता, क्योंकि स्वयं गंगा भी ऐसे प्राणी से मुँह फेर लेती है ॥ २ ॥

અલિયે કેન શ્રાવકોં કો હમ આશ્રવ કા અવશ્ય ત્યાગ કરના ચાહિયે । એસા રંગે તે આત્મા કો અવધિક મુલ્લ હોતા હૈ ।

[ગુ.] “જે મનુષ્યના મુખમાં અસત્ય વચન રહે છે તેના મોઢામાંથી હંમેશાં વર્ચરસ (વિષ્ટા) વહે છે.” વચનશુદ્ધિને માટે હંમેશાં માન્યું નાંખાવવું કરવું જોઈએ માયું જલસ્નાન જ એ છે એમ પશ્ચિત્ત જન કહે છે. ॥ ૧ ॥

અન્ય મતના વિદ્વાનો કહે છે કે જે માણસનું ચિત્ત રાગ વગેરે મોહોથી વ્યાપ્ત છે, જેનું મોહું જુઠા વચનોથી વ્યાપ્ત છે અને જેનું શરીર જીવોના ધાત વગેરે પાપકર્મોથી વ્યાપ્ત છે, તેનાથી ગંગા પણ મોહું ફેરવી જાય છે. અર્થાત્ એવો પાપી જો ગંગાસ્નન કરીને પવિત્ર થવા ઇચ્છે તો પણ તે થઈ શકતો નથી. ખુદ ગંગા પણ એવા પ્રાણી-ઓથી પરાભુષ થઈ જાય છે. ॥ ૨ ॥

આથી જૈન શ્રાવકોએ આ આશ્રવનો અવશ્ય ત્યાગ કરવો જોઈએ. એવું કરવાથી આત્માને ઘણું વધારે સુખ થાય છે.

[સં.] તૃતીયાશ્રવપરિત્યાગે પર-ધન-ગ્રહણં વિવર્જનીયં, દ્રવ્યસ્ય હિ જન્તૂનાં વાહ્ય-પ્રાણ-રૂપત્વાત્તદપહારકસ્ય ચ મરણ-રૂપ-કષ્ટ-હેતુત્વાત્ ।

[હિન્દી] ત્રીમરે આશ્રવ કે પરિત્યાગ મેં દૂસરાં કા ધન લેના આતા હૈ, અતઃ દમરોં કા ધન નહીં ચુરાનાં ચાહિયે “ ઉઝકી વસ્તુએં ઇધર ઉધર નહીં કરનાં ચાહિયે, ઓછે તોલ યા યાપ નહીં રક્ષને ચાહિયે । ગિરવી રક્ષી હુઈ યા ધાપણ ધરોહર રક્ષી હુઈ વસ્તુ નહીં વઢાનાં ચાહિયે, કિસી કે વિશ્વાસઘાત નહીં કરનાં. ઢાળ નહીં ચુરાનાં, કોઈં મીં વસ્તુ ઇધર ઉધર નહીં છિપાનાં, વે પાંચ મોટી ચોરિયોં કા ત્યાગ તો અવશ્ય કરનાં ચાહિયે ” ।

વિશેષ:-માનવોં કા વાહ્યપ્રાણ ધન મેં રહતા હૈ, અતઃ ધન ચુરાને સે ઉમ પ્રાણ કો કષ્ટ પહુંચતા હૈ, અતઃ એક તમ્હ કી હિસા હોતી હૈ । ઇમલિયે ધન કે અપહારક (ચુરાનેવાલે કો) નિયમ સે ફાંમી આદિ મગ્નપ્રદ કષ્ટ દિયે જાતે હૈ, ઉસકા વિશ્વાસ ઉઠ જાતા હૈ ઇમ સવકા કાળ્ગ ચૌર કર્મ હૈ, અતઃ વિવેકી પુરુષોં કો ઇમ ત્રીમરે આશ્રવ કા ત્યાગ કર્મનાં ચાહિયે ॥

[શુ.] ત્રીજા આશ્રવના પરિત્યાગમાં બીજાનું ધન નહીં લેવાનું આવે છે, એટલે કે બીજાનું ધન નહીં ચોરવું જોઈએ, તેમની વસ્તુઓ આડી અવળી નહીં કરવી જોઈએ. ઓછા નોલ અથવા માપ નહીં રાખવા જોઈએ. ગિરવી મુકેલી અથવા ધાપણ મુકેલી ડોઢની વસ્તુ નહીં દબાવવી જોઈએ. ડોઢની સાથે વિશ્વાસઘાત ન કરવો, દાણચોરી ન કરવી, ડોઢપણ વસ્તુ જ્યાં ત્યાં ન છુપાવવી-આ પાંચ મોટી ચોરીઓનો ત્યાગ અવશ્ય કરવો જોઈએ. ”

મનુષ્યોનો બાહ્ય પ્રાણ ધનમાં રહે છે, તેથી ધન ચોરવાથી તેના પ્રાણને કષ્ટ પહોંચે છે અને તેથી એક જાતની હિંસા થાય છે. એટલા માટે ધનના ચોરવાવાળાને નિયમથી ફાંસી વગેરે મરણ નિપજાવે તેવાં કષ્ટો આપવામાં આવે છે. તેની ઉપરનો વિશ્વાસ ઊઠી જાય છે. આ બંધાતું કારણ ચોરકર્મ છે; માટે વિવેચી પુરુષોએ આ ત્રીજા આશ્રવનો સર્વથા ત્યાગ કરવો જોઈએ.

[સં૦] ચતુર્થાશ્રવપરિત્યાગેઽપિ પર્વણિ બ્રહ્મચર્ય પાલનીયં સ્ત્રીસંજ્ઞો વિવર્જ્યં ઇત્યર્થઃ । પરસ્ત્રીસેવનં તુ લોકદ્વયવિરુદ્ધત્વાત્ સુશ્રાવકેણાવશ્યમેવ વર્જ્યમ્ ॥

[હિન્દી] चौथे आश्रव में परस्त्रीसेवन वर्ज्य है, परन्तु पयुषण पर्व के दिनों में परस्त्रीसेवन भी वर्ज्य हैं । इन आठ दिनों में तो पूर्णतः ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना चाहिये । परस्त्रीगमन करनेवाले प्राणी इस लोक में विश्वास (परतीती) खो देते हैं, और उनकी इज्जत आवरु का सत्यानाश हो जाता है, तथा उनके धन का, कुल का एवं शरीर का क्षय हो जाता है, ऐसा सोचकर परस्त्रीगमन को अवश्य छोड़ना चाहिये । उसका दूसराभव भी परस्त्रीगमन से नष्ट हो जाता है । अतः श्रावकों को इन दिनों में शीलपालन में तत्पर रहना चाहिये ।

शील के परिपालन से ही सीता, द्रौपदी, सुलसा, रेवती, चंदनवाला आदि स्त्रियां इस संसारमें शाश्वत प्रसिद्धि को प्राप्त हुई । उनके नाम आजभी चतुर्विध मंत्र ढाग प्रातः काल के प्रतिक्रमण आदि में निरन्तर लिये जाते हैं ।

[ગુ૦] ચોથા આશ્રવમાં પરસ્ત્રીસેવન વર્જ્ય છે, પરંતુ પયુષણ પર્વના દિવસમાં તો સ્વસ્ત્રીસેવન પણ વર્જ્ય છે. આ આઠ દિવસોમાં તો પૂર્ણ-પણે બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પાલન કરવું જોઈએ. પરસ્ત્રીગમન કરવાવાળા લોકો આ લોકમાં વિશ્વાસ જોડાયેલો છે અને અને તેમની ઇજ્જત-આબરૂનો સર્વનાશ થઈ જાય છે. તથા તેમના ધનનો, કુળનો તેમ જ શરીરનો ક્ષય થઈ જાય છે. આવું વિચારીને પરસ્ત્રીગમનને અવશ્ય છોડી દેવું જોઈએ. પરસ્ત્રીગમન કરનારનો બીજો ભવ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે એટલા માટે શ્રાવકોએ આ દિવસોમાં શીલ પાળવામાં તત્પર રહેવું જોઈએ.

શીલના પરિપાલનથી જ સીતા, દ્રૌપદી, સુલસા, રેવતી, ચંદન-વાલા, વગેરે સ્ત્રીઓ આ સંસારમાં કાયમી પ્રસિદ્ધિ મેળવી ચૂકી છે.

ओभनां नाम आज पशु यतुर्विध संध प्रातःकाण्ठा प्रतिष्ठमशु वगेरेभां  
निरंतर ले छे.

[सं०] पञ्चमाश्रवपरित्यागे धन-धान्यादि-परिग्रह-प्रमाणं कार्यम् । परिग्रह-  
तृष्णा अपरिमिता न धार्या इच्छापरिमाणं विधेयमित्यर्थः ।

तथा पुनरस्मिन् पर्वणि कपायरोधः कर्तव्यः । कपायाश्चत्वारः क्रोध-मान-माया-  
लोभाख्यास्तेषां परित्यागो विधेयः ॥

[हिन्दी] पांचवे आश्रव के त्याग में अपरिमित परिग्रह का प्रमाण करना चाहिये ।  
संसार में परिग्रह का थाह नहीं है, अतः बिना प्रमाण निश्चित किये कार्य नहीं  
चल सकता । अप्रमाण हो तो लालच बहुत दौड़ता है । अतः प्रमाण से परिग्रह  
करे, ताकि ज्यादा तृष्णा न दौड़े ।

फिर इस पर्युपण पर्वमें कपायरोध भी करना चाहिये । कपाय चार हैः-क्रोध,  
मान, माया, और लोभ. इनका परित्याग करना चाहिये ॥

[गु०] पांच्यमा आश्रवना त्यागभां, श्रावकेअये परिग्रहतुं प्रमाण  
नक्की करवुं जेधअये. संसारभां परिग्रहने छोडे नथी, भाटे परिग्रह निश्चित  
कर्या बिना आलतुं नथी, प्रमाण नक्की न होय तो अहु लालच थया  
करे छे. भाटे प्रमाणपूर्वक परिग्रह करवो, जेथी तृष्णा वधारे न होडे.

वणी आ पशुपशु पर्वभां कपायरोध पशु करवो जेधअये. कपाय चार  
छे. क्रोध, मान, माया अने लोभ. आ चारनो परित्याग करवो जेधअये.

[मं०] क्रोधोदये हि कलहोत्पत्तिश्चिन्तनप्रीतिनाशश्च, मानोदये विनयनाशश्च ।  
तथा च सध्यानव्रतामपि मुनीनां केवलान् अन्तरायः स्यात्, राजर्षि-ब्राह्मणलियत्,  
एवं मायोदये लोभोदयेऽपि च बहवो दोषा उत्पद्यन्ते, अतश्चत्वारोऽपि कपायाम्नाज्याः ॥  
उक्तं च “क्रोहो पीडं षणासेह, माणो विणयनामगो । माया मित्ताणि नासेह, लोहो  
मव्वविणामगो ॥१॥ तस्माच्छुभ आचारो वेपान्ते शुभाचारान्तैः श्रावकंगश्रव-कपाय-  
रोधः कर्तव्यः इत्युक्तम् ।

[हिन्दी] क्रोध के उदय होने पर प्रीति का नाश हो जाता है । मान (अहंकार)  
करने से विनय का नाश हो जाता है । कष्ट करने से मित्रता नष्ट हो जाती है,  
लोभ करने से मारी समृद्धि नष्ट हो जाती है । अत्यन्त ध्याननिमग्न मुनियों के  
केवलजानादि प्राप्ति में भी ये क्रोधादि अन्तराय कर देते हैं ।



अतः ज्यादातर कलह उठने देना नहीं, अगर हो तो भी उसे उपग्रम कर देना चाहिये । उदाहरण के तौर पर दमसान मुनिको केवलज्ञान प्राप्त होने के समय में क्रोध आने से वह ज्ञान रुक गया । इसी तरह बाहुबलीको मान आजाने से वे १२ द्वादश मास तक काउस्सग में रहे, कपट करने से आपाढाभूति अणगार चारि अष्ट होकर नटवी के यहां रहे, लोम के उदयसे सिंह केसरियामुनि रात्रिभर भ्रमण करते रहे, तथा मम्मण शेठ वगेह दुर्गति को प्राप्त हुए । ऐसा समझकर कपायाश्रव का परिहार करना चाहिये ।

[गु०] क्रोधनो उदय थवाथी प्रीतिनो नाश थाय छे. अहंकार करवाथी विनयनो नाश थाय छे. कपट करवाथी भिन्नतानो नाश थाय छे. लोभ करवाथी भधी समृद्धि नष्ट थछलय छे, अत्यंत ध्याननिमग्न मुनियाना डेवणज्ञान प्राप्तिमां पणु आ क्रोध वगेरे दुर्गुणो आडा आवे छे.

भाटे, मोटे लागे कंकास थवा देवो नही, अने थाय तो पणु तेने शमावी देवो जेधये. दाबला तरीके दमसार मुनिने डेवणज्ञान प्राप्त थवाना समयमां क्रोध आववाथी ते ज्ञान थतुं अटप्टी गथुं. जे न प्रमाणे आहुअलिजने अलिमान आवी नवाथी तेजो १२ मास सुधी काउस्सगमां रखा. कपट करवाथी आपाढाभूति अणुगार चारित्रअष्ट थधने नटडीने घेर रखा; लोभना उदयथी सिंहकेसरिया मुनि रात्रिभर भ्रमण करता रखा तथा मम्मणु शेठ वगेरे दुर्गतिने प्राप्त थया. जेवुं समजने कपायाश्रवना परिहार करवो जेधये.

[मं०] अत्र पुनत्र पर्वणि यत्कर्तव्यं तदेव श्रावकविशेषणद्वारेणाह, कीदृशः श्रावकः सामायिक-जिनपूजा-तपोविधानादिकृत्यपरैः सामायिकं च जिनपूजा च तपश्च सामायिक-जिनपूजा-तपांसि तेषां विधानं करणं तदादीनि तत्प्रभृतीनि यानि कृत्यानि कार्याणि तेषु तत्परैरित्यर्थः । एतावता अत्र पर्वणि सुश्रावकैः सामायिकं कार्यम् । तन्मन्त्रपञ्चदम्.—

ममता गर्वभृतेषु, संयमः शुभभावना ।

अतिगोत्र-पग्न्याग-स्तद्धि सामायिकव्रतम् ॥१॥

दिवसे दिवसे लक्ष्मं, देह सुवर्णास्त खंडियं एगो ।

एगो पुन मामाहयं, करेह न पदुप्पण तस्म ॥ २ ॥

उनसें दक्षिणा में एक २ सुवर्णमुद्रा प्राप्त करें। यह सुन ब्राह्मणने राजा से स्त्री के कथनानुसार याचना की। तत्काल राजाने ठीक ऐसा ही हो, कह कर इस बात का पट्टा (लिखित प्रमाण) कर दिया। बहुत दिनों के बाद ब्राह्मणके मन में लोभ ने घर कर लिया। उसने सोचा कि अगर मैं नित्य बहुत से घरों में भोजन करूं तो ज्यादा सुवर्ण मुद्राएँ प्राप्त होगी। ऐसा विचार कर वह नित्य बीस घरों में भोजन करने लगा।

[गु०] आ जेधने श्रेष्ठिक राजने णडु आश्रयं थयुं. तेणे लगवानने पूछयुं: “आ भाणुस डेणु छे?” लगवाने कहुं के अे अेक देव હતો. પૂર્વ લવમાં એ બ્રાહ્મણ હતો. એકવાર એક રાજા તેની ઉપર પ્રસન્ન થયો અને તેની ઇચ્છામાં આવે તે માગવા કહ્યું. બ્રાહ્મણે કહ્યું કે તે પોતાની પત્નીને પૂછીને પછી માગશે બ્રાહ્મણે ઘેર જઈને પોતાની સ્ત્રીને પૂછ્યું કે આપણા ઉપર રાજા પ્રસન્ન થયા છે અને માગવાનું કહ્યું છે, તો શું માગવું? ત્યારે સ્ત્રીએ કહ્યું કે તમે એમ માગો કે આપણે લોકોને ઘેર રોજ વારાફરતી જમવા જઈએ અને તેમની પાસેથી આપણને રોજ અંકક સોનામહોર દક્ષિણામાં મળે, આ સાંભળી બ્રાહ્મણે સ્ત્રીના કહેવા પ્રમાણે રાજા પાસે માગણી કરી. તરત જ રાજાએ તમારા કહેવા પ્રમાણે જ થશે. એમ કહીને તેને એ અંગેનો પટ્ટો લખી દીધો. ઘણા દિવસો પછી પણ બ્રાહ્મણના મનમાં લોભે ઘર ક્યું. તેણે વિચાર્યું કે જો હું રોજ ઘણા ઘરોમાં ભોજન કરું તો મને ઘણી સોનામહોરો મળે. એમ વિચારીને તે હંમેશાં વીશ ઘરોમાં ભોજન કરવા લાગ્યો.

[हिन्दी] इस तरह नित्य २० स्वर्णमुद्राएं अर्जित करने लगा। ज्यादा खानेसे शरीर में रक्तपित्तिया कुष्ठ रोग हो गया। कुटुम्बियो ने उसें अलग कर दिया। वह कोढ़ी खिसियाना हो कर इस पर विचार करने लगा कि ये सारे कुटुम्बी जन स्वार्थी हैं। ऐसा जान कर एक दिन उसने न्याति को इकट्ठा किया। वह कहने लगा, मैं एक जातिभोजन करना चाहता हूं और प्रत्येक को एक स्वर्णमुद्रा भी देना चाहता हूं। अतः आप सब मिल कर बाजार से सामान ला कर अलग से रसोई बना कर भोजन कर लें मैं हाथ नहीं लगाऊंगा। न्याति के लोगों ने इसे मंजूर किया। जब रसोई तैयार हो गयी तो उस कोढ़ी ने गुप्त रीति से उम में अपने शरीर की पीप मिला दी। इस से रसोई खाने वाले सब कोढ़ी हो गये। यह बात लोगों में प्रगट हो

गया। वह वहां उनसे धर्मान्याय सुन रहा था। उसी समय में एक कुछ रोग से पीड़ित व्यक्ति वहां आया। वह भगवान से कहने लगा कि हे प्रभु! आप मा जाओ। इतना कह कर उसने अपने शरीर से निकलने वाली पीप का लेप भी भगवान के शरीर से लगाया। यह देख श्रेणिक राजा को क्रोध आया। उसने विचार किया कि यह दुष्ट यहां से बाहर निकले तो इसे मैं सजा दूं। राजा के मन के भीतर बात उस कोढ़ीने समझ ली। वह श्रेणीक राजा से बोला "तुम मत मरता" उसने अभयकुमार से कहा, "मरो या जिन्दा रहो" इतना कह कर वह कोढ़ी समवसरण से बाहर निकला। श्रेणिक राजाने अपने सैनिकों को संकेत किया कि वे इसे पकड़ ले। जब सैनिक उसे पकड़ने दौड़े तब वह आकाश में उड़ गया।

[गु०] एक बार राजगृही नगरी में श्रेणिक राजा भगवान श्री महावीरस्वामीने वंदन करवा गया, ते त्यां तेमनी पासेथी धर्मदृशना सांभली रह्या छता, ये वभते एक दुष्ट रोगथी पीडाते माणुस त्यां आये, ते भगवानने कहेवा लाग्यो के "हे प्रभु! तमे मरी जाये," आठलुं कोढ़ीने तेणे पोताना शरीरमांथी नीकणता पाये, तेने देख पण भगवानना शरीरे कथी, आ कोढ़ने श्रेणिक राजाने तेणे विचार कथी के आ दुष्ट कोढ़ी नीकणे करूं, राजाना मननी बात पेले, तेने राजाने कोढ़ के "तमे भरशो" वा २ "भरो के छवता रहे," आठलुं नीकणी गयो, श्रेणिक २ ता सकेत कथी, कोढ़ारे सैनिको ते छोटी गयो.

[हिन्दी] यह देख श्रेणीक राजा "यह कौन पुरुष हैं? भगवानने ब्राह्मण था। एक बार एक गजा ब्राह्मण! मांग, जो तुझे चाहिये वह मैं दूँ याचना करूंगा। ब्राह्मणने घर जा नृपमान दूता हैं सो क्या मांगा जिन सब लोगों के घर में निम्न

उसमें दक्षिणा में एक २ सुवर्णमुद्रा प्राप्त करें। यह सुन ब्राह्मणने राजा से स्त्री के कथनानुसार याचना की। तत्काल राजाने ठीक ऐसा ही हो, कह कर इस बात का पट्टा (लिखित प्रमाण) कर दिया। बहुत दिनों के बाद ब्राह्मण के मन में लोभ ने घर कर लिया। उसने सोचा कि अगर मैं नित्य बहुत से घरों में भोजन करूं तो ज्यादा सुवर्ण मुद्राएँ प्राप्त होगी। ऐसा विचार कर वह नित्य बीस घरों में भोजन करने लगा।

[गु०] आ जेधने त्रेणिक राजने णडु आश्वथं थयुं. तेणे भगवानने पूछथुं: “आ भाणस डोणु छे?” भगवाने कहुं के अे अेक देव छे. पूर्वं भवमां अे आहणु छे. अेकवार अेक राज तेनी उपर प्रसन्न थये अने तेनी धच्छाभां आवे ते भागवा कहुं. आहणु कहुं के ते पोतानी पत्नीने पूछीने पछी भागशे आहणु घेर जधने पोतानी स्त्रीने पूछथुं के आपणा उपर राज प्रसन्न थया छे अने भागवानुं कहुं छे, तो शुं भागवुं? तयारे स्त्रीअे कहुं के तमे अेम भागे के आपणु लोकेने घेर रोज वाराइरती जभवा जधअे अने तेमनी पासेथी आपणुने रोज अेके सोनाभडोर दक्षिणाभां भणे. आ सांभणी आहणु स्त्रीना कहेवा प्रमाणे राज पासे भागणी करी. तरत ज राजअे तमारा कहेवा प्रमाणे ज थशे. अेम कहीने तेने अे अंगेने पट्टे लप्पी दीधे. धणा दिवसे पछी पणु आहणुना मनमां लोभे घर कथुं. तेणे विचारथुं के जे डुं रोज धणा धरेमां भोजन करूं तो भने धणी सोनाभडोरे भणे. अेम विचारीने ते डंभेशां वीश धरेमां भोजन करवा लाज्ये.

[हिन्दी] इस तरह नित्य २० स्वर्णमुद्राएं अर्जित करने लगा। ज्यादा खानेसे शरीर में रक्तपित्तिया कुष्ठ रोग हो गया। कुटुम्बियो ने उसे अलग कर दिया। वह कोढ़ी खिसियाना हो कर इस पर विचार करने लगा कि ये सारे कुटुम्बी जन स्वार्थी हैं। ऐसा जान कर एक दिन उसने न्याति को इकट्ठा किया। वह कहने लगा, मैं एक जातिभोजन करना चाहता हूं और प्रत्येक को एक स्वर्णमुद्रा भी देना चाहता हूं। अतः आप सब मिल कर बाजार से मामान ला कर अलग से रमोई बना कर भोजन कर लें मैं हाथ नहीं लगाऊंगा। न्याति के लोगों ने इसे मंजूर किया। जब रमोई तैयार हो गयी तो उस कोढ़ी ने गुप्त रीति से उस में अपने शरीर की पीप मिला दी। इस से रमोई खाने वाले सब कोढ़ी हो गये। यह बात लोगों में प्रगट हो

गयीं । अब वह कोठी निन्दित हो कर तीर्थ यात्रा को चला गया । मार्ग के पर्वत में द्रव आया उस में वह मरने हेतु गिरा ।

[गु०] आ प्रभाणे ते रोज वीश सोनाभटोरि कुभावो लाज्यो. वधारे भावाथी तेना शरीरमां रक्तपित्तियो डोढ थयो. सगां संभंधी-ओओ तेने जुढो डाढयो. ते डोढियो असियाणो पडी जठने विचारवा लाज्यो डे आ सगांसंभंधीओ रवार्थी छे. तेथी तेणे ओक दिवस आभी शातिने ओकरी करी अने तेने डोढवा लाज्यो डे “हुं” ओक शातिभोजन करवा आहुं” हुं” अने प्रत्येक शातिजनने ओकेक सोनाभटोर दानमां आपवा छिछुं” हुं. मोटे आप सौं भजरमांथी सामान लावी जुढी रसोछ भनावो अने जभी द्यो. हुं रसोछने छाय पणु लगाडीश नछि”

शातिना भाणुसोओ तेनी वात भंजूर राणी. ज्यारे रसोछ तैयार थछ गछ त्यारे ते डोढियाओ छानी रीते पोतानुं पड़ तेमां भेजवी दीधुं; आथी जभवावाणा भधा डोढिया थछ गया. आ वात प्रगट थछ गछ. छवे ते डोढियो निश्चित थछने जत्रा करवा आदयो गयो. रस्तामां ओक पर्वतनी तणोटीमां सरावर आव्युं तेमां ते भरवानी छिछाथी पड्यो.

[हिन्दी] सौभाग्यसे पानी का स्पर्श होते ही उसका कुष्ठ रोग चला गया । शरीर स्वच्छ निर्मल बन गया । अनन्तर साधु महागज की मंगति से समकित की प्राप्त हुआ । कालधर्मानुसार देवलोक में देव बना । वही यह देवता पूर्व भव के रूप से मुझे वन्दन करने आया व मेरे शरीर से चन्दन लगाया । हे श्रेणीक ! तुम्हें वह पीप नजर आट और मुझे मर्ने का कहा, उसका तात्पर्य यह है कि “अप आप मोक्ष पथागे यहां कुछ नहीं है ।” फिर तुम्हें जीवित रहने का कहा, इस का तात्पर्य यह है कि परलोक में तुम्हें सुख नहीं है अतः तुम मृत्युलोक में ही रहो । अमयवृत्त को यहां तथा वहां ( परलोक ) दोनों में सुख है, इससे उन्हें “जियो अथना मगे” ऐसा कहा ।

भगवान की यह बात सुनकर श्रेणीक बोला “हे भगवान ! मुझे परलोक में क्या दाय है ?” भगवान बोले कि तू मर के नरक में जायगा वहां, “चौगनी दज्ज वपे तरु दाय देवेमा ।

[गु०] नन्भाज्य पाणीना स्पर्श थतां ज तेना डोढ आदयो गयो.

શરીર સ્વચ્છ અને નિર્મળ થઈ ગયું. પછી સાધુ મહારાજેની સંગતિથી તેને સમક્ષિત પ્રાપ્ત થયું અને દેવ બની ગયો. એ આ દેવ પૂર્વભવના રૂપે મને વંદન કરવા આવ્યો અને મારે શરીરે તેણે ચંદન લગાવ્યું. હે શ્રેણિક ! તને તે ચંદન પણ લાગ્યું. તેણે મને મરવાનું કહ્યું તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ‘હવે આપ મોક્ષે જાઓ, અહીં હવે કાંઈ નથી’ એમ તે કહેવા માગતો હતો. વળી તમને જીવતા રહેવાનું કહ્યું તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પરલોકમાં તમને સુખ નથી માટે તમે મૃત્યુલોકમાં જ રહો. અભયકુમારને અહીં તથા પરલોકમાં બન્નેમાં સુખ છે તેથી તેને “જીવો અથવા મરો” એમ કહ્યું.

ભગવાનની આ વાત સાંભળીને શ્રેણિકે કહ્યું: ‘હે ભગવાન ! મને પરલોકમાં શું દુઃખ છે ?’ ભગવાને કહ્યું: ‘તું મરીને નકમાં જઈશ અને ચોરાશી હજાર વર્ષ સુધી દુઃખ દેખીશ.’”

[હિન્દી] यह बात सुनते ही श्रेणीक राजा विलाप करता हुआ बोला, कि आपके चरण सेते हुए भी मुझे नरक होगा ? अब तो कोई उपाय बताइये, जिससे नरक में न जाऊं। भगवानने कहा कि “तप कर !” राजा बोला “मेरी शक्ति नहीं है तो कपिला दासी से दान दीला, प्रभुने कहा, यह सुन राजाने दासी को दान देने कहा। दासी बोली, मैं नियम नहीं तोड़ सकती। इस पर राजाने क्रोधित हो दासी के हाथ से चाटु बांध दिया। इस पर दासी कहने लगी कि मैं दान नहीं देती हूं यह दान राजा का चाटु देना है। यह बात भी राजा से नहीं बनी। तब राजाने दूसरा उपाय पूछा। भगवानने बताया कि कालकश्रिया कसाई को मैंसे मारने से तू रोक दे तो नरक में नहीं जावेगा। राजाने कालकश्रिया कसाई को जीवहत्या से मना किया, पर वह माना नहीं। तब राजाने उसे एक खड्गे में डाल दिया। वह कसाई मिट्टी के मैंसे घनाकर मारने लगा।

[ગુઞ] આ વાત સાંભળતાં જ શ્રેણિક રાજા વિલાપ કરતો બોલ્યો: “આપના ચરણ સેવવા છતાં મને નરક મળશે ? તો પછી એવા કેા ઉપાય બતાવો જેથી મને નરક ન મળે.” ભગવાને કહ્યું: “તપ કર.” રાજાએ કહ્યું: “મારી શક્તિ નથી.” ભગવાને કહ્યું “તો કપિલા દાસી પાસે દાન અપાવ.” આ સાંભળી રાજાએ દાસીને દાન દેવાનું કહ્યું: દાસીએ

કહ્યું: 'હું' મારો નિયમ નહીં તોડી શકું." આથી રાજાએ ક્રોધિત થઈને દાસીના હાથ સાથે દાન દેવાનો આટવો બાંધી દીધો. આથી દાસી કહેવા લાગી કે "હું" દાન દેતી નથી, પણ દાન રાજાનો આટવો દે છે." આ વાત પણ રાજાથી બની નહીં તેથી રાજાએ બીજા ઉપાય પૂછ્યો. ભગવાને કહ્યું કે "કાલકસૂરિયા કસાધને ભેંસો મારતાં તું રોટ્ટી શકે તો તું નરકમાં નહિ જા." રાજાએ કાલકસૂરિયા કસાધને જીવહત્યા કરવાની મનાઈ કરી, પણ તે માન્યો નહિ. ત્યારે રાજાએ તેને એક ઊંડા ખાડામાં નખાવ્યો. તો તે કસાધ ત્યાં પણ ગારાની ભેંસો બનાવીને તેને મારવા લાગ્યો.

[હિન્દી] તब राजाने उसे कुछ में लटका दिया। इस पर वह अपने शरीर का मेल उतार कर मैंसे बना कर मारने लगा। इतना दण्ड देने पर भी वह कसई माना नहीं। अब राजाने भगवान से तीसरा उपाय पूछा। इम भगवानने कहा कि पुण्याश्रावक की सामायक जो ले लेवे तो नरक में नहीं जावेगा। गजा पुण्याश्रावक के पास गया और बोला, "जो तुम्हारे धन लेना हो सो मुझ से ले लें, और मुझ एक सामायक दे दें।" तब पुण्याश्रावकने कहा कि जिस एक सामायक के फल का भगवान् आदेश देंगे वही मैं दूंगा। दोनों तब भगवान के पास जाकर फल पृछने लगे, भगवानने उत्तर दिया, "कोई एक लाख खंडी एक वर्ष तक निगन्तर दान में देवे, तो वह भी एक सामायक के फल के तुल्य नहीं होता है।"

[ગુજ] ત્યારે રાજાએ તેને ઢૂવામાં લટકાવ્યો. તો તે ત્યાં પણ પોતાના શરીરનો મેલ ઉખાડીને તેની ભેંસો બનાવીને તેને મારવા લાગ્યો. આટવો દાંડ દેવા છતાં પણ તે કસાધ માન્યો નહીં, ત્યારે રાજાએ ભગવાનને ત્રીજો ઉપાય પૂછ્યો. ત્યારે ભગવાને કહ્યું કે પુણ્યાશ્રાવકની એક સામાયિકનું ફળ તું લઈ લે તો તું નરકમાં નહિ જાય. રાજા પુણ્યાશ્રાવકની પાસે ગયો અને બોલ્યો: "તારે જેટલું ધન મારી પાસેથી લેવું હોય તેટલું લે, પણ મને તારી એક સામાયિકનું ફળ આપ." ત્યારે પુણ્યાશ્રાવકે કહ્યું કે "જે એક સામાયિકના ફળ મારે ભગવાન આજ્ઞા દેશે તે હું નમને આપીશ." બંને પછી ભગવાનની પાસે ગયા અને પૂછવા લાગ્યા, ત્યારે ભગવાને જવાબ આપ્યો: "કોઈ પુરુષ એક સામાયિક ખાંડી માનું એક વર્ષ સુધી રોજ દાનમાં આપે તો પણ તે એક સામાયિકના ફળની બરાબર થતું નથી."

[હિન્દી] यह सुन राजा बोला कि महाराज ! इतना धन तो मेरे घर में भी नहीं है, फिर सामायिक कैसे आवे ? इतना कह कर वह विलाप करने लगा । तब भगवानने कहा “अरे ! तू क्यों विलाप करता है, आने वाली चौबीसी में तुम भी मेरे जैसे ही तीर्थंकर बनोगे ।” यह बात सुनकर राजा हर्षित हुआ ।

अतः हे भव्यो ! सामायिक का इतना फल जानकर पर्युषणा पर्व में विशेष करके सामायिक करना चाहिये ॥

[ગુઁ] આ સાંભળી રાજ બોલ્યો કે ‘મહારાજ ! આટલું ધન તો મારા ઘરમાં પણ નથી, તો પછી સામાયિકનું ફળ કેમ આવે ? એમ કહીને તે વિલાપ કરવા લાગ્યો ત્યારે ભગવાને કહ્યું કે ‘તું શા માટે વિલાપ કરે છે ? હવે પછી આવવાવાળી ચોવીસીમાં તું પણ મારા જેવો જ તીર્થંકર થઈશ.’ આ વાત સાંભળીને રાજ આનંદ પામ્યો.

માટે હે ભવ્ય લોકો ! સામાયિકનું આવું ફળ જાણીને વિશેષ કરીને પર્યુષણ પર્વમાં સામાયિક કરવી જોઈએ.

[સં૦] આદિપદાત્વૌપધઃ કાર્યઃ પૌષ્ઠફલમિદમ્ :—

“પોસહિ ય સુહે માવે, અસુહાઈં સ્વેદં નતિ સંદેહો ।

છિદર્દં નિરય-તિરિયગ્ઘ, પોસહ-વિહિ-અપ્પમત્તેણ ॥”

[હિન્દી] और पौषधव्रत भी करना चाहिये पौषध का फल निम्न है:—जो धर्म को पुष्ट करे उसका नाम पौसह है । इस व्रत करने से मनुष्य नरक तिर्यच की गति में नहीं जावे, दुःख भी प्राप्त नहीं करे । - वह महापुण्य उपार्जन ( इकट्ठा ) करता है ॥

[ગુઁ] વળી પૌષધવ્રત પણ કરવું જોઈએ.

પૌષધવ્રતનું ફળ નીચે મુજબ છે :—

જે વ્રત ધર્મને પુષ્ટ કરે તે વ્રતનું નામ પૌષધવ્રત છે. આ વ્રતને કરવાથી મનુષ્ય નરકમાં અથવા તિર્થંચની ગતિમાં જતો નથી. દુઃખ પણ પ્રાપ્ત કરતો નથી અને મહાપુણ્ય ઉપાર્જન કરે છે.”

[સં૦] तत्करणसामर्थ्याज्भावेऽस्मिन् पर्वणि शुश्रावर्कयथाशक्ति जिज्ञानां द्रव्यपूजा भावपूजा च कर्तव्या ॥ पूजाफलमदम् :—



“सयं पमज्जणे पुनं, सहस्सं च विलेपणे ।

सयसहस्सिया माला, अणंतं गीय-वाङ्म ॥ १ ॥

मनोवाकायशुद्ध्यात्र पर्वणि पूजा स्नात्रादिकं विधेयं तदवसरे च भगवतः  
छन्नस्थत्व-केवलित्व-सिद्धत्वरूप-मवस्थात्रयं भावनीयम् ।

[हिन्दी] पर्युषण महापर्व में जिन भगवान की पूजा करना चाहिये । इससे मानवों के रोग, शोक, आपत्तियां, दौर्भाग्य आदि दोष नष्ट हो जाते हैं । यह पूजा स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) सुख को देने वाली है । पूजा करने से कई प्राणियों को केवलज्ञान हो गया है । कहा भी है कि-भगवान से मोरपिच्छ से पूजने से (१००) शत गुणित पुण्य होता और उन पर विलेपन करने से हजार गुणित पुण्य होता है । तथा पुष्पमाला पहिनाने से लाख गुणित, और गीत नाटक आदि भक्ति करने से अनन्तगुणा पुण्य होता है ।

[गु०] पर्युषण महापर्वमां जिन भगवाननी पूजा करवी जेधये. आनाथी लोकेना रोग, शोक, आपत्तियो, दुर्भाग्य वगेरे दोषोनो नाश थाय छे. आ पूजा स्वर्ग अने मोक्षना सुअने आपवावाणी छे. आ पूजा करवाथी केटलाये प्राणीओने केवलज्ञान थध गयुं छे. वणी ओम पणु कहुं छे के भगवाननुं मोरपीछथी पूजन करवाथी सो गणुं पुण्य भणे छे अने तेमनी प्रतिभा उपर अंघननुं विलेपन करवाथी हजरगणुं पुण्य भणे छे. वणी भगवानने पुष्पभाजा पहिराववाथी लाखगणुं अने गीत नाटक वगेरेथी भक्ति करवाथी तो अनंतगणुं पुण्य भणे छे.

[हिन्दी] भगवान की प्रतिमा को स्नान कराते वक्त और उनकी पूजा करते वक्त ‘छन्नस्थानस्था’ का ध्यान करना चाहिये और वस्त्र चढ़ाते समय प्रातिहार्यपुक्त “केवली अवस्था” तथा काउस्मग्ग और पद्मासन के समय भगवान् की “सिद्धावस्था” का ध्यान करना चाहिये । इस तरह भगवान की द्रव्यपूजा करना चाहिये यदि ऐसा न बन पड़े तो प्रभात समय जिनमंदिर में जा कर शुद्ध भावसे भगवान के दर्शन करना चाहिये । भगवान की मुद्रा देखकर चैत्यवन्दन-स्तुति-स्तवनादि करना. क्यों कि दर्शन करने से पापों का नाश होता है, नमस्कार करने से मनो-वामना मिट्ट जाती है, विधि से पूजन करने से तो मानवों और स्त्रियों के लिए नमस्कार माक्षान् कल्पवृक्ष के समान फल देने हैं । इस तरह पूजन करना चाहिये ।

“ ण्ववणच्चगेहि छउमत्थ,—वत्थ पडिहारगेहि केवलियं ।  
पलियंकुस्सगेहि य, जिणस्स भाविज्ज सिद्धत्तं ॥ ”

[गु०] भगवान्नी प्रतिमाने स्नान करावती वभते तथा तेभनी पूज करती वभते भगवान्नी “ छद्मस्थावस्था ” नुं ध्यान करवुं लेधये. अने वस्त्र अडावती वभते प्रतिहारयुक्त ‘ केवणी अवस्था ’ नुं, तथा काउ-सग्ग अने पद्मासन वभते भगवान्नी “ सिद्धावस्था ” नुं ध्यान करवुं लेधये. आ प्रमाणे द्वायेथी भगवान्नी पूज करवी लेधये. ले आ प्रमाणे न भनी शके तो वहेली सवारे जिनमंदिमं जधने शुद्ध लावथी भगवान्नुं दर्शन करवुं लेधये. भगवान्नां दर्शन करीने चैत्यवन्दन, स्तुति, स्तवन वगेरे षोडशां. कारणु के दर्शन करवाथी पापोना नाश थाय छे, नभस्कार करवाथी मनोदामनानी सिद्धि थाय छे अने विधिपूर्वक पूजन करवाथी तो स्त्रीओ अने पुरुषोने भगवान् साक्षात् कल्पवृक्षनी समान इण आपे छे.

[सं०] द्रव्यपूजासामर्थ्याभावे तु भावपूजैव कर्तव्या सा चेत्थं—प्रातः श्री जिन-गृहं गत्वा शुद्धभावेन भगवद्दर्शनं कार्यं भगवन्मुद्रां विलोक्य च तद्गुणगणस्मरणं विधेयं तत्फलं यथा—

“ दर्शनाद्दुस्तिध्वंसी वन्दनाद्वाञ्छितप्रदः ।  
पूजनात्पुरुषः श्रीणां जिनः माक्षात्सुगन्धुमः ॥ ”

पुनः श्री-जिन-दर्शनादेव बहूनां भव्यानां बोधिवीजावामिर्भवत्याद्रकुमारवत्त-द्वृत्तान्तस्तु इत्यम् । अस्मिन् भगवत्क्षेत्रे समुद्रतीरे आर्द्रको नाम यवनदेशोस्ति । तत्रा-र्द्रकपुरं नाम नगरम् । तत्रार्द्रकनामा राजा बभूव । तस्य चार्द्रिका नाम्नी पटराज्ञी तयोर्गर्द्रकुमारो नाम पुत्रोऽभूत् ।

[हिन्दी] फिर श्री जिनदर्शन से ही बहुत से भव्य लोगों का बोध की प्राप्ति आर्द्रकुमारकी तरह हुई तथा बहुत से जीव मोक्ष को भी प्राप्त हुए । आर्द्र-कुमार कैसे मुसी हुए इनकी कथा इस प्रकार हैं ।

मगध देशमें बहुत सुन्दर राजगृही नगरी हैं । उसमें अशोक राजा राज्य करता था । उसके चारों बुद्धियो में प्रवीण अमयकुमार नामका पुत्र था । यह पांचनों प्रधानों के ऊपर स्वामी था । जितने भी राजे रजवाटे थे वे सब अमय-

कुमार को पूछ के काम करते हैं। उरी भरतक्षेत्रमें समुद्र के तट के पास एक “आर्द्रक-नाम” का अनार्य देश था। उसमें “आर्द्रकनाम” का एक शहर था। उसके राजा का नाम ‘आर्द्रक’ था। यह राजा स्लेच्छ था। इसकी पटरानी का नाम आर्द्रिका था। उनके ‘आर्द्रकुमार’ नामका एक पुत्र हुआ।

[गु०] वणी श्री जिनदर्शनथी ज वणा लब्ध होकरने षोधिणीजनी प्राप्ति आर्द्रकुमारनी जेम थछ छे, तथा वणा ज्वेने मोक्षनी प्राप्ति थछ छे. आर्द्रकुमार डेवी रीने सुणी थया तेनी वात नीये प्रभाणु छे.

भगवद् देशमां राजगृही नामे ऐक शुभ सुंदर नगर હતું. તેમાં શ્રેણિક રાજ રાજ્ય કરતા હતા. તેને ચારે બુદ્ધિઓમાં પ્રવીણ અભયકુમાર નામે પુત્ર હતો. તે પાંચસો પ્રધાનોનો ઉપરી હતો. બીજા બધા રાજરજવાડા અભયકુમારની સલાહ લઈને રાજ્ય કરતા હતા. ભરતક્ષેત્રમાં સમુદ્રના કિનારાની પાસે એક આર્દ્રક નામે અનાય દેશ હતો. તેમાં આર્દ્રક નામનું એક શહેર હતું. તેના રાજાનું નામ આર્દ્રક હતું. તે રાજા સ્લેચ્છ હતો. તેની પટરાણીનું નામ આર્દ્રિકા હતું. તેને આર્દ્રકકુમાર નામે એક પુત્ર થયો.

[सं०] स च क्रमेण सम्प्राप्तयौवनः स्वेच्छया मनोजान् भोगान् भुञ्जानः सुखेन तिष्ठति स्म । तस्य चार्द्रकराजस्य श्रेणिकराजेन सह परम्परागता परमप्रीतिरभूत् । एकदा श्रेणिको नृपः प्रचुरं प्राभूतं प्रगुणीकृत्य आर्द्रकराजसमीपं निजामात्यं प्रैषीत्, सोऽमात्योऽपि कियद्भिर्दिनैस्तत्र गत आर्द्रकनृपेण बह्वादरेण सम्भाष्य तेन मंत्रिणा उपनीतानि प्राभूतानि गृहीतानि पृष्ट्वा तस्मै मद्बन्धोः श्रेणिकस्य कुशलं वर्तते ततस्तेनापि तत्रत्य—सकल—कुशलोदन्तनिवेदनेन राज्ञो मनसि परमानन्दः सम्पादितः ॥

[हिन्दी] यह पुत्र अनुक्रम से पालन पोषण से संवर्धित जवानी को प्राप्त होकर अनेक प्रकारके सुखों का उपभोग करता हुआ सुख से रहता था। उस आर्द्रक राजाकी श्रेणिक राजा के साथ परम्परागत परम प्रीति थी। एक बार श्रेणिक राजानें स्व उपजाग देकर अपने मुख्य अमात्यको आर्द्रक राजा के पास भेजा। वह अमात्य वहां पहुंचा। स्लेच्छ राजा आर्द्रकने उसका मूय आदर सत्कार किया। उसने भी सारे उपजाग राजा को भेंट किये। तब आर्द्रकने श्रेणिक राजा के कुशल समाचार पूछे। प्रधानने भी माग कुशल वृत्तान्त कहकर राजा श्रेणिक के समाचार उसे सुनाये, जिसमें वह आर्द्रक राजा बहुत आनन्दित हुआ।

[गु०] ते पुत्र कृमे कृमे पालनपोषण्णथी वधतो वधतो लुवान थयो अने अनेक प्रकारना भोगो भोगवतो सुण्णथी रहेतो हतो. ते आर्द्ध राजन्नी श्रेणिङ्क राजन्नी साथे वशपरंपराथी मैत्री हती. ओकवार श्रेणिङ्क राजन्ने भूभ भेटो लधने पोताना मुण्य प्रधानने आर्द्ध राजन्नी पासे भोक्कथो. प्रधान त्यां पळेण्णथो त्यारे भेक्कथ राज आर्द्ध तेनो भूभ आदर-सत्कार कथो. प्रधाने भधी भेट-सोगाहो राजन्ने अर्पण्ण करी. पछी आर्द्ध राजन्ने श्रेणिङ्क राजन्ना कुशण सभायार पूछया. प्रधाने भधी कुशण सभायार तथा राज श्रेणिङ्कना सभायार पण्ण तेने क्कथा, जे सांभणीने आर्द्ध राज धणो आनंद पाभ्यो.

[मं०] तस्मिन्नवसरे आर्द्धकुमारो नृपं पप्रच्छ, भो तात ! कः श्रेणिको येन सह तवेदशी प्रीतिः प्रवर्तते । राजा प्रोवाच-मगधदेशस्वामी श्रेणिकनृपो विद्यते तत्कुलस्य मत्कुलस्य च परम्परयागता प्रीतिरिति एतत्पितृवचः श्रुत्वा चार्द्धकुमारोऽपि मंत्रिणमुवाच, भो मंत्रिन् ! त्वत्स्वामिनः कश्चित्सम्पूर्णगुणोपेतः पुत्रोऽस्ति ? तेन सह अहमपि मैत्र्यं कर्तुमिच्छामि । मन्त्र्युवाच, “श्रेणिकस्य अभयकुमारो नाम पुत्रोऽस्ति, न च सर्वकलानिधिः सर्ववृद्धिममुद्रो मंत्रिपञ्चगताधिपो महादयावान् महादाता अतिदक्षो निर्भयो धर्मज्ञः कृतज्ञश्च विद्यते । किं बहुना ते केऽपि जगति गुणा न सन्ति येऽभयकुमारे निवासं न कृतवन्तः ॥

[हिन्दी] उम अवसर पर आर्द्धकुमारने अपने पिता से पूछा “हे तात ! यह श्रेणिक राजा कौन है ? जिसके साथ आपकी ऐसी प्रीति है ” । राजा बोला, “मगध देशका स्वामी श्रेणिक राजा है । उसके कुल की ओर मेरे कुल की परम्परा से प्रीति चली आ रही है ” । पिता के ये वचन सुनकर आर्द्धकुमारने भी मंत्री ने कहा, “हे अमात्य ! क्या तुम्हारे स्वामी के भी कोई सम्पूर्ण गुणों से युक्त पुत्र है ? उसके साथ मैं भी मित्रता करना चाहता हूँ । मंत्री ने कहा “श्रेणिक राजा के अभयकुमार नामका पुत्र है । वह सब कलाओं की ग्वान है, सब वृद्धियों का समुद्र है, पांचमों प्रधानों के ऊपर स्वामी है, महादयावान् है, महादाता है, निर्भय है, धर्मज्ञ है, कृतज्ञ है, और ज्यादा क्या कहें, मंगारमें जितने भी गुण हैं, वे सब अभयकुमार में निवास करने हैं ।

[गु०] ओ वण्णने आर्द्धकुमारो पोताना पिताने प्छय्थुः “हे पिताशु !

આ શ્રેણિક રાજ કોણ છે, કે જેની સાથે આપની મિત્રતા છે ? ” રાજ્યે કહ્યું : “ શ્રેણિક રાજ મગધદેશના રવામી છે. તેના કુટુંબની સાથે આપણી વંશપરંપરાથી મૈત્રી ચાલી આવે છે. ” પિતાનાં આ વચનો સાંભળીને આઠ્ઠકુમારે મંત્રીને પૂછ્યું : ‘ હે અમાત્ય ! શું તમારા રાજને કોઈ સંપૂર્ણ ગુણોથી યુક્ત પુત્ર છે ? હું પણ તેની સાથે મૈત્રી કરવા ઇચ્છું છું. ’ મંત્રીએ કહ્યું : ‘ શ્રેણિક રાજને અભયકુમાર નામના પુત્ર છે. તે બધી કળાઓના જાણકાર છે, બુદ્ધિઓનો જાણે કે સમુદ્ર છે. પાંચસો પ્રધાનોનો તે ઉપરી છે. મહા દયાવાન છે, મહાદાતા છે, અત્યંત દક્ષ છે, નિર્ભય છે, ધર્મજ્ઞ છે, કૃતજ્ઞ છે. વધુ તો શું કહું, સંસારમાં જેટલા ગુણો કહેવાય છે તે બધા અમારા અભયકુમારમાં છે. ”

[સં૦] इत्थं मंत्रिवचनादभयकुमारगुणान् श्रुत्वा आर्द्रकुमारः पितुराज्ञां समादाय मंत्रिणं प्रत्युवाच, मामनापृच्छ्य त्वं स्वदेशं मा यासीः । तत्र गच्छता त्वयाभयं प्रति स्नेहद्रुमवीजतुल्यं मद्बचः श्रोतव्यमिति । ततो गन्वपि तद्वचनमङ्गीकृत्य राज्ञा विसृष्टः सन् वेत्रिणा दक्षितं निवासस्थानं ययौ । अथान्यदार्द्रकनृपः प्रवरमौक्तिकादीनि प्राभृतान्यर्पयित्वा तथा स्वपुरुषं तं मन्त्रिणञ्च श्रेणिकुपार्थं प्रपीत् ।

[हिन्दी] इस प्रकार अमात्य के वचन सुनकर आर्द्रकुमारने पिता से आज्ञा लेकर मंत्री को प्रत्युत्तर दिया, हे अमात्य ! तुम मुझसे बिना पूछे अपने देश मत जाना । वहां जब आप जाओ तब महाराजकुमार अभयकुमार के प्रति मेरे प्रेम के बीज रूप वचनों को सुनकर जाना । तब उस मंत्रीने भी उनके वचनों को स्वीकार करके ऐसा ही करंगा. ऐसा कहा, फिर राजा आर्द्रक के नौकरों द्वारा प्रदर्शित अपने निवासस्थान में चला गया । अब कुछ दिनों के बाद आर्द्रक राजाने मोतियों आदि में युक्त उपहार सामग्री को देकर उसके साथ अपने पुरुषों को स्वार्थ देकर श्रेणिक राजा के पास भेजा । तब आर्द्रकुमारने भी अभयकुमार के लिये उपहार सामग्री प्रगल्भ, मौक्तिक आदि अनुपम वस्तुएं भेजी ।

[ગુ૦] આ પ્રમાણે અમાત્યનાં વચનો સાંભળીને આઠ્ઠકુમારે પિતાની આજ્ઞા લઈને મંત્રીને જવાબ આપ્યો કે ‘ હે મંત્રીજી, તમે મને મળ્યા વગર તમારા દેશમાં જશે નહિ. તમે જ્યારે જાઓ ત્યારે મહારાજકુમાર તરફનો મારા પ્રેમનો સંદેશ સાંભળીને જશે. ’ મંત્રીએ તેનાં વચનો

માન્ય રાખી 'એમ જ કરીશ' એમ કહ્યું અને પછી રાજના નોકરોએ ખતાવેલા પોતાના નિવાસસ્થાનમાં ચાલ્યો ગયો.

થોડા દિવસો પછી આર્દ્ર રાજાએ સાચાં મોતી સાથેની ભેટની સામગ્રી શ્રેણિક રાજા માટે તે મંત્રીને આપી, અને તેની સાથે પોતાનાં માણસો તેનું રક્ષણ કરવા માટે મોકલ્યાં. આર્દ્રકુમારે પણ અભયકુમારને માટે ભેટ રૂપે પ્રવાલ, મોતી વગેરે અનુપમ વસ્તુઓ મંત્રી સાથે મોકલી.

[સં૦] અથ સ પુમાન્ મંત્રિણા સાર્દ્ધ રાજગૃહપુરં ગત્વા શ્રેણિકાય અમયાય ચ પ્રામૃતાન્યર્પયમામ । તથા નૃપપુત્ર આર્દ્રકુમારસ્ત્વયા સહ મૈત્ર્યં કર્તુમિચ્છતિ इत्यम-  
યાય મંત્રી સંદેશમુવાચ । તદા જિનશાસને કુશલોઽમયઃ સ્વચેતસિ इत्यचिन्तयत्, નિશ્ચિતં  
સ કુમારો વિરાધિનશ્રામણ્યત્વાદનાયેષુ જાતોઽસ્તિ । પરં સ રાજપુત્રો મહાત્મા નિય-  
માદાસન્નમવ્યાઽસ્તિ યતોઽમવ્ય-દૂરમવ્યાનાં તુ કદાપિ મયા સહ મૈત્ર્યમિલાપો ન ભવેત્ ।

[હિન્દી] इसके बाद मंत्रीनें उन पुरुषों के साथ राजगृही नगरी में जाकर राजा श्रेणिक को व राजकुमार अभयकुमार को सारी भेंट में प्राप्त उपहार सामग्री भेंट की । तदनन्तर कुशल समाचारों के साथ अभयकुमार को “आर्द्रकुमार तुम्हारे साथ मित्रता करना चाहता है” यह सन्देश सुनाया । अभयकुमार जिनमत के अन्दर अत्यन्त कुशल था । उमनें यह मन्देश सुनकर अपने मन में विचार किया । निश्चय से यह आर्द्रकुमार भव्य हैं, परन्तु पूर्वजन्म में इसनें किसी चारित्र्य में विराधना की हैं, इससे यह अनार्यजाति में उत्पन्न हुआ हैं । मालूम होता हैं कि निश्चय से यह राजपुत्र महात्मा हैं, और निरुद भवि हैं, क्योंकि अभव्य और दूरभव्य इन दोनों को मेरे साथ मित्रता की अभिलाषा न हो सकती हैं ।

[ગુ૦] ત્યારપછી મંત્રી તે રક્ષકો સાથે પોતાના રાજગૃહી નગરમાં ગયો અને રાજા શ્રેણિકને તથા રાજકુમાર અભયકુમારને બધી ભેટો-જે જે તેને મળી હતી, એક એક કરીને આપી અને દુશળ સમાચાર સાંભળાવ્યા. પછી અભયકુમારને 'આર્દ્રકુમાર તમારી સાથે મિત્રતા ઇચ્છે છે' એમ કહ્યું. અભયકુમાર જિનમતમાં અત્યંત દુશળ હતા. તેમણે આ સંદેશો સાંભળીને પોતાના મતમાં વિચાર કર્યો કે નહીં આ આર્દ્રકુમાર ભવ્ય છે, પરંતુ પૂર્વજન્મમાં તેણે કોઈ ચારિત્ર્યમાં વિરાધના કરી છે તેથી તેનો અનાર્યજાતિમાં જન્મ થયો છે. લાગે છે કે નહીં આ રાજપુત્ર

મહાત્મા છે અને નિકટભવિ છે, કારણ કે અભવ્ય અને દૂરભવ્ય એ બેને મારી સાથે મિત્રતા કરવાની અભિલાષા ન થાય.”

[મં०] તસ્માત્કેનાપ્યુપાયેન તં જિનધર્માનુગ્તં વિધાય ધર્મમાર્ગે પ્રવર્તયિષ્યામિ । તત્ર ચાપમુપાયોઽસ્તિ પ્રાભૂતચ્છલેન યદિ તત્રાર્હત્પ્રતિમાં પ્રેષયામિ, તદર્શનાદ્યદિ તસ્ય જાતિસ્મરણજ્ઞાનમુત્પદ્યતે તદેષ્ટસિદ્ધિઃ સ્યાન્ । ઇત્યુભયં ચિચિન્ય છત્રસિંહાસનાદિપ્રાતિહાર્યવિરાજિતાં રત્નમયીં પ્રથમજિનેન્દ્રપ્રતિમાં મન્જૂપામધ્યે ધૃત્વા તદગ્રે સકલાનિ ધૂપધંટિકાદિદેવપૂજોપકરણાનિ મુમોચ તતસ્તદ્દ્વારે તાલકં દત્ત્વાઽમયો નિજમુદ્રયા તાં મન્જૂપાં મુદ્રયામાસ । અથ ક્રિયદ્ધર્મિર્વાર્સરઃ શ્રેણિકો નૃપરતમાર્દ્રકં સત્પુરુષં પ્રિયાલાપપૂર્વકં પ્રભૃતૈઃ પ્રાભૃતૈઃ સહ વિસર્જયત્ ।

[હિન્દી] इसलिये किसी भी उपाय से उसे जिन धर्म में अनुरक्त करूं और जिन मार्ग में प्रवृत्त करूंगा । फिर उसने सोचा कि मैं भेंट के बहाने उसे अरि-हंत की प्रतिमा भेजूं जिसके दर्शन करने से उसे पूर्वजन्म का जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो जायगा । जातिस्मरण ज्ञान से इसे प्रतिबोध मिलेगा । ऐसा विचार कर उसने रत्नमयी श्री आदीश्वर भगवान की प्रतिमा छत्र भामंडल प्रमुख आठ प्रातिहार्य युक्त पेटी में सिंहासन पर बैठाकर उसमें उनके आगे धूपवत्ती, केसर, आरती, घंटिका आदि पूजा के उपकरण रखकर पेटी बन्द करके ताला बन्द कर दिया । तदनन्तर उसके ऊपर अपनी मोहर छाप लगा दी । अब कुछ दिनों बाद श्रेणिक राजाने आर्द्रक के पुरुषों को खूब सत्कार पूर्वक भेंट आदि देकर विदा किये ।

[ગુ०] માટે કોઈપણ ઉપાયે હું તેને જિનધર્મમાં પ્રીતિવાળો કરું તથા જિનમાર્ગમાં પ્રવૃત્ત કરું. પછી તેણે વિચાર્યું કે હું ભેટને બહાને તેને અરિહંતની પ્રતિમા મોકલું, જેનાં દર્શન કરવાથી તેને પૂર્વજન્મનું જાતિસ્મરણ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થશે. જાતિસ્મરણ થઈ જવાથી તેને પ્રતિબોધ મળશે. એવા વિચાર કરીને તેણે રત્નમયી શ્રી આદીશ્વર ભગવાનની મૂર્તિ છત્ર-ભામંડલ પ્રમુખ આઠ પ્રાતિહાર્યવાળી પેટીમાં સિંહાસન ઉપર બેસાડીને અને તેમની સામે ધૂપસળી, કેસર, આરતી, ઘંટડી વગેરે પૂજનો મામાન રાખીને પેટીને તાળું મારી સીલ કરી, તેની ઉપર પોતાની મંદારની છાપ સજાવી દીધી. થોડા દિવસો પછી શ્રેણિક રાજાએ આર્દ્રક જાતના માણસાને ખુબ સન્કાર ભેટ વગેરે આપીને વિદાય કર્યા.

[सं०] अभयोऽपि तां पेटीं तस्य हस्ते समर्प्य तं सत्कृत्य अमृत-तुल्य-वाण्या इत्युवाच, “एषां पेटी आर्द्रकुमारस्य पुस्तादुपदौक्यतां तथा तस्य मद्बन्धोरिदं वक्तव्यं त्वया एकान्तप्रदेशे एकाकिना स्थित्वा इयं पेटी स्वयमुद्घाट्य तदन्तर्गतं वस्तु स्वयं दृष्टव्यमन्यस्य कस्यचिन्न दर्शनीयम् । ततोऽभयोक्तं वचोऽङ्गीकृत्य स पुमान् स्वपुरं ययौ, तथा तानि च प्राभूतानि स्वस्वामिपुत्राय चार्पयामास । तथार्द्रकुमारायामयोक्तसंदेशमाचख्यौ ।

[हिन्दी] अभयकुमार ने भी आर्द्र के राजपुरुषों में प्रधान पुरुष का खूब सत्कार कर उसे वह पेटी देकर अमृत तुल्य वाणीसे आर्द्रकुमार के लिए सन्देश दिया । यह पेटी आप आर्द्रकुमार कों दें दें और उन्हे मेरा यह सन्देश कहें कि हे मेरे मित्र ! तुम इस पेटी को स्वयं ही अकेलें और एकान्त प्रदेश में खोलना इसके भीतरकी वस्तु का दर्शन करना पर इसे किसी को दिखाना नहीं । इसके बाद वह राजपुरुष अभयकुमार का वचन स्वीकार कर अपने नगरका गया । जो जो भी वस्तुएँ भेट स्वरूप श्रेणिक राजानें भेजी थी । उन सब को उसने अपने स्वामी और स्वामीपुत्र को दे दी तत्पश्चात् उसने आर्द्रकुमार से अभयकुमारका सन्देश कह सुनाया ।

[गु०] अबयकुमार पणु आर्द्र कु राजना भाणुसोभांना भुज्य भाणुसने। भुज सत्कार करीने तेने ते पेटी आपी, अभृततुल्य वाणीथी। आर्द्रकुमार भाटेने संदेशो आप्यो, अने कुहुं के आप आ पेटी आर्द्र-कुमारने हेने अने तेभने भारे संदेशो कुहेने के “हे मित्र ! तुं आ पेटी पोते ऐकलो अने ऐकान्तभां पोलेने, तेनी अंदरनी वस्तुनुं दर्शन करेने पणु ऐ डोछने अतावीश नहि. ” पछी ते राजपुरुष अबयकुमारने संदेशो लछने पोताना शहेरभां गयो. जे जे वस्तुओ श्रेणिक राजअ तेनी साथे भेट स्वरे भेकली हती ते अधी तेणे पोताना राज तथा राजकुमारने आपी दीधी. तयारपछी तेणे आर्द्रकुमारने अबयकुमारने संदेशो कुही संभणाव्यो.

[सं०] ततः कुमारः एकान्ते स्थित्वा तां पेटीमुद्घाट्य तन्मस्यस्थात्तममृत्युद्योतकारिणीं तां श्री-ऋषभस्वामि-प्रतिमां दृष्ट्वा स्वचित्ते चिन्तयामास, किमिदं जिञ्चितुमर्हं देहाभरणमस्मि तत् किं मूर्तिं समारोप्यं कण्ठे वा हृदये वा न्यत्र वा कुत्रचिदागोप्यं. वमापीदं दृष्ट्वा-मिव मां प्रतिभासते परं स्मृतिपथं नायाति, इत्यन्यथं चिन्तयत् आर्द्रकुमारस्य जाति-स्मरणजनिता मूर्धा नमजनिष्ट तदुत्पन्नजातिस्मरणः न कुमारः संश्रामचेतनः न च स्वयमेव एवं निजपूर्वभक्त्या चिन्तयामास । तथाहि—



[हिन्दी] आर्द्रकुमारने एकान्त में जाकर उस पेटी को अभयकुमार के कथनानुसार खोलीं। पेटी के मध्यमें प्रकाशमान श्री ऋषभस्वामी की उस प्रतिमाका दर्शनकर अपने मनमें विचारने लगा। अरे ! यह क्या हैं ? यह तो कोई उत्तम गहना है, जिसे मस्तक पर, कण्ठ पर या हृदय पर पहिनना चाहिये। यह तो ऐसा लगता है कि मैंने पहिले कहीं देखा हो। अब मुझे याद नहीं आ रहा है कि इसे पहली बार कहां देखा था। इस तरह वह मनमें विकल्पकर उमें याद करने लगा। उसी समय पूर्वभव को स्मरण दिलानेवाली मूर्छा उसे आ गयीं और वह वेसुध होकर जमीन पर गिर पड़ा। जब उसकी मूर्छा हटी, उसे चेतनता प्राप्त हुई तब उसे अपने पूर्वजन्म का जातिस्मरण हो गया। तब वह स्वयं ही अपने पूर्वभव की कथा इस प्रकार कहने लगा।

[गु०] पछी आर्द्रकुमारने अबलकुमारना संदेशा मुज्ज्म ते पेटी ऐकान्तमां जधने जोली. पेटीनी अंदरनी प्रकाशमान श्री ऋषभस्वामीनी ते प्रतिमानुं दर्शन करीने ते पोताना मनमां विचारवा लाग्यो: 'अरे, आ शु ? आ तो केध उत्तम धरेणुं छे, जेने माथा उपर, गणामां के हृदय उपर धारणु करवुं जेधये. आ तो जणुं ऐवुं लागे छे के मे पछेलां क्यांक जेयुं होय. मने अत्यारे याद नथी आवतुं के आने मे पछेलां क्यां जेयेल छे. आ रीते ते मनमां संकटप-विकटप करतो तेने संभारवा लाग्यो. जेज वज्जते तेने पूर्वभवनुं स्मरणु करववावाणी मूर्छा आवी गध अने ते जेशुद्ध थधने जमीन उपर पडी गयो. ज्यारे तेनी मूर्छा छटी अने तेने शुद्धि आवी त्यारे तेने पोताना पूर्वभवनुं जतिस्मरणु जान थयुं, छे ते पोते ज पोताना पूर्वभवनी क्या आ प्रमाणुं छेला लाग्यो.

आर्द्रकुमार के पूर्वभव की कथा :—

[मं०] इतो भवाचृतीये भवे मगधदेशे वमन्तपुरेऽहं 'सामायिको नाम' कुड-स्यभृवं । मम वन्धुमती भार्याऽभूत् । एरुदा सुस्थिताचार्यममीपे तथा सह अर्हद्व-मेदत्रापि । ततः समार्योऽपि अहं प्रतिबुद्धो गृहवासविरक्तः मन् तत्पाशं प्रव्रज्यां गृहीतवान् । क्रमेण गुरुणा मद विद्वन् एकस्मिन् पत्तनेऽगां वन्धुमती साध्यपि अपा-मावर्त्तयन्ता तत्रागतान् । एरुस्मिन् तां पश्यन् पूर्वभोगान् स्मरन् अहं तस्यामनुक्तोऽभून् ।

[हिन्दी] इस भव से तीसरे भव पूर्व में मगध देशके वसन्तपुर में सामायिक नामका कुटुम्बी था । मेरे बन्धुमती नामकी पत्नी थी । एक बार “बहुश्रुत सुस्थिताचार्य” विहार करते २ वहां आये । तब हम दोनों ने उनसे व्याख्यान और अरिहंतो का मार्ग सुना । इस धर्मको सुनकर हम प्रतिबुद्ध हुए । हम दोनों ने आचार्यश्री से विनती की और दीक्षा अंगीकार की । मेरी स्त्री तो साध्वीओं के साथ साध्वी बनी । और मैं गुरुजी के साथ रहा । पढलिखकर गीतार्थ हुआ । इस तरह क्रमसे विहार करते करते एक बार मैं किसी शहर में गया । देवयोग से बन्धुमती साध्वी भी दूसरी साध्वियों के साथ उसी नगर में आ गयी । मैंने अपनी पत्नी को देखा । मुझे पूर्व भोग याद आये । मैं उससे अनुरक्त हो गया । मैंने उसे कामचेष्टाएं दिखायी ।

[गु०] आ लवथी पढेलांना त्रीज लवभां हुं भगध देशभां वस-  
तपुर नामना नगरभां सामायिक नामना गृहस्थ छतो, भारे बन्धुमती  
नामनी पत्नी छती, ऐक वार “बहुश्रुत सुस्थिताचार्य” त्यां विहार  
करता करता आव्या, त्यारे अमे बन्नेऐ तेमनी पासे व्याख्यान सांलण्युं  
अने अरिहंतोना मार्ग विषे जण्युं, आ धर्मने सांलणीने अमे प्रभा-  
वित थयां, अमे बन्नेऐ आचार्यश्रीने विनंती करी अने बन्नेऐ दीक्षा  
अंगीकार करी, भारी स्त्री साध्वीओनी साथे साध्वी बनी अने हुं गुरु-  
छनी साथे रह्यो, अने लण्णु गण्णुने (हुशियार) “गीतार्थ” थयो, आ  
प्रमाणे कमे कमे विहार करतां करतां ऐक वार हुं डोढ शहरभां गयो,  
देवयोगथी बन्धुमती पण्णु भीज साध्वीओनी साथे ते ज शहरभां आवी,  
मे भारी पत्नीने जेध, मने पढेलां भोगवेला भोगो याद आव्या अने  
मने भारी पत्नीभां भोह थयो, मे तेने धशारा कर्या.

[मं०] तच्चान्यसाध्व्यं आख्यत् । साऽपि प्रवर्त्तिन्यं आचख्यौ । मा पुनरेनुमन्यं  
आचख्यौ । तदा बन्धुमती विषण्णा सती प्रवर्त्तिनीं प्रोवाच “एष गीतार्थोऽपि यदि  
मर्यादां लङ्घेत् तदा का गतिः ? ” अर्थां मां देशान्तरमपि यावन्तुष्यति तावन्मोह-  
प्रभावान्मयि गरं न न्यक्ष्यति तस्मात् हे भगवति ! अहं निश्चितं मगधं प्रसृत्य येन  
नान्य नापि मे शीलम्वलनं जायेत । इत्युक्त्वा मा माध्वी अनशनं कृत्वा शुद्धमात्मनः  
प्राणांस्तत्प्राज देवन्वं च प्राप ।

[हिन्दी] उसने किसी अन्य साध्वी से यह वृत्तान्त कहा, साध्वीने प्रवर्तिनी को यह बात बताई, प्रवर्तिनी ने बन्धुमती को सुनाया। तब बन्धुमती बड़ी दुःखी हुई। उसने प्रवर्तिनीसे कहा, “यह गीतार्थ होकर भी अगर मर्यादा का उल्लंघन करे तो क्या उपाय है?” मैं अगर देशान्तर में भी चली जाऊंगी तो भी मोह प्रभाव से गुझमें अनुरक्त यह अपने चरित्र को छोड़ देगा, अतः हे भगवती! मैंने मृत्यु का वरण करना निश्चित किया है। जिस से इसका और मेरा शील खंडित न हो। इतना कहकर उस साध्वीने अनशन करके शुद्ध भावना से प्राणों का छोड़ दिया और वह देवत्वको प्राप्त हो गयी।

[गु०] आ वात तेणे णीळ साध्वीने कही. ते साध्वीये प्रवर्तिनीने आ छट्टीकत कही. तेणे अंधुमतीने कहुं. त्पारे अंधुमती अडु दुःखी थध अने तेणे प्रवर्तिनीने कहुं के, “गीतार्थ होवा छतां पणु जे अये मर्यादानुं उल्लंघन करे तो तेना शुं उपाय ? हुं अगर णीळ देशमां आली अडु तो पणु मोहथी भारमां अनुरक्त थयेल ते पोतानुं आरित्र छोडी देशे. भाटे छे भगवती, मे मृत्युनुं शरणु लेवानो निश्चय कर्यो छे जेथी तेनुं तथा मारुं शील अडित न थाय.” आठलुं कहीने ते साध्वीये अनशन करीने शुद्ध भावनाथी पोताना देहने छोडी दीधो अने देवत्व प्राप्त कर्युं.

[सं०] ततस्तां मृतां श्रुत्वा मया व्यचिन्तितं सा महानुभावा निश्चितं व्रतभङ्गं भयान्मृता अहं पुनर्ममस्ततो ममापि जीवितेन अलं तदाहमप्यनशनं कृत्वा विषय देवोऽभूवं ततश्च्युत्वाहमत्रार्यदेशे धर्महीनः समुत्पन्नोऽस्मि। साम्प्रतं यो मम प्रतिबोधकः स मे बन्धुः स एव च गुरुस्ति केनापि भाग्योदयेनाभयकुमारमंत्रिणाऽहं बोधितः परमः चापि मंदभाग्योऽस्मि यतस्तं द्रष्टुमसमर्थः। तस्मात्पितरमनुज्ञाप्यार्यदेशे गमिष्यामि य मे गुरुभयकुमारोऽस्ति।

[हिन्दी] इसके पश्चात् मैंने उस साध्वी को मरा हुआ सुनकर विचार किया, अहो! वह महानुभावा अपने व्रत भंग के भय से मर गई और मैं चरित्र से विचलित हो गया, अतः अब मेरे जीने से क्या? ऐसा विचारकर मैंने भी अनशन करके मरकर देव बना। देवत्व पूर्ण करने के बाद अब मैं धर्म हीन अनार्य देश में पैदा हुआ हूँ। अब मुझे प्रतिबोध देनेवाले अभयकुमार मेरे मित्र और गुरु हैं, किसी

भाग्योदय से मैं अभयकुमार से प्रतिबोधित हुआ हूँ। पर अभी भी मैं मन्द भाग्य-वाला हूँ क्योंकि उनका दर्शन नहीं कर सका हूँ। अतः पिताजी से आज्ञा लेकर मैं आर्यदेश में जाऊँगा, जहाँ मेरे गुरु अभयकुमार हैं।

[शु०] पछी ते साध्वीना भरलुना सभायार सांलणीने में विचार क्यो : 'अहो ! ते मडासाध्वी पोताना वतलंगना लयथी भरी गछ अने हुं यारित्रथी वियलित थछ गयो. छवे भारे पणु लयीने शुं करवुं छे ? अवे विचार करीने हुं पणु अनशन करीने भरी गयो अने देवत्यने पाभ्यो. देवपणुं पूरुं क्यो पछी छवे हुं धर्महीन अनाथ देशमां जन्म पाभ्यो छुं. छवे भने प्रतिषोध आपवावाणा अलयकुमार भारा मित्र तथा गुरु छे. कोछक भारा लाज्योदयथी ज भने अलयकुमार प्रतिषोध आभ्यो छे पणु छल्ये हुं दुर्लागी छुं, केमके भने तेभनां दर्शन नथी थछ शक्यां. भारे पितालनी आज्ञा लधने हुं भगवदेशमां जधश के ज्यो भारा गुरु अलयकुमार छे.

[सं०] इत्थं मनोरथं कुर्वन् आदिमार्हतः प्रतिमां पूजयन्नाद्रकुमारो दिवसान्निवि-  
वाहयति स्म । एकदा कुमारो नृपमेवं व्यजिज्ञपत् ! हे तात ! स्वमित्रमभयकुमारं द्रष्टु-  
मिच्छामि । आर्द्रकनृपोऽवादीत्, हे वत्स ! त्वया तत्र गमनेच्छा न कर्तव्याम्माकमपि  
स्थानस्थितानामेव श्रेणिकेन सह मैत्र्यमस्ति । तदा मित्राज्ञया निवृद्धोऽभयमममर्गं प्रत्यु-  
त्कण्ठितश्चाद्रकुमारोऽपि न तस्यौ न च जगाम । तथा स आसने शयने याने भोजने-  
ज्यक्रियासु चाभयकुमारेणाश्रितां दिशं नेत्रयोऽग्रे चकार, पुनः किदृशो मगधदेशो गज-  
गृहपुं च किदृक् तत्रागमने कम्को मार्ग इत्थं पार्श्ववर्तिनो जनान् पप्रच्छ ।

[हिन्दी] इस तरह मनोरथ करके आदिनाथ भगवान की प्रतिमा का पूजन करता हुआ, आर्द्रकुमार अपने दिन बिता रहा था। एक रात कुमारने राजा से निवेदन किया कि हे महागज ! मैं अपने मित्र अभयकुमार को देखना चाहता हूँ। आर्द्रक राजा बोला, "हे वत्स" तुम्हें वहाँ जाने की इच्छा नहीं करनी चाहिये। हमारी भी इसी स्थान पर रहकर ही श्रेणिक राजा से मित्रता है। नव पिता द्वारा निरुद्ध वह आर्द्रकुमार विचलित हो गया। न तो वह वहाँ जा सके और न वह वहाँ ही सके। अर्थात् अब उसका मन नहीं लग सका। सोते, बैठते, खाने-पीने और कोई भी काम करने वक्त वह अभयकुमार को याद करने लगा। वह गजगृही

के मार्गकी तरफ उत्कण्ठित दृष्टि से देखना रहे, जो भी लोग मिलें उनसे मगध-देशमें राजगृहपुर कैसा है ? वहां जाने का कौनसा मार्ग है ? यह पूछता रहे।

[गु०] आ प्रभाणे मनोरथ करीने आदिनाथ भगवाननी प्रतिभातुं पूजन करतो आर्द्रकुमार पोतानां द्विस्रो वितानी रथो હતો. એકવાર કુમારે રાજાને નિવેદન કર્યું કે “મહારાજ! હું મારા મિત્ર અભયકુમારને મળવાં આહું છું.” આર્દ્રક રાજાએ કહ્યું: ‘હે વત્સ! તારે ત્યાં જવાની ઇચ્છા નહીં કરવી જોઈએ. મારી પણ અહીં રથો રથો જ શ્રેણિક રાજા સાથે મિત્રતા છે.’ પિતાએ ના પાડવાથી આર્દ્રકુમાર વિચલિત થઈ ગયો. ન તો તે ત્યાં જઈ શક્યો કે ન ત્યાં ને ત્યાં રહી શક્યો. તેણે મન કાંમમાં ચોંટ્યું નહીં. સૂતાં, ખેસતાં, ખાતાં, પીતાં અને કોઈ પણ કાંમે કરતી વખતે તે અભયકુમારને યાદ કરવા લાગ્યો. તે રાજગૃહીના રસ્તા તરફ ઉત્કણ્ઠિત દૃષ્ટિથી જોતો રહેતો અને જે કોઈ માણસ મળે તેને મગધદેશમાં રાજગૃહ શહેર કેવું છે ? ત્યાં જવાનો કયો માર્ગ છે, વગેરે પૂછતો રહેતો.

[સં૦] तस्मिन्नवसरे आर्द्रकनृपो दधौ कदापि कुमारो मामकथयित्वैव निश्चित-मभयसमीपे यास्यत्यतो यतनः कर्तव्यस्ततो नृपः पञ्चसामन्तशतानि इत्यादिशत् अहो अयं कुमारो देशान्तरं गच्छन् भवद्भी रक्षणीयः । तदा ते सामन्ता देहे छायेच तत्पात्रं न त्यजन्ति स्म । कुमारोऽप्यात्मानं देहधृतमिवामंस्त । ततः सोऽभयसमीपगमनं मनसि अवधार्य प्रत्यहमश्ववाहनभूमौ अश्ववाहनं कर्तुमारेभे ते सामन्ताश्च अश्वारूढा अंगारक्षकाः सन्तः पार्श्वं तस्थुः, कुमारोऽश्वं वाहयन् तेभ्यः किञ्चिदग्रे गत्वा न्यवर्त्तत ।

[हिन्दी] उसकी ऐसी चेष्टाएं देखकर आर्द्रक राजा को चिन्ता हुई। कहीं यह कुमार मुझे बिना कहे ही अभयकुमार से मिलने के लिये न चला जावे, इसलिये कोशीम करना चाहिये। ऐसा सोचकर राजाने पांचसौ सामन्तों को आज्ञा दी कि आप ध्यान रखिये कि कहीं आर्द्रकुमार राजगृही तरफ न चला जाय। इसे अपनी ही गीमा में गेलने गमाने देना है। यह आज्ञा सुन पांचसौ सामन्त जिस तरह शरीर के पास छाया रहता है, उसी तरह उसके पास से नहीं हटने थे। कुमारने भी अपने को चन्दी मा ही समझ लिया। उसके बाद कुमारने सोचा कि मुझे अब अभयकुमार के समीप जाने का उपाय करना चाहिये। ऐसा विचार करके वह पुनः

दौड़ में मन लगाने लगा। कुमार जब घोड़े पर बैठकर उसे दौड़ाता तो ५०० सामन्त भी घोड़ों पर साथ रहते। तब कुमार भी उनसे आगे निकलकर लौट जाता।

[गु०] तेनी आवी वर्तणुं के जेधने आर्द्रकुमारने चिता थध के क्यार्द्र आर्द्रकुमार भने कथा विना न अलखकुमारने भणवा आल्यो न जय. ओ भाटे कांछि प्रयत्न करवो जेधये. आवो विचार करीने राजये पोताना पांयसो सामंतोने आज्ञा करी के आर्द्रकुमार राजगृही आल्या न जय तेनुं ध्यान राभजे. तेने आपणी हृदमां न रहेवा देवा छे. आवी आज्ञा सांलणीने ओ पांयसो जेवी रीते शरीरनी साथे पडछाये रहे तेम तेनी आसपास रहेवा लाग्या. कुमार पण पोतानी जतने केही जेवी अनुभवी. त्पारपछी कुमार विचार क्यो के—भारे हवे अलखकुमारनी पारसे जवा भाटेनो केछि उपाय करवो. विचार करीने ते घोड़ा दौड़ाववाभां पोतानुं मन परेववा लाग्यो. कुमार ज्यारे घोड़ा पर जेसीने तेने दौड़ावतो त्पारे ओ पांयसो सामंतो पण घोड़ा पर तेनी साथे रहेता. आर्द्र-कुमार सौनी आगण नीकणी जतो अने पछी पाछो आल्यो आवतो.

[मं०] एवं चाञ्च वाहयन् सोऽधिकाधिकं ययौ पुनः पुनर्व्याघ्रदूयाययौ चेत्यं तेषां विश्वाममुत्पाद्यान्यदार्द्रकुमारो निजैः प्रतीतिमत्पुरुषैः समुद्रे यानपात्रं प्रगुणं काग-यित्वा तच्च गन्तादिभिः प्रपूर्य जिनप्रतिमां च तत्रारोप्य तथैवाञ्च वाहयन् दुग्गमनाददृश्यी-भूय तद्दूयानपात्रमाल्ल्य आर्यदेशं ययौ, ततो यानपात्रादुत्तीर्य तां प्रतिमामभयकुमागाय संग्रेष्य मत्तश्चेन्न धनान्युप्त्वा यत्तिलिङ्गं गृहीतवान् ।

[हिन्दी] इस तरह वह नित्य प्रति घोड़े पर घूमने लगा। यह देख मामंतोंने सोचा। राजा भ्रम में पड़ गया है। यह कुमार तो नहीं जायगा। इस तरह ५०० सामन्तों के हृदय में कुमार के प्रति विश्वास उत्पन्न हो गया। वे लापंगवाह हो गये। तब एक दिन समुद्र के किनारे स्थित जहाजवालो से कुमार शान करके आया। दूसरे दिन वह प्रतिमाजी की पेंटी गन्वो ने भग्न लेक के जहाज में बैठे आर्य देशमें गया। वह मनमें सोचने लगा कि मैं राजगृही जब पहुंचगा. चात्रि के दिना दिन व्यर्थ जा रहे हैं, ऐसा जानकर उमने प्रतिमाजी को तो अभयकुमार के पास भेजी और अपने धन को नाव छेवोंमें लगा दिया तब वह स्वयं चात्रि लेने को तैयार हो गया।

[गु०] आ प्रमाणे ने राज घोड़ा उपर करवा जवा लाग्यो.

આ બેઠને સામંતોએ વિચાર્યું: રાજ ભ્રમમાં પડી ગયા છે. કુમાર તો ક્યાંય જાય તેહું લાગતું નથી. આ પ્રમાણે પાંચસોએ સામંતોના મનમાં કુમારની ઉપર વિશ્વાસ બેસી ગયો, અને તેથી તેઓ બેપરવા બની ગયા. પછી એક દિવસ કુમાર સમુદ્રને કિનારે નાંગરેલા વહાણવાળા સાથે વાતો કરવા ગયા અને બીજો દિવસે પ્રતિભાજીવાળી પેટીમાં રત્નો ભરી લઈને વહાણમાં બેસીને આર્યદેશમાં ચાલ્યો ગયો. તે મનમાં વિચારવા લાગ્યો કે હું ક્યારે રાજગૃહી પહોંચીશ ? દીક્ષા લીધા વગરના દિવસો નકામા જાય છે એમ સમજીને તેણે પ્રતિભાજીને અભયકુમારની પાસે મોકલી દીધી, પોતે સાથે લાવેલા ધનને સાતે ક્ષેત્રમાં વહેંચી દીધું અને પોતે દીક્ષા લેવાની તૈયારી કરવા લાગ્યો.

[સં૦] સ ચ યાવત્સામાયિકમુચારયિતુમારેભે તાવદાઽઽકાશસ્થિતયા દેવતયા ઉચ્ચં: સ્વરેણોચે, યદ્યપિ ત્વં મહાસચ્ચસ્તથાપિ સાંપ્રતં દીક્ષાં મા ગ્રહીઃ । અઘાપિ તે ભોગફલં કર્માસ્તિ તદ્ શુભત્વાવસરે વ્રતં ગૃહાણ, યતો ભોગ્યં કર્મ તીર્થકૃતામપ્યવશ્યં ભોક્તવ્યં, તસ્માદ્દે મહન્ ! તેન વ્રતેનાલં, યદ્ગૃહીતમપિ ત્યક્ષ્યતે, યથા તેન ભોજનેન કિં યદ્ શુક્ત-મપિ વમ્યતે, इत्थं बहुधा निषिद्धोऽप्यार्द्रकुमारः स्वपौरुषમङ्गीकृत्य देवीवाचमनादस्य स्वयं દીક્ષામાદદે ।

[હિન્દી] વહ જવ તક સામાયિક ઉચ્ચારણ કરે તવ આકાશમેં સ્થિત દેવતાનેં ઉચ્ચ સ્વર મેં કહા, યદ્યપિ તુમ મહાસચ્ચ હો તો મીં ઇસ સમય દીક્ષા મત લો । અમીં મીં તુમ્હારે ભોગ્ય કર્મ અવશિષ્ટ હૈ । પહેલે ઉન્હેં ભોગ લો ફિર વ્રત લેના, ક્યોંકિ ભોગ્ય કર્મ તો તીર્થકરોં કો મીં અવશ્ય હી ભોગને પડતે હૈં । અતઃ હે મહાન્ ! દીક્ષા મત લો । જિમ દીક્ષા કો લેકર ફિર તોડના પડે- વહ દીક્ષા કિમ કામ કી । જિમ ભોજન કો खाकर आहार पचे नहीं वह आहार क्या काम का ? किन्तु आर्द्र-કુમાર કો ઇમ મમય જોશ ચઢા હુઆ થા, અતઃ વાર વાર મના કરને પર મીં દેવીં કે વચનોં કા અનાદર કર ઉમનેં દીક્ષા ગ્રહણ કરલી । ઉમ આર્દ્રકુમારનેં મુનિયોં કે યોગ્ય તીર્થ વ્રત કા પાલન પ્રારમ્ભ કર દિયા ।

[ગુ૦] તે સામાયિકનું ઉચ્ચારણ કરે તે પહેલાં આકાશમાં રહેલા દેવાએ તેને કીધે સ્વરે કહ્યું : “ બે કે તું મહાસચ્ચ છે, તો પણ હમણાં દીક્ષા ન લે. હજી પણ તારા ભોગ્યકર્મ બાકી છે. પહેલાં તેને ભોગવી લે,

પછી દીક્ષા લેજે; કારણ કે ભોગ્યકર્મ તીર્થકરેને પણ અવશ્ય ભોગવવાં પડે છે, માટે હે મહાન જીવ, તું દીક્ષા ન લે. જે દીક્ષાને લઇને પછી તેને તોડવી પડે, તે દીક્ષા શા કામની ? જે ભોજન ખાવાથી આહાર પચે નહીં તે ભોજન કયું ? શા કામનું ? પણ આર્દ્રકુમારને તો અત્યારે જ્ઞેશ ચડ્યું હતું એટલે વારંવાર ના પાડવા છતાં દેવોના વચનોની અવગણના કરીને તેણે દીક્ષા ગ્રહણ કરી લીધી, અને મુનિઓને યોગ્ય તીક્ષણ વ્રતનું પાલન કરવાનું શરૂ કરી દીધું.

[સં૦] સ પ્રત્યેકવૃદ્ધો મુનિસ્તીક્ષ્ણં વ્રતં પાલયન્ ભૂમંડલે વિચરન્ અન્યદા વસન્ત-પુરપત્તનં પ્રાપ્ય કસ્મિંશ્ચિદેવકુલે કાયોત્સર્ગેણ ચ તસ્થૌ । इतश्च तस्मिन्नगरे देवदत्तो नाम महाश्रेष्ठ्यभूत् तस्य धनवती नाम पत्नी आसीत् । अथ स वन्युमतीजीवो देवलोक-काच्युत्वा श्रीमती नाम अद्भुतरूपा तयोः पुत्री समजनि । सा च धात्रीभिराल्यमाना क्रमेण रजःक्रीडोचितं वयं प्राप ।

[હિન્દી] एक बार वह विहार करता करता वसन्तपुर नामक शहर में आया । वहां किसी देव मन्दिर में कायोत्सर्ग ध्यान में बैठा । इस अवसर में वन्युमती का जीव देवलोक से च्युत होकर उसी नगरमें देवदत्त शेट के घर में लड़की के रूप में उत्पन्न हुआ । शेटने उसका नाम श्रीमती दिया । अनुक्रम से धाय डाग लालिन पालित होकर मात व्रम की हो गई । एक बार यह अपनी सहेलियों का माय लेकर खेलती हुई उसी मन्दिर के पास गई, जहां आर्द्रकुमार तपस्वी वेशमें काउम्भगा ध्यानमें स्थित थे ।

[ગુ૦] એક વાર તે વિહાર કરતો કરતો વસંતપુર નામે શહેરમાં આવ્યો. ત્યાં કેઇ દેવમંદિરમાં કાયોત્સર્ગ ધ્યાનમાં બેઠો. આ વખતે બંધુમતીનો જીવ દેવલોકથી ચ્યુત થઇને તે જ શહેરમાં દેવદત્ત શેઠના ઘરમાં દીકરી તરીકે જન્મ પામ્યો. શેઠે તેનું નામ શ્રીમતી પાડ્યું. કાલ-ક્રમે ધાઇ દ્વારા પાલન-પોષણ પામેલી તે પોતાની સખીઓને સાથે લઇને રમતી રમતી તે જ મંદિરની પાસે ગઇ કે જ્યાં આર્દ્રકુમાર કાઉમ્ભગા ધ્યાનમાં બેઠો હતા.

[સં૦] एकदा तत्र देवकुले पौरवन्द्याभिर्युक्ता श्रीमती कन्या पतिव्रतप्रीटया ननुमायर्षा । तदा सर्वाः कन्या भर्तारं दृष्टुमेतृचुम्नतः कयापि कोपरीत्येवं नन्वि-  
या दृताः श्रीमत्योक्तं हे नन्यो ! मया तु अयं दृश्यो दृतः । [इति प्रदन्त्यान्मनस]

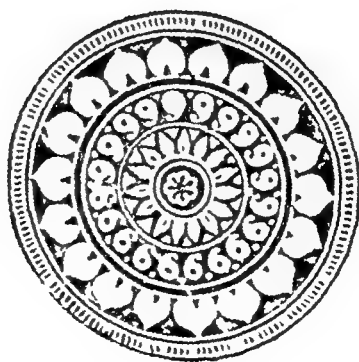


[हिन्दी] वहां एक बार ये सहेलियां और श्रीमती मिलकर “पतिवरण” का खेल खेलने लगी। तब सब कन्याओंने अपनी अपनी रुचि के अनुकूल ‘पतिवरण’ किया। जैसे किसीने यक्ष को वरा, किसीने वृक्ष को वरा, किसीने स्तंभ को वरा, किसीने कुछ, किसीने कुछ वरा। इस पर श्रीमती नामकी कन्या बोली हे सखियों! मैंने तो इन पूज्य साधुजी को ही वर लिया है।

नोटः—[यहां प्रथम व्याख्यान समाप्त हुआ।]

[गु०] त्यां એક દિવસ શ્રીમતી અને તેની સાહેલીઓ ‘સ્વયં’વર’ની રમત રમવા લાગી. બધી કન્યાઓએ પોતપોતાની રુચિ પ્રમાણે પતિ પસંદ કર્યા. જેમકે કોઈએ યક્ષને, કોઈએ વૃક્ષને, કોઈએ સ્તંભને, કોઈએ કોઈ, કોઈએ કાંઈ એમ સૌએ પોતપોતાના પતિ પસંદ કર્યા. એટલે શ્રીમતી નામની કન્યા બોલી કે હું તો આ પૂજ્ય સાધુ મહારાજને જ પતિ તરીકે પસંદ કરું છું.

[પહેલા દિવસનું વ્યાખ્યાન સમાપ્ત]



## અથ દ્વિતીય-વ્યાખ્યાન-પ્રારંભઃ ।

[સં૦] અથ સાધુ વૃત્તં સાધુ વૃત્તમિતિ દેવતા પ્રોવાચ । પુનર્ગર્જિતં તન્વાના સા  
 એવ દેવી તત્ર રત્નાન્યવર્ષત શ્રીમતી ગર્જિતાર્દિતા તસ્ય મુનેઃ પાદેઽલગત્, સ મુનિઃ  
 ધ્વનમાત્રં સ્થિત્વાચિન્તયત્, ઇહ તસ્થુપો મમાનુકૂલ ઉપસર્ગોઽમૃત્, અનોઽત્ર ન સ્થેયમિતિ  
 વિચિન્ત્ય સોઽન્યત્રાગાત્ । તદા અસ્વામિકં ધનં રાજ એવેતિ નિશ્ચયં કૃત્વા તાનિ રત્ના-  
 ન્યાદાતું ગજા તત્રાજગામ । રાજપુરુષાસ્તદ્ દ્રવ્યસ્થાનં નાગસંકુલં દદ્દશુઃ, દેવતયા  
 ચોક્તં એતદ્ દ્રવ્યં તસ્યે કન્યાયૈ મયા વરકે પ્રદત્તમસ્તિ ।

[હિન્દી] ટીક હી વરણ ક્રિયા । ટીક હી વરણ ક્રિયા । હસ તરહ આકાશ-  
 માર્ગ સે દેવવાણી હુઈ ઔર રત્નોં કી વર્ષા હુઈ । શ્રીમતી હસ ગર્જન સે ડરકર મુનિ-  
 ગજ કે પાંચ પકડકર વેઠી । મુનિને મનમેં વિચાર ક્રિયા કિં યહ સુખકારી ઉપસર્ગ હુઆ  
 હૈ । યહ ચારિત્ર મેં વિદ્ધન ઢાલનેં વાલા હૈ । અતઃ યહાં રહના ઉચિત નહીં, એમા વિચાર  
 વરકે ઉપનેં વહાં સે વિહાર ક્રિયા. ક્યોંકિ મુનિ કે પ્રતિવચન નહીં હોતા હૈ । રત્નોં  
 કી વર્ષા સે પ્રાપ્ત ધન કો લેને કે લિયે વહાં કા રાજા વહાં આયા, રાજપુરુષોનેં દેખા ધન  
 કે સાંપ લિપટા હુઆ હૈ । યહ દેખ ઉમ ધન કો લેને કી ઉનકી શક્તિ નહીં ચડી ।  
 તવ રાજાનેં કહા કિં યહ ધન કિસકા હૈ ? તવ આકાશ સે દેવવાણીનેં ઉત્તર દિયા  
 કિં વહ ધન મૈને શ્રીમતી કે વિવાહ કે વાસ્તે દિયા હૈ ।

## વ્યાખ્યાન બીજું

[ગુ૦] “પસંદગી બરોબર છે” “પસંદગી બરોબર છે” આ પ્રમાણે  
 આકાશવાણી થઈ અને આકાશમાંથી રત્નોની વર્ષા થઈ. શ્રીમતી આ  
 ગર્જનાથી રૂડીને મુનિરાજના પગ પકડીને બેસી ગઈ. મુનિએ મનમાં  
 વિચાર કર્યો કે આ સુખકારી ઉપસર્ગ થયો છે અને તે ચારિત્રમાં વિદ્વ-  
 કર્તા છે; નેથી હવે અહીં રહેવું યોગ્ય નથી. એવો વિચાર કરીને તેણે  
 ત્યાંથી વિહાર કર્યો, કારણ કે મુનિઆએ કોઈ બધનમાં રહેવું ઉચિત નથી.  
 રત્નોની વર્ષાથી મળેલું ધન લેવા માટે ત્યાં રહેવોના રાગ આવડો. રાજ-  
 પુરુષોએ લેવું કે તે ધનને સાંપ વીંટળાયેલા છે. આથી તે ધન લેવાની  
 નેમતી શકિત નથી. રાગએ કહ્યું કે આ ધન કોનું છે ? ત્યાં આકા-  
 શવાણી થઈ કે “ આ ધન નેં શ્રીમતીના વિવાહ માટે આપ્યું છે. ”

[સં૦] इति श्रुत्वा नृपो विलक्षरसन् स्वग्रथानं ययौ । ततस्तत्सर्वं धनं श्रीमती पिता श्रेष्ठी जग्राह । अथ कियता कालेन श्रीमतीं परिणेतुं नहवो वरा अधीकृत । तत्स्वरूपं पित्रा पुत्र्यं उक्तं तदा श्रीमती जगाद, हे तात ! यो महर्षिमया वृतः स एव मम वरः तद्वरणे देवता यद् द्रव्यमदात् तद् द्रव्यं गृह्णता त्वयोपि तदनुगतमेव ततस्तस्मै मां कल्पयित्वान्यस्मै दातुं नार्हसि उक्तं च :—

“ सकृज्जल्पन्ति राजानः, सकृज्जल्पन्ति साधवः ।

सकृन्कन्या प्रदीयन्ते, त्रीण्येतानि सकृन् सकृत् ॥ ”

[हिन्दी] यह सुन कर राजा अपने निवास स्थान में चला गया, और वह सारा धन श्रीमती का पिता ले गया । तदनन्तर कितने समय बाद श्रीमती जब विवाह योग्य हुई तो सैकड़ों स्थानों पर कन्या के योग्य वर की तलाश सेठ ने प्रारम्भ की । यह देख कन्या श्रीमती ने अपने पिता से कहा “ हे पिताजी ! जिस महर्षि का मैंने खेल खेलते वरण किया था वही मेरा पति होगा, क्योंकि उसी के वरण में देवी जो द्रव्य दिया है वह आप लाये है । उस समय आपकी भी इसमें स्वीकृति थी । इस तरह एक बार कन्यादान की कल्पना करके अब आप दूसरे वर को मुझे देना चाहते हैं, यह योग्य नहीं है, क्योंकि कहा है :—

राजा एक बार कहते हैं, साधु एक बार ही आदेश देते हैं । इसी तरह कन्यादान भी एक ही बार किया जाता है, क्यों कि ये तीनों एक ही बार होते हैं । ”

[ગુ૦] આ સાંભળીને રાજા પોતાના મહેલે આદ્યો ગયો અને તે બધું ધન શ્રીમતીનો પિતા લઈ ગયો. ત્યારપછી ઘણું વખતે જ્યારે શ્રીમતી વિવાહને યોગ્ય થઈ ત્યારે ઘણી જગ્યાએ શ્રીમતીના પિતાએ તેને લાયક વરની તપાસ ચલાવી. આ જાણી શ્રીમતીએ પોતાના પિતાને કહ્યું: ‘પિતાજી! જે મહર્ષિને હું રમત રમવામાં વરી ચૂકી છું તે જ મારા પતિ થશે. કારણ કે તેને વરવા માટે દેવતાએ ધન આપ્યું છે અને તે તમે લાવ્યા છો, તે વખતે આપની પણ આમાં સંમતિ હતી. આવી રીતે એકવાર એકને કન્યાદાન કરવાની કલ્પના કરીને હવે આપ બીજા વરને મને આપવા ઇચ્છો છો તે યોગ્ય નથી. કહ્યું છે કે—

“ રાજા એક વાર જ આજ્ઞા આપે છે, સાધુ એકવાર જ ઉપદેશ આપે છે અને એ પ્રમાણે કન્યાદાન પણ એક જ વાર દેવાય છે—આ ત્રણ એક જ વાર થાય છે.”

[सं०] एतत् श्रुत्वा श्रेष्ठयुवे स तु भ्रमर इव एकत्र नावतिष्ठतेऽतः कथं प्राप्यते पुनस्त्ववायास्यति न वा आयातोऽपि कथं जायते, किं तस्याभिज्ञानं? तदा श्रीमत्या उक्तं हे तात ! मया तद्दिने गर्जितमीतया तच्चरणे विलग्नयाभिज्ञानं दृष्टमस्ति तस्मादतः परं तथा कुरु यथा प्रतिदिनं आयातश्च सर्वानपि साधून् पश्यामि । श्रेष्ठयुवाच, इह पत्तने ये केऽपि महर्षयः समायान्ति तेभ्यस्त्वं प्रत्यहं स्वयं भिक्षां ददेहि येन सर्वेषां दर्शनं स्यात् । ततः सापि प्रत्यहं तथैव चक्रे । तल्लक्षणं दिदृक्षमाणा च मुनीनां चरणानवन्दत ।

[हिन्दी] यह सुनकर सेठने कहा, साधु तो भ्रमर की तरह एक स्थान पर ठहरता नहीं है, सो वह मुनि वापिस यहां आवे या न आवे इसका पता कैसे चले ? उसकी पहिचान भी क्या है ? तब श्रीमती ने कहा हे पिताजी ! उस दिन गर्जन के साथ जब बिजली चमकी तब उस मुनि के चरणों में लग्न और डरी हुई मैंने बिजली के प्रकाश में कुछ पहिचान के चिन्ह देखे हैं । अतः अब से ऐसा करो कि मैं प्रतिदिन आने जाने वाले साधुओं का दर्शन करूं । सेठने कहा “इस शहर में जो कोई भी महर्षि आवे उनको प्रतिदिन भिक्षा दो जिससे सब के दर्शन हो । अब श्रीमतीने प्रतिदिन सेठ के कहने के अनुसार साधुओं को वंदना शुरू किया । वह प्रत्येक साधु में उन लक्षणों को देखने की इच्छा से चरण वन्दन करती थी ।

[गु०] आ सांभजीने शेठे क्युं: “ साधुओ तो भ्रमरनी जेभ ओइ रेकाणे रहेता नथी तेथी ते मुनि हवे अही आवे ते न पण आवे. तेना पत्तो डेवी रीते लागे ? तेनी ओणणाण पण शुं छे ? ” त्यारे श्रीमतीओ क्युं के ‘ पिताळ ! ते दिवसे गर्जनानी साथे त्यारे बीजणीना अमत्कार थयो अने छुं उरनी भारी मुनिना अरओने वणजी पटी त्यारे बीजणीना प्रकाशमां मे तेभने ओणणी शक्य तेचां चित्तां जेयां छे तेथी हवे ओखुं देशे के राज जे जे साधुओ आवे तेनां छुं दर्शन करूं. ” शेठे क्युं: ‘ आ शहरमां जे कोण पण महर्षि आवे तेने राज तुं भिक्षा आप, जेथी तेनां दर्शन पाय. ”

हवे श्रीमतीओ शेठना इहेवाथी राज साधुओने वंदनारवानुं शरूं क्युं. ते प्रत्येक साधुने तेनां अरओनां ने चित्तां जेयानी इच्छाची वंदन करती होती.

[सं०] अथ गच्छाम्ये न महानिर्दिष्टः सन् तत्रागतस्तद्वन्दनान्वयेन-

लक्षितश्च तदा श्रीमती तमृषिमुवाच । तत्र देवकुले तदा यो मया वृत्तः स मम वस्तु  
मेनासि मद्भाग्यैरेवाधुनागतोऽमि । अथ मां मुग्धां त्यक्त्वा क्व गारयसि । यदा तं  
दृष्टनष्टोऽभूत् तद्दिनादारम्य मम हा दुःखेन कालोऽगमत् तस्मान्प्रसादं विधाय मामंगी  
कुरु । एवं स्थितेऽपि मामवमन्यसे तर्हि अग्निप्रवेगं कृत्वा तुभ्यं स्त्रीहत्यापातकं दाप्ये ।

[हिन्दी] इस तरह साधुओं की सेवा करने हुए श्रीमती को १२ वर्ष लग  
गये । इसी अवसर में आर्द्रकुमार मुनि विहार करते मार्ग भ्रल जाने से अथवा भाग्य-  
योग से वसन्तपुरनगर में आये । भूख और त्याग से पीड़ित होने से नगर में गोचरी को  
गये । “कर्म भोग कहीं छिपते नहीं हैं” अतः श्रीमती के भाग्योदय से वे मुनि  
श्रीमती के घर ही गोचरी हेतु गये । श्रीमतीने आदर सत्कार से उनके चरण पकड़  
कर कहा, ‘हे महाराज ! आप कहाँ जा रहा हैं ? बहुत दिनों से मैं भी आपकी  
राह देख रही हूँ । आज आपको देखकर प्रसन्नता हुई है । अब मैं आप को जाने  
न दूंगी । उस दिन देव मन्दिर में देव वाणी के समक्ष आपका—मेरा वरण हुआ  
था । तब आप पाँच छुड़ा कर चले गये थे । अब मेरे भाग्य से ही पुनः आपके  
दर्शन हुए हैं । इस लिए मुझे मुग्धा को छोड़ कर आप न जायें । और मेरे साथ  
विवाह कर मुझे स्वीकार करें । अगर आप ऐसा नहीं करेंगे तो मैं अग्नि में जल  
कर मर जाऊंगी और आपको स्त्री हत्या का पातक लगेगा ।

[गु०] आ प्रभाणे साधुओंनी सेवा करतां करतां आर वर्ष वही  
गया, आ सभये आर्द्रकुमार मुनि विहार करता करता मार्ग भ्रली जवाथी  
अथवा तो भाग्ययोगी वसन्तपुर नगरमा आवी गया, भूख अने  
तरसथी व्याकुल थयेला ते शहरमा गोचरी भाटे गया, “कर्मभोगछातां  
रहेतां नथी,” भाटे श्रीमतीना भाग्योदयथी ते मुनि तेना धरे ज गोचरी  
भाटे गया, श्रीमतीये आदर—सत्कारथी तेभने वछाराव्युं, छेवटे पाछा  
इरती वप्पने मुनिने ओणभी पण लीधा, तेथी श्रीमतीये तेभनां यरण  
पकड़ीने कहुं: ‘हे महाराज ! आप क्यां जओ छे ? वण्ण दिवसेथी  
हुं तमादी वाट जेध रही छुं, आज आपने जेधने प्रसन्नता थध, हवे  
हुं आपने जवा नही दडि, ते दिवसे देवमन्दिरमा देववाणीनी साक्षीये  
भाई—तमाई वरण थयुं छुं, ते दिवसे तमे पण छोडावीने आल्या गया  
‘ना, हवे भारा सडभाज्ये ज इरीवार आपनां दर्शन थयां छे, भाटे हवे  
ते मुग्धाने छोडीने आप आल्या न जओ, भारी साथे विवाह इरीने

भारे स्वीकार करो। जे आप ओम नहीं करो तो छुं अग्निभां पडीने  
भाणी भरीश अने आपने स्वीकृत्यानुं पाप लागशे. "

[सं०] तदान्यैरपि तत्पित्रादिभिर्महाजनैर्विवाहाय अभ्यर्थितः स साधुर्व्रतान्भनिपेधकं  
तद्देवीवचनं स्मराम् । ततस्तद्भोग्यकर्मोदयादृणमोक्षमिव कर्तुं तां श्रीमतीं पर्यर्णपीत् ।  
अथ श्रीमत्या सह चिरं भोगान् भुञ्जानस्य तस्य क्रमेण पुत्रः सञ्जातः । स च क्रमेण  
वर्धमानो गजशुक्र इव वक्तुमुह्यसज्जिह्वोऽभवत् । तत्पुत्रे गंजाते मतिः स आर्द्रकुमारो  
हर्षितः सन् श्रीमतीं प्रोवाच अतः परं ते पुत्रः सहायोऽस्तु अहं प्रव्रजामि । तदा  
बुद्धिनिधिः श्रीमती सुतं प्रत्यवसरं ज्ञापयितुं तूलपृणिकासहितं तर्कुमादायोपाविशत् ।

[हिंदी] तब दूसरे महाजन व (श्रीमती के) पिता आदि ने' मुनि से विवाह के  
लिये प्रार्थना की । आर्द्रकुमार को देवी के वचन स्मरण हो आये जो प्रव्रज्या लेने के  
पूर्व उगने' निपेध रूपसे' कहे थे । उन्होंने' विचारा कि भोग्यकर्म अवशिष्ट हैं, उन्हें  
भोगे बिना ऋणमोक्ष नहीं होगा । अतः उन्होंने विवाह की स्वीकृति दे दी ।  
साधु वेग और ओवा मुहपत्ती आदि बांधकर खंडी पर (टांग दिचे) ग्व दिचे । "

अब श्रीमती से विवाह कर वे विषय सुखका आनन्द लेने लगे । इस तरह  
नमय बीत गया कालक्रम से श्रीमती के एक पुत्र हुआ । वह पुत्र भी क्रम से बढ़ता  
हुआ गजशुक्र की तरह मधुर वाणी से वार्तालाप करने लगा । जब पुत्र ५ वर्ष का  
हो गया, तब आर्द्रकुमार ने' विचार किया कि श्रीमती को पुत्र का आधार हो गया  
है, और मैंने भोगवाली कर्म भी भोग लिये हैं, अतः अब दीक्षा लेना ठीक है ।  
ऐसा निचार कर श्रीमती से कहा कि अब मैं दीक्षा लूंगा । तुम्हारे भी पुत्र का  
आधार हो गया है । तब बुद्धि के निधान वह श्रीमती अपने पुत्र को यह बात  
सुनाने के लिये रुई की पुनिया ले कर चम्पा वांते दे दी ।

[शु०] पछी णील सज्जनो अने श्रीमतीना पिता वजरेण्ये मुनिने  
विवाह करी देवानी प्रार्थना करी. आर्द्रकुमारने दीक्षा लेती वचने  
देवीअे निपेधना रूपभां जे वचने करी एतां ते याद आब्यां. तेने  
विचारुं के भोगकर्म जे शास्त्री छे, ते व्याख्या बिना ज्ञानेनस नहीं  
पाय. भाटे तेभने विवाहनी संभति आपी अने साधुदेवा. आशे अने  
सुहृदनि वजरे गांधीने पीदी पर टांगी दियो.

एव श्रीमती साय विवाह करीने ते मुं ।

આ પ્રમાણે ઘણો વખત વીતી ગયો. જતે દિવસે શ્રીમતીને એક પુત્ર થયો. તે છોકરો પણ મોટો થતાં મધુર વાણીથી વાર્તાલાપ કરવા લાગ્યો. જ્યારે પુત્ર પાંચ વર્ષનો થયો ત્યારે આર્દ્રકુમારે વિચાર કર્યો કે હવે શ્રીમતીને પુત્રનો આધાર થઈ ગયો છે અને મેં પણ ભોગવવાનાં કર્યો ભોગવી લીધાં છે, માટે હવે દીક્ષા લેવી જોઈએ. એવો વિચાર કરીને શ્રીમતીને તેણે કહ્યું કે “હવે હું દીક્ષા લઈશ. તમારે પણ પુત્રનો આધાર થઈ ગયો છે.”

ત્યારે બુદ્ધિશાળી એવી શ્રીમતી પોતાના પુત્રને આ હશીકત ઠસાવવાને માટે રૂની પૂણીઓ લઈને કાંતવા બેસી ગઈ.

[સં૦] તदा तूलकर्तनक्रियां कुर्वाणां तां विलोक्य स बालकः पप्रच्छ, हे अम्ब ! एतत्पामरलोकोचितं कर्म किं प्रारब्धं ? सा प्रोचे हे पुत्र ! तव पिता त्वां मां च त्यक्त्वा प्रव्रज्यार्थं गन्तुमना वर्तते । गते चास्मिन् पतिहीनाया मे तर्क्यं शरणं तदा बालको बाल्यान्मन्मनाक्षरैरुवाच अहं वद्ध्वा धारयिष्यामि कथं मे पिता यास्यति ? आर्द्रकुमारोऽपि तन्मधुरं बालवचोवृन्दं श्रुत्वा सुतस्नेहादेवमुवाच, हे पुत्र ! यावद्भिस्तन्तुभिर्मै पादौ नह्यौ तावन्ति वर्षाणि पुनर्गृहे स्थास्यामि । गणयित्वा वयं नानि आच्छोटय ।

[હિન્દી] તવ માં કો ચરખા કાંતતી દેખકર બાલકને પૂછાઃ હે માતા ય પામર જાતિયો કે યોગ્ય કર્મ તૂને ક્યાં શુરુ ક્રિયા હૈં ? વહ બોલી “હે પુત્ર તુમ્હારે પિતા મુજે છોડ કર દીક્ષા લેને કા વિચાર કરતે હૈં । ઇન્કે ચલે જાને પતિ હીન મેરે લિગ્ ચરખા કાંતના હી અવગેય મ્હેંગા । તવ પુત્રને કહા માં મુ કોકડી દે સો મૈં અપને પિતાજી કો એમા બાંધ દૈં કિ વે કહીં મી ન જાવેંગે આર્દ્રકુમારને મી એસે મધુર વચનો કો સુના ઓર ઉન્હે મોહ ઉત્પન્ન હો ગયા । “વહ વિચારને લગા ‘અહો ! મોહ કી ગતિ કેસી અદ્ભુત હૈં જિસકા કહીં પા નહીં હૈં ।” ઉમને બાલક સે કહા, હે પુત્ર ! જિતને તન્તુઓ સે તુમ મેરે પૈર બાંધેંગે ઉતને વર્ષ મૈં ફિર ઘર મે રહેંગા અતઃ ગિન કર ઝાંટે દેના ।

[ગુરુ] માને રેઢિયા કાંતતી જોઈને બાળકે પૂછયું: ‘માતા ! આ દસથી બનિયોને યોગ્ય કામ કરવાનું તે કેમ શરુ કર્યું છે ?’ ત્યારે તે બોલી: હે પુત્ર ! તારા પિતા તને અને મને છોડીને દીક્ષા લેવાનો વિચાર

छरे छे. तेमना याइया गया पछी पति विनानी ऐवी भारे भाटे रे'टियो  
 डांतवानुं न आधी रहेशे." त्यारे पुत्रे इह्युं: मा, तुं भने डांतेला सुतरनी  
 डांटी दे, जेथी हुं ऐनाथी भारा पिताज्जेने ऐवा आंधी लठिं डे ते  
 इयांय नम न शके. " आइकुमारने पणु आणकनां आवां वयतो सांभ-  
 णीने मोह उत्पन्न थम गयो. ते विचारवा लाग्यो: अहो, मोहनी गति  
 ऐवी अइसुत छे डे जेतो पार नथी. तेणे आणकने इह्युं: "हे पुत्र !  
 जेतला तारथी तुं भारा पग आंधीश ऐटला वर्ष हुं घर अहार नही  
 जठिं; भाटे गणीने आंटा देजे. "

[सं०] ततो गणिता द्वादश बंधा अभवन् । तेन स द्वादश वर्षाणि पुनर्गृहे  
 रथारये इत्युक्त्वा अवाहयत् । अथ प्रतिज्ञापूर्णीभवनानन्तरं स वैराग्यपूर्णमानसो गर्तः  
 पश्चिमे प्रहरे इत्यचिन्तयत् भया प्राग्भवे मनसेव व्रतं भग्नं तेनाहमनार्यन्वं प्राप्नोमि  
 अत्र भवे पुनर्व्रतं गृहीत्वा मुक्तमतः का गतिर्मे भविष्यति इदानीमपि प्रव्रज्यां गृहीत्वा  
 तपसा आत्मानं जोधयामि इति विचिन्त्य प्रातःकाले श्रीमतीं पत्नीं स्वमुनं च संभाष्य  
 तदनुमतिं च लात्वा साधुलिङ्गं समादाय निर्मगत्वो गृहाच्चिर्यया ।

[हिन्दी] अब बालक ने आर्द्रकुमार के पैरो में आंटे देंने शुरू कियें तब आंटे  
 देंने देंते दो आंटे छूट गये । आर्द्रकुमार ने आंटे गिने तो बाहर निकलें हमने  
 बाहर वर्ष तक घर में फिर रहूंगा ऐसा कहकर उस बालक को बिदा किया [हिन्दी  
 २ पुस्तक में लिखा है कि वह बालक सूत की [ कोरडी ] गुंडी लेकर वहां गया  
 जहां आर्द्रकुमार सोये हुए थे । उसने वहां जा कर आर्द्रकुमार के दोनों पैर गम्भीर  
 घर बांधे और वह बोला, माँ ! किसी तरह की चिन्ता न करना । मैंने इतनी  
 इतना मजबूत बाधा है कि अब ये कहीं भी नहीं जावेंगे । यह बचन सुनकर आर्द्र-  
 कुमार ने विचार कि जितने आंटे यह बालक बाधना जाय बीच में न छूटें उनके  
 वर्ष में फिर घर में रहूंगा । ऐसा विचार किया ही था कि तब छूट गया ।  
 तब वह लटका टॉलकर माता के पास गया और आर्द्रकुमार ने तब गिनें तो वे  
 बाहर थे । अतः बाहर वर्ष तक घर में रहकर गृहस्थ धर्म चलाया ।

उस प्रतिज्ञा पूर्ण हुई यह जानकर उस दास नारी के अंतिम कर्म में निद्रा  
 भंग होने ने आर्द्रकुमार के मन में विचार उठा कि देखो ! मैंने चाकिन्तरी तब दो  
 संसारवर्षा गुरु में छोड़ दिया, अतः मैंने पूर्व भव में अपने चरित्र को न भूलना



દોષ લગાયા जिसके फल स्वरूप मेरा जन्म अनार्यदेश में हुआ । और अब भी इस भव में ब्रत लेकर तपस्या भंग की इससे कोन जाने मेरी कैसी गति होगी ।

अब मैं पुनः दीक्षा अंगीकार करके निरतिचार चाग्रि का पालन करूंगा तभी मेरी आत्मा का कल्याण होगा । अगर इस बात फिर चक्र गया तो मेरा पता लगाना भी मुश्किल होगा । ऐसा विचार कर प्रातःकाल होते ही तत्काल स्व स्त्री श्रीमती की तथा पुत्र की आज्ञा लेकर साधुपणा का महाव्रत अंगीकार करके विहार किया ।

[ગુ૦] હવે બાળકે આર્દ્રકુમારના પગ ફરતા સુતરના આંટા દેવા શરૂ કર્યા. આર્દ્રકુમારે આંટા ગણ્યા તો તે બાર નીકળ્યા. આથી ‘બાર વર્ષ સુધી ઘરમાં હજી રહીશ’ એમ કહીને બાળકને વિદાય કર્યો. (કોઈ કોઈ પુસ્તકમાં લખ્યું છે કે તે બાળક સુતરની કોકડી લઈને તેના પિતા સૂતા હતા ત્યાં ગયો. તેણે ત્યાં જઈને આર્દ્રકુમારના બન્ને પગ ભેગા કરીને બાંધ્યા અને બોલ્યો: ‘મા, હવે કોઈ જાતની ચિંતા કરીશ નહિ. મેં એમના પગ એવા મજબૂત બાંધ્યા છે કે તેઓ હવે ક્યાંય પણ જઈ શકશે નહીં. આ વચનો સાંભળીને આર્દ્રકુમારે વિચાર્યું કે, આ બાળક દે છે તે આંટા વચ્ચે ન તુટે ત્યાં સુધી હું ઘરમાં રહીશ. એવો વિચાર જ્યાં કર્યો ત્યાં જ તાર તુટી ગયો. ત્યારે તે છોકરો દોડીને તેની માતા પાસે જતો રહ્યો. આર્દ્રકુમારે તાર ગણ્યા તો બાર હતા. આથી બાર વર્ષ ‘સુધી ઘરમાં રહીને તેણે ગૃહસ્થધર્મ ચલાવ્યો. )

હવે પ્રતિજ્ઞા પૂરી થઈ એણે જાણીને એકવાર રાતના છેલ્લા પ્રહરમાં નિદ્રાભંગ થતાં આર્દ્રકુમારના મનમાં વિચાર ઊઠ્યો: “મેં મારી ચારિત્રરૂપી નાવને સંસારરૂપી સમુદ્રમાં છોડી દીધી, તેથી મારા જેવો મૂર્ખ કોણ હશે? હાય! હાય! મેં પૂર્વભવમાં મારા ચારિત્રવ્રતમાં મનથી દોષ કર્યો જેના ફળ રૂપે મારો જન્મ અનાર્યદેશમાં થયો. વળી આ ભવમાં પણ વ્રત લઈને તપસ્યાનો ભંગ કર્યો; હવે કોણ જાણે મારી કેવીયે ગતિ થશે!” હવે હું ફરીવાર દીક્ષા ગ્રહણ કરીને નિરતિચાર ચારિત્રનું પાલન કરીશ: તો જ મારા આત્માનું કલ્યાણ થશે. જો આ વખતે પણ સૂટી જઈશ તો મારો પત્તા લાગવો પણ કઠણ થઈ પડશે.”

આવા વિચાર કરીને પ્રાતઃકાળ થતાં તરત જ પોતાની સ્ત્રી શ્રીમતી

तथा पुत्रनी रत्न लभने तथा औघो, मुहुपत्ति वगेरे सामान लभ साधु-  
पशुलुं भडात्रत अंगीकार करीने विहार करी गयो।

[सं०] अथ राजगृहं व्रजन् अन्तराले चौर्यवृत्तिं कुर्वाणां स्व सामन्त-पञ्चगतीं  
दर्शयति । तैरप्युपलक्ष्य भक्त्या वन्दितः, स साधुस्तानवादीत् युष्माभिर्महापापहेतुरेपाजीविका  
किमाहताः ? तैस्तु हे प्रभो ! अस्मान् वञ्चयित्वा यदा त्वं पलायिष्ठास्तदादितो लज्जया  
भूयतेर्मुखं न दर्शयामः । तत्रैवान्वेषणे लग्नाः पृथ्वीं भ्रमन्तश्चौर्यवृत्त्यैव जीवामः । मुनिरु-  
वाच अयुक्ता वृत्तिर्भवद्भिगाहता, केनापि पुण्ययोगेनेदं मानुष्यकं प्राप्य स्वर्गापवर्गप्रदो  
धर्म एव सेव्यो, हिंसामत्यचौर्यान्नह्यपरीग्रहपरित्यागः कर्तव्यः ॥

[हिन्दी] इस तरह ग्राम से ग्राम विहार करते २ वह आर्द्रकुमार राजगृही में  
पहुँचे । इसी बीच रास्ते में उन्हें चौर्यवृत्ति करके जीवन यापन करने हुए अपने  
पाँचसौ सामन्त दिखाई दिये । सामन्तों ने भी आर्द्रकुमार को पहचानकर भक्ति में  
वन्दना की । तब साधु रूप आर्द्रकुमारने उनसे कहा, तुम लोग महापाप क-  
आजीविका क्यों स्वीकारा ? उमने कहा “हे प्रभो ! आप तो हमें ठगकर भग  
गये तब से लेकर आज तक हम लज्जा के घागण राजाओं मुख न दिग्ग मरें  
और आपको पृथ्वीतल पर टुंढने हुए हम चौर्यवृत्ति से जीविका चला रहे हैं ।”  
यह सुन मुनीने कहा, हे देवप्रियो ! उदर पूर्ति के निमित्त ऐसे रूप उमने तुम्हारे  
लिए शोभाजनक नहीं है । किसी अपूर्व पुण्य के योग ने मनुष्य जन्म मिलता है ।  
यह जन्म प्राप्त कर मानव को स्वर्ग एवं मोक्ष के देने वाले धर्म की सेवा करना  
चाहिये । अतः हिंसा, अमत्य, चोरी, द्रव्य-पग्निदहन परित्याग करना चाहिये ।

આ સાંભળીને મુનિએ કહ્યું: 'હે દેવપ્રિયો! પેટ ભરવા માટે આવાં કૃત્યો કરવાં એ તમને શોભાડપ નથી કેમકે અપૂર્વ પુણ્યના યોગથી આપણને આ મનુષ્યજન્મ મળ્યો છે. આ જન્મ પ્રાપ્ત કરીને માણસે સ્વર્ગ અને મોક્ષ આપવાવાળા ધર્મનું સેવન કરવું જોઈએ. અને હિંસા, અસત્ય, ચોરી, અશ્વહ અને પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો જોઈએ.

[સં૦] હે મદ્રા ! યુયં સ્વામિભક્તાઃ સ્થ । પ્રાગ્વદહં ગુપ્માકં સ્વામી, અતો મમૈવ માર્ગ પ્રપદ્યધ્વં । તતસ્તે પ્રોચુઃ પૂર્વં ત્વમસ્માકં સ્વામ્યેવામ્ભૂઃ સાંપ્રતં તુ ગુરુત્પતિ યતસ્ત્વયાસ્મભ્યં ધર્મો જ્ઞાપિતોઽધ્યાસ્માન્ દીક્ષયાનુગૃહાણ । તત આર્દ્રકુમારસ્તાન્ પ્રવ્રજ્ય તૈઃ સહિતઃ શ્રી મહાવીરં વન્દિતું રાજગૃહાભિમુખં યયૌ । માર્ગે ગચ્છતસ્તસ્ય ગોગલો ઽભિમુખો મિલિતો વિવાદં કર્તુ પ્રવૃત્તઃ । ભૂચરાઃ લેચરાશ્વાપિ સહસ્રશઃ આયાતાઃ કૌતુ-કાર્થિનસ્તસ્થુઃ ।

[હિન્દી] હૈ મદ્રા ! તુમ સ્વામી ભક્ત હો । પહિલે કી તરહ મેં તુમ્હારા સ્વામી હું, અતઃ મેરે હી માર્ગ પર ચલો, “દીક્ષા અંગીકાર કરો इससे तुम्हारा यह भव और परभव दोनों सुधर जायेंगे” । तब वे बोले पहिले आप ही हमारे स्वामी थे और अब गुरु हैं अतः आपने हमें धर्म का प्रतिबोध दिया है कृपा करके हमें दीक्षित किजिये । तब आर्द्रकुमारने उन सबको दीक्षा दी । फिर उन सबके साथ श्री महा-वीर स्वामी की वन्दना करने के लिए राजगृही की तरफ चले । रास्ते में उन्हें गंगुली पुत्र गोशाल मिला । वह विवाद करने को तत्पर हुआ, “गोशाल ने मोवा कि अगर मैं विवाद करके इनको मेरे मत में ले लूं तो मेरे धर्म की वृद्धि होगी ।” विवाद प्रवृत्त हुआ तब वहां आसपास के लोग, भूचर-लेचर आदि हजारों मानव कौतुक देखने को इकट्ठे हो गये ।

[ગુ૦] હે ભદ્ર લોકો ! તમે સ્વામીભક્ત છો. પહેલાંની જન્મ હું તમારો સ્વામી છું. માટે તમે મારા જ બતાવેલા માર્ગ પર આલો. દીક્ષા અંગીકાર કરો. એનાથી તમારો આ ભવ તથા પરભવ બંને મુંધરી જશે. ” ત્યારે તેઓ બોલ્યા : ‘પહેલાં આપ જ અમારા સ્વામી હતા; હવે અમારા ગુરુ છો, તમે અમને ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે તે હવે કૃપા કરીને અમને દીક્ષા આપો ’ ત્યારે આર્દ્રકુમારે તે સૌને દીક્ષા આપી. પછી તે સૌની સાથે મહાવીરસ્વામીને વંદના કરવા માટે

राजगृही तरङ्ग आल्या. रस्तामां तेमने भ'ण्डीपुत्र गोशालक भ'यो. ते विवाह करवा तैयार थयो. गोशाले विचार्युं 'के ले हुं' विवाह करी तेने भारा मतमां लछ लछ' तो भारा धर्मनी वृद्धि थाय. आ विवाह थवाती तयारी थछ त्यारे त्यां आसपासना लोके अने भूयर-भेयर भाणीओ वगेरे सो केछ लेवा भाटे ओकहां थछ गयां.

[सं०] अथ गोशालोऽवदत् 'भवतां तपःकष्टं दृश्येव, यतः शुभाशुभफलनां कारणं नियतिरेवास्ति । ततो मुनिश्चादीत् पौलप्यमपि कारणं मन्यन्व । यदि सर्वत्र नियति-मेव कारणं मन्यसे तर्हि अभीष्टसिद्ध्यर्थं सर्वाः क्रियाः कृथा प्रमज्येन्न । तथाहि हे निय-तिवादिन् ! मर्षदा स्वरयाने एव किं न तिष्ठसि ? भोजनावसरे च भोजनाद्यर्थं च कथ-मुद्यमं करोषि ? एवं स्वार्थसिद्धये नियतिवत्पौरुषमपि साध्वन्ति । अर्थमिष्टौ नियतेगपि पौलप्यमाधिक्यं भजते ।

[हिन्दी] तब गोशाले ने कहा, हे आर्द्रकुमार ! [“महावीर स्वामी में क्या ग्यना है, पहिले तो ये साधु धर्म को ठीक से पालते थे अब तो ढोंगी हो गये हैं पहिले वे अकेले रहते थे, किसी से बोलते नहीं थे, अब तो परिषद (सभाएं) इकट्ठी करने हैं।” यह सुनकर मुनिने कहा, “अरे गोशाल ! ऐसा मत कहो, पहिले तो भगवान छत्ररथ थे और अब केवली हो गये हैं, तीर्थर नामकने उदर हुए हैं, अतः सभा में बैठकर देशना देने हैं, और महान् उपकार करने हैं, भाव ने तो वे अकेले ही हैं। तू बड़े पुरुषोंके लिए अवर्णवाद मत बोल।”] तब गोशाल ने क्या कि अरे ! आर्द्रकुमार ! तुम कृथा ही तपस्या का कष्ट उठाते हो क्योंकि मुनामुनका को देने वाली नियति (होतहार) ही है। अतः होतहार को मान कर करने तो सारी क्रियाओं के कष्ट से मुक्त हो जाओगे। उद्यम का क्या काम है। तब मुनि ने क्या कि हे नियतिवादी ! अगर तुम उद्यम को नहीं मानकर सर्वत्र नियति को ही मानते हो तो अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिए सारी क्रियाएँ पालन ही करने की “तू गौड में गोचरी को क्यों जाने हो” मर्षदा एक ही स्थान पर बने, नहीं रुकते : भोजन के समय मुख में गेटी पहुंचाने का उद्यम क्यों करने हो गेटी का बंधन मन से क्यों चवाने हो, अपने हाथ दिना उद्यम के पेट भर जायगा- फिर रुकने पर नगर में रुकने क्यों काया है क्योंकि होतहार तो होती है।

છે ? પહેલાં તો તેઓ સાધુ ધર્મને ભરાભર પાળતા હતા અને હવે તો ઢાંગી થઈ ગયા છે. પહેલાં તેઓ એકલા રહેતા હતા, કોઈની સાથે બોલતા નહોતા અને હવે તો સભાઓ ભરે છે. આ સાંભળીને મુનિએ કહ્યું : ‘અરે ગોશાલ, એવું ન કહો. પહેલાં તો ભગવાન છદ્મસ્થ હતા અને હવે તો કેવળી થઈ ગયા છે. તીર્થંકર નામકર્મ ઉદય થયું છે માટે તેઓ સભામાં બેસીને ઉપદેશ આપે છે, અને લોકો ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે. ભાવથી તો હજી પણ તેઓ એકલા જ છે. તું મહા-પુરુષોને માટે અવર્ણવાદ ન બોલ. ]

ત્યારે ગોશાલે કહ્યું : ‘આઈંકુમાર, તમે નકામા તપસ્યાનું કષ્ટ ઉઠાવો છો; કારણ કે શુભાશુભ ફળને દેવાવાળી નિયતિ જ છે. માટે નિયતિને માનીને જ ચાલો તો બધાં દુઃખોથી મુક્ત થઈ જશો. ઉદ્યમ કરવાનું શું પ્રયોજન છે ?’

ત્યારે મુનિએ કહ્યું કે હે નિયતિવાદી ! તમે ઉદ્યમને ન માનતાં બધે ભાગ્યને જ માનો છો તો પછી તમારી ઇચ્છેલી વસ્તુઓ મેળવવા માટે પ્રયત્નો નકામા જ કરો છો. તમે ગામમાં ગોચરી માટે શા માટે જાઓ છો ? હંમેશાં એક જ સ્થાન પર કેમ બેઠા રહેતા નથી ? ભોજન કરતી વખતે મોઢામાં રોટલી પહોંચાડવાનો પ્રયત્ન શા માટે કરો છો ? રોટલીનો કાળિયો મોઢામાં શા માટે આવો છો ? પોતાની મેળે જ પ્રયત્ન કર્યા સિવાય પેટ ભરાઈ જશે. વળી તમે આ તમારું માથું શા માટે મૂંડાવ્યું છે ? થવાનું છે તે તો થશે જ.

[હિન્દી] અતઃ સ્વાર્થસિદ્ધિ કે લિષ્ટ નિયતિ કી અપેક્ષા ઉદ્યમ કરના ટીકા હૈ । ચિના મહેનત કે કોઈ કામ નહોં વનતા, જિમ કામ કો હમ કરલે ઉમકા ફલ હી નિયતિ હૈં । વહ કાર્ય મી ઉદ્યોગ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં । જૈસા ૨ શુભાશુભ કર્મ વન્ધન હોતા હૈં ઉસી કે અનુમાર પાપ ઓર પુણ્ય કા ઉદય હોતા હૈં । યે કર્મ હી આશ્રવ તથા મંત્ર કે કારણ વનકર વન્ધતે હૈં, અગર ઈસા નહોં તો ‘મો જાના, વેટના, ચલના, હેમના’ ક્યાદિ ક્રિયાઓં કા નાશ હો જાયેગા । અતઃ નિયતિ સે મી ઉદ્યમ વલવાન હૈં ઈમા માનના ચાહિયે । ”

[ગુરુ] માટે, સ્વાર્થસિદ્ધિને માટે ભાગ્યની ઉપર આધાર રાખવા કરતાં ઉદ્યમ કરવો જ ઠીક છે. ચિના પ્રયત્ન કોઈ કામ થતું નથી. આગળ

जे काम करीये तेनुं इण, ऐ न लाज्य छे. ते काम पणु उद्योगथी न  
उत्पन्न थाय छे. जेम जेम शुभाशुभ कर्मनुं अंधन थतुं नय छे तेम  
तेम पाप अने पुण्यनो उदय थाय छे. आ कर्मो न आश्रय अने संव-  
रतां करण थछने अंधन आधे छे. जे ऐम न होय तो सूबुं, भेसबुं,  
आलबुं, हसबुं वगेरे क्रियाआनो नाश थछ नय. भाटे लाज्य करतां  
पणु उद्यम अणवान छे, ऐम भानबुं जेधये.

[मं०] तथाहि-आकाशात्पानीयं पतति परं भूस्वननादपि तद्भवेत् । यतो नियति-  
वर्लीयमी परं नियनेगपि पौण्यं वलीयः एवं न मुनिर्गोशालं निरुनगीचने नदा जय जय  
जन्दं कुर्वद्भिलोकैः एवं खेचगद्यंश्च तस्य महामुनेर्वह्नी प्रजया कृता । तत्र आर्द्र-  
ऋषिर्हस्ति-नापसाश्रमममीपे आययौ तत्रस्थास्तापसा एकं महान्तं हस्तिनं हत्या तन्मांसं-  
भुज्जाना वहन् दिवमान व्यतीयन्ति । ते चैवमच्युः एकस्मैव हस्तिनो हननं कम् । यत्र  
एकजीवघातेन भूयान् कालोऽतिगम्यते । मृगतिनिगमनार्थमर्धान्विधं वरुणि न तथा  
'तस्मात्तद्भक्षणं न युक्तं बहुपापमद्भावान्'

[हिन्दी] देवो ! आकाश से भी जल गिरता है परन्तु पृथ्वी गिरने से उदम  
से भी जल प्राप्त होता है, यह ठीक है कि नियति चलवान है फिर भी नियति  
से पौण्य चलवान हैं, इस तरह की अनेकानेक युक्तियों से आर्द्रऋषि ने गोशाल को  
निम्नतर कर दिया तब आकाश से जय जयकार हुआ और मुनियों द्वारा कि  
“आर्द्रकुमार मुनि जीने और गोशाल द्वारा ” तब वहां उपस्थित सभी लोगोंने मुनि  
की खूब प्रशंसा की । इस तरह गोशाल को हरा कर मुनी हस्ति नापसा से आश्रम  
(मठ) के पास आये । वे हस्ती नापसा इस मन को प्ररूपणा कर रहे थे कि शत्रु  
आदि में हजारों वणों में हजारों जीव होते हैं उनके भक्षण करने से उपमं अनेकों  
जीवों की हत्या का पाप लगता है । इसमें तो यह अच्छा है कि एक वारी को  
मांसकर खा ले तो एक जीव हत्या का ही पाप लगेगा । इस तरह ने अहिमा की  
उपरी प्ररूपणा थी । वे कहते थे, कि मृग, तीर, मत्स्य आदि मत्स्य व पक्ष  
आदिका भक्षण करना ठीक नहीं है क्योंकि अपने बहुत पाप लगता है ।

પ્રયુક્તિવાળી દલીલોથી આર્દ્રકુપિએ ગોશાલને નિરુત્તર કરી દીધો, ત્યારે આકાશમાંથી જ્ય જ્યકાર થયો અને સંભળાયું કે “આર્દ્રકુમાર મુનિ હતા અને ગોશાલ હાર્યા.” ત્યારે ત્યાં હજાર રહેલ સ્ત્રીવર્ગે મુનિની ઘણી પ્રશંસા કરી. આ પ્રમાણે ગોશાલને હરાવીને મુનિ હસ્તિ તાપસના આશ્રમે આવ્યા. આ હસ્તિ તાપસ એવા મતનો પ્રચાર કરતા કે અનાજના હજારો કુળોમાં હજારો જીવો હોય છે. તેનું ભક્ષણ કરવાથી હજારો જીવોની હત્યા કરવાનું પાપ લાગે છે. એના કરતાં તો એક હાથીને મારીને ખાઈ લઈએ તો એક જ જીવની હત્યા કરવાનું પાપ લાગે. આથી રીતની અહિંસાનો તે પ્રચાર કરતો હતો. તેઓ કહેતા કે હરણ, તેતર, માછલાં વગેરે મારવાં અને અનાજનું ભક્ષણ કરવું એ ધરાધર નથી, કારણ કે એમાં ઘણું પાપ લાગે છે.”

[સં૦] તदा च ते मिथ्याधर्मनिष्ठास्तपस्विनो मारणार्थमेकं महामतङ्गजं वन्युः। यत्र शृङ्खलवद्धः स गज आसीत्तेनैव मार्गेण करुणानिधिः स महर्षिर्जगाम। तदा स हस्ती मुनिपञ्चशतीयुतं बहुभिर्जनैर्वन्द्यमानं तं महर्षिं दृष्ट्वा लघुकर्मत्वादित्यचिन्तयत्। अहमप्येतं मुनिं वन्देयं यदि वद्धो न भवेयम्, वद्धस्तु किं कुर्याम्? एवं चिन्तयत-स्तस्य महर्षेर्दर्शनात्सद्योऽयःशृङ्खला व्यशीर्यत। अथ स हस्ती निरर्गलः सन् तं मुनिं वन्दितुमभ्यागात् तदा लोका एष मुनिर्हतो हत इति बुवाणाः पलायंचक्रिरे।

[હિન્દી] इस तरह यह मुनी हाथी को मारने से ‘हस्तीतापस’ ऐसा विख्यात हुआ। एक बार मिथ्याधर्म निष्ठा में निमग्न उस ‘हस्ती तापस’ ने एक जवान हाथी भक्षण करने के लिए बांध कर रखा। इधर आर्द्रकुमार पांचसौ मुनियों समेत उधर से जा रहे थे उस हाथी के लघु कर्म अवशिष्ट थे अतः उस हाथी ने विचार किया कि मैं अगर वन्दन में न होता ऐसे भव्य मुनीका वन्दन अवश्य कर्ता। अतः वन्दन में पड़ा हुआ हूं अतः क्या करूं? इस तरह वह चिन्तना कर रहा था की उसकी लोह शृङ्खलाएं टूट गयी। अतः हाथी शृङ्खला रहित हुआ, वह मुनीराज को नमस्कार करने के लिए आया। तब आम्रवाम के लोग परस्पर यह कहते हुए भागने लगे कि यह हाथी आज मुनीराज को मारेंगा।

[ગુરુ] આ પ્રમાણે આ મુનિ હાથીને મારવાનો ઉપદેશ કરતા હતા નથી “હસ્તિ તાપસ” ના નામની પ્રખ્યાત થયા હતા. એક વાર મિથ્યા

धर्मनिष्ठाभां निभज्ज यथेसा ते हस्ति तापसे ऐकं लुवान् हाथीने  
भारीने आवा भाटे भांथीने राजयो हतो, आ आलु आर्द्रकुमार पांचसो  
मुनिओ साथे त्यांथी जठ रखा होता, हाथीना लघुधर्म भागवतां भाषी  
हतां तेथी ते हाथीओ विचार क्यो के जे हुं अधनभां न होत ते  
आवा भव्य मुनिने जर वंदन करत, पण अधनभां पण्यो हुं ऐतसे  
शुं थाय ? आथी रीते ते विचार करतो हतो त्यां तेनी दोहानी सांकणो  
तरी गठ, हाथी न्यारे मुक्त थयो अने मुनिराजने वंदन करवा भाटे  
आव्यो, त्यारे आलुआलुना दोडो अंदर अंदर ऐम डोहता डोहता  
भागवा लाग्या के जर आ हाथी मुनिराजने भारी नाभशे.

[मं०] मुनिस्तथैव तस्यौ गजोपि नम्रीकृतकुम्भगन्धः गतं मुनिं नमति स्म.  
पुनः शृङ्गादृढं प्रमार्गं मुनिपादौ स्पृष्ट्वा परमं सुखं प्राप । ततः न गजः समुदाय  
भक्त्या मुनिं पश्यन् अव्याकुलः सन् अग्न्यानीं प्रविशेज । तदात्पद्भुतं तन्प्रभावे नृ-  
वातिशेषं प्राप्तान्ते तापमा अपि आर्द्रकुमारसाधुना प्रत्यबोधयन् । ततस्तन्प्रेषितार्थं  
श्री-रीगमचमरणं गत्वा दीक्षां जगृहः ।

[हिन्दी] मुनी आर्द्रकुमार उमी नमय कायोत्सर्ग घन में रहे ही हैं । तभी  
भी मुनियों के पास आकर अपना कुंभखल (सस्तक) नकार नकार करते-करते  
गंदे को लम्बी कर मुनीराज को बांदकर प्रसन्न हुआ । फिर वह हाथी वहाँ में उ-  
पर प्रसन्न चित्त से जंगल में चला गया । इस अद्भुत चमत्कार को देखकर हाथी  
कुपित वे तपस्वी मुनि के पास आकर श्राद्ध करने के लिये हुए और मुनि ने भी  
उन्हे हेतु, बुद्धि, प्रमाण आदि से प्रतिबोध दिया । तदनन्तर वे सब तपस्वी श्री  
गदाधर स्वामी के पास मुनि द्वारा भेजे गये । और वहाँ उन्होंने दीक्षा ली ।



ओने मुनिओ महावीररवाभी पासे भोइल्या. त्यां सोंओ दीक्षा अंगी-  
कार करी.

[सं०] अथ श्रेणिकराजाऽपि तथा गजमोक्षणं तापमप्रतिबोधं च श्रुत्वाभयकुमार-  
युक्तस्तत्रागात् । मुनिर्भक्त्या वंदमानं राजानं धर्मलाभाजिपं ददौ । अथ शुद्धभूतले आसीनं  
मुनिं राजा पप्रच्छ, हे भगवन् ! हस्तिमोक्षणान्मम महदाश्चर्यं समजनि । मुनिरुच्ये हे  
राजन् ! हस्तिमोक्षणं न दुष्करं किन्तु आमन्तनुपाशमोक्षणं मां दुष्करं प्रतिभासते ।  
राज्ञा पृष्ठं स्वामिन् ! तत्कथं ? तदा मुनिः सकलामपि स्वां कथां कथयामास । तत  
आर्द्रकुमारोऽभयं भाषितवान् त्वं मम निष्कारणोपकारी धर्मब्राधमोऽभूः । हे मित्र !  
त्वत्प्रेषिताहं प्रतिमादर्शनादहं जातिस्मरणं प्राप्य जिनधर्मानुरक्तोऽभवम् ।

[हिन्दी] अब श्रेणिकराजा भी उसी तरह से हाथी का मोक्ष और तापसोका  
प्रतिबोध सुनकर अभयकुमार के साथ मुनि (आर्द्रकुमार) का वन्दन करने आये। उन्होंने  
भक्ति युक्त चित्त से मुनि को वन्दन किया। मुनि ने उनको धर्मलाभ की आशीष दी।  
फिर शुद्ध भूतल पर बैठे मुनि को राजाने पूछा, “हे भगवन् ! हाथी के मोक्ष को  
सुनकर मुझे महान् आश्चर्य हुआ है। मुनि बोले, “हे राजा ! हाथी को छुड़ाने का  
कार्य इतना कठिन नहीं है जितना कि कच्चे खत के तारों को छुड़ाना कठिन है।  
राजाने पूछा महाराज यह कैसे ? तब मुनि ने अपनी सारी कहानी कह सुनायी।  
फिर आर्द्रकुमार ने अभयकुमार से कहा, “आप मेरे बिनाकारण के उपकार करने  
वाले धर्म भाई हो। हे मित्र ! तुम्हारे द्वारा भेजी गई जिन भगवान की प्रतिमा के  
दर्शन से ही मुझे पूर्वभवों का बोध हुआ और मैं जिन धर्म में अनुक्त हुआ।

[गु०] एवे अलिङ्क राज् पण् ओ न प्रभाण्ण् हाथीना भोक्ष तथा  
तपस्वीओना उपदेश सांभगीने अभयकुमारनी साथे मुनि आर्द्रकुमारने  
वंदन करवा आवा. तेभण्ण् भक्तियुक्त चित्तथी मुनिने वंदन कथुं.  
मुनिओ नेभने “धर्मलाभ” नी आशिष आपी. पच्छी शुद्ध भवि पर  
ओला मुनिने राज्ओ पूछथुं: ‘हे भगवन् ! हाथीना भोक्ष विपे सांभ-  
गीने भने वण्ण् आश्चर्य थयुं छे. मुनि ओइया: ‘हे राज्, हाथीने छोडा-  
वचानुं काम् ओट्ठुं कइण् नथी ओट्ठुं कइया सुतरना तारेथी छूट्ठुं  
कइण् छे.’ राज्ओ पूछथुं: ‘महाराज्, ओ देवी रीने ?’ त्पारे मुनिओ  
नेने पानानी आणी कइवाणी कथी सांभगावी. पच्छी आर्द्रकुमारे अभय-

કુમારે કહ્યું કે “આપ મારા ઉપર વિનાકારણ ઉપકાર કરવાવાળા મારા ધર્મભાઈ છો. હું મિત્ર; તમે મોકલેલી જિન ભગવાનની પ્રતિમાના દર્શનથી જ મને પૂર્વભવનું જ્ઞાન થયું અને હું જિનધર્મમાં અનુરક્ત થયો.

[સં૦] દૃઢગોપાયં વિના મમ જનધર્મપ્રાપ્તિઃ કુતઃ । અનાયત્વમહાપંકે નિમગ્નોહં ત્વયોદ્ધૃતસ્તત્પ્રસાદાદેવ ચ મે ચારિત્રાવાપ્તિર્જાતા । તતઃ શ્રેણિકામયકુમારદયઃ નર્વેણિ લોકાન્તમૃષિં વંદિત્વા તુષ્ટમાનસાઃ સ્વસ્થાનં યયુઃ । તતો મુની ગજગૃહપુગમ્યર્ણે મમ-વસૃતં શ્રીવીરસ્વામિનમભિવંદ્ય તત્ચરણકમલસેવયા સ્વકીયં જન્મ મફલીકૃત્ય ક્રમેણાયુઃક્યે શિવં પ્રાપ । [ઈતિ શ્રી-જિનદર્શનમાહાત્મ્યે આર્દ્રકુમારદૃષ્ટાન્તઃ ]

[હિન્દી] इस तरह के उपाय के बिना मुझे जैन धर्म की प्राप्ति कैसे होती । मैं अनार्यत्व के महान् कीचड़ में पड़ा हुआ था, आपने ही वहां से मेरा उद्धार किया. तुम्हारी कृपा से मुझे चारित्र की पुनः प्राप्ति हुई । इस तरह नारी कथा गुनरर श्रेणिक राजा और अभयकुमार आदि सब आनन्द कों प्राप्त हुए, मुनि का घन्टन रर प्रमन्नचित्त से अपने २ स्थान को चले गये । तदन्तर स्वयं आर्द्रकुमार मुनि ने गज-गृही में जा कर महावीरस्वामी के चरणों मे घन्टन किया । उनके चरणों की सेवा से अपने जीवन को सफल बना कर क्रमशः उस के समाप्त होने पर मोक्ष को प्राप्त हुआ । (यह श्री जिनदर्शन माहात्म्य को बताने वाला आर्द्रकुमार का दृष्टान्त इस हुआ)

[શુ૦] આ બીજાના આપે કરેલા ઉપાય વિના મને જનધર્મની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થાત? હું અનાયત્વના મહાન કીચડમાં પડેલો હતો. આપે જ ત્યાંથી મારા ઉદ્ધાર કર્યો છે, અને આપની જ કૃપાથી મને ચારિત્રની પુનઃ પ્રાપ્તિ થઈ છે. ”

[ श्री जिनदर्शन भाषात्म्यने दर्शयितुं आर्द्रकुमारनुं दृष्टान्तं पूरुं यथुं. ]

विशेष :—

इस लिए हे भव्यो ! जो शुद्ध भावना से जिन भगवान की प्रतिमा का निरन्तर दर्शन करेगा वह आर्द्रकुमार की तरह अनन्तानन्त शाश्वत सुख को प्राप्त होगा ।

जिनेश्वर भगवान् की प्रतिमाजी के दर्शन से और भी कई लोग प्रतिबोध को प्राप्त हुए हैं । इनमें “ सिज्जंभव भट्ट ” की कथा श्रोतव्य है :—

राजगृही नगरी में एक सिज्जंभव नाम का ब्राह्मण रहता था । वह वैसे तो पढ़ा लिखा था परन्तु अज्ञान वश पाप दोष को नहीं जानता था । वह अपने धर्म को जानकर निरन्तर हवन किया करता था । एक बार अवसर देखकर जम्बू-स्वामी के शिष्य प्रभवस्वामी ने विचार किया कि मेरे पाट पर बैठने योग्य कौन हैं ? उन्होंने श्रुत-बोध से यह बात समझ ली और सिज्जंभव ब्राह्मण को इसके योग्य समझा । अब सिज्जंभव को प्रतिबोध देना आवश्यक था । अतः उन्होंने अपने २ साधुओं को उस ब्राह्मण के घर भेजा और कहा कि तुम लोग उसके दरवाजे पर जा कर जोर से संस्कृत भाषा में “ अहो कष्टमहोकष्टं तत्त्वं न ज्ञायते परं ” ऐसा कहना । ( अरे बड़े दुःख की बात है की महान तत्त्व की वस्तु को नहीं जानता ) इस तरह से साधु कह कर उसके दरवाजे से वापस लौट आये । ब्राह्मण ने जब यह सुना तो उसे बहुत क्रोध आया । उसने कहा, कि मुझ से ज्यादा तत्त्व को जानने वाला कौन हैं ? और वह क्रोधावेश में इन साधुओं के पिछे दौड़ा । वह वहां पहुंचा जहां प्रभवस्वामी विराजमान थे वहां उसने प्रभवस्वामी से कहा “ तत्त्व क्या वस्तु है ? ” “ गुरु ने कहा, “ जीवहत्या न करना, यही तत्त्व है, तब वह फिर बोला, “ आप मुझे तत्त्व नहीं बताओं तो मैं इसी समय आपका सिर काट दूंगा । ”

[ गु० ] भाटे हे भव्य भव्यो ! जे शुद्ध भावनाथी जिन भगवाननी प्रतिमानुं निरन्तर दर्शन करशे ते आर्द्रकुमारनी जेभ अविचल अने अनन्तानन्त शाश्वत सुखने पावशे.

जिनेश्वर भगवाननी प्रतिमाना दर्शनथी भीज पण धणा दोडाने अनिप्राध यथा छे, जेभां “ सिज्जंभव भट्ट ” नी कथा सांभजवा लेवी छे.

રાજગૃહી નગરીમાં એક સિદ્ધાન્તવાદ નામનો બ્રાહ્મણ રહેતો હતો. તે આમ તો ભણેલો-ગણેલો હતો, પણ અજ્ઞાનવશ પાપકોષને બાળતો નહોતો. તે રાજ ધર્મ સમજીને હવનક્રિયા કર્યા કરતો હતો. એકવાર અવસર બેઠાને જમ્બૂસ્વામીના શિષ્ય પ્રભવરવામીએ વિચાર કર્યો કે હવે મારી પાટ ઉપર બેસવાવાળો કોણ છે ? તેમણે શ્રુતબોધથી આ વાત સમજ લીધી અને સિદ્ધાન્તવાદ બ્રાહ્મણને તેણે યોગ્ય બોલ્યો. હવે સિદ્ધાન્તવાદને ઉપદેશ દેવો જરૂરી હતો. તેથી તેમણે પોતાના બે સાધુઓને તે બ્રાહ્મણને ઘર મોકલ્યા અને કહ્યું કે તમે લોકો તેના ઘરના દરવાજે બેઠાને બેરથી જૂઠા પાડીને સરકૃત ભાષામાં “ અહો કષ્ટમહોકષ્ટ. ત્વ ન જાયતે પનં ” ( અરે, દુઃખની વાત છે કે ખરા તત્ત્વની વસ્તુને કોઈ બાળતું નથી. ) એમ કહેજો અને પછી ચાલ્યા આવજો. આ પ્રમાણે તે સાધુઓ કહીને તેના દરવાજેથી પાછા ચાલ્યા આવ્યા.

બ્રાહ્મણે જ્યારે આ સાંભળ્યું ત્યારે તેને ઘણો કંઈ આવેશ. તે કહ્યું : ‘ મારા કરતાં તત્ત્વને વધારે બાળવાવાળો બીજો કોણ છે ? ’ મોક્ષવેશમાં આવીને તે સાધુઓની પાછળ દોડ્યો, અને ત્યાં પ્રભવરવામી બિરાજમાન હતા ત્યાં આવ્યો. તેણે રવામીને પૂછ્યું : “ તત્ત્વ ગું વસ્તુ છે ? ” ગુરુએ કહ્યું : ‘ જીવહત્યા ન કરવી એ જ ખરા તત્ત્વ છે. ’ તેણે કહ્યું : ‘ તમે મને તત્ત્વ નહિ બતાવો તો આજ દિવસે હું તમને માથું ધરથી બુદ્ધ કરી નાખીશ. ’

સ્વીકાર કરી । ફિર ગુરુજી કે પાસ વાસ્તુ અંગ પડે । ગુરુને આચાર્યપદવી સે સિજ્જન-  
ભવ કો અલંકૃત કિયા । પ્રભવ સ્વામી કાલક્રમ સે સમાધિ લેકર દેવ લોક કો પ્રાપ્ત  
હો ગયે । ઇધર પીછે સે ઉસ ગર્ભવતી સ્ત્રીકે વાલક ઉત્પન્ન હુઆ । ઉમકા નામ  
“ મનક ” દિયા ગયે । લડકા ધીરે ધીરે આઠ વર્ષ કા હુઆ । એક દિન વાલક  
‘ મનક ’ અપને સાથિયોં કે સાથ સેલ રહા થા તો કુછ સાથી ઉમસે લડ પડે ।  
ઇન મેં સે એક લડકે ને કહા ! અરે વિના વાપ કે, તું મુઝે કયોં મારતા હું । યહ  
વાત સુનકર મનક માં કે પાસ આયા, ઓર ચોલા-માતાજી ! “ મેરે પિતા હૈ યા  
નહી ? ” “ માં રોતી હુઈ ચોલી, વેટા, વાપ વિના વાલક કેસે હો, “ વાલક ચોલા  
માં ! પિતાજી કહાં ગયે હું ? માં ચોલી, વેટા ! તું જવ ગર્ભ મેં થા તવ તુમ્હારે  
પિતાજી કો એક જૈન સાધુ ને ભ્રમ મેં ઢાલ દિયા ઓર અપને સાથ લે જા કર  
સાધુ બના દિયા । અમી મી એસા સુના જાતા હું કિ તુમ્હારે પિતા સાધુઓં કે  
“ માલિક ” હૈ । ” “ મનક ને જવ યહ સવ સુના તોં માતા કી આજ્ઞા લેકર વહ  
પિતા સે મિલને કે લિએ નિકલા ।

[ગુ.] ત્યારે ગુરુએ કહ્યું : ‘ હે મૂર્ખ, તત્ત્વ તો તારે ઘેર જ યજ્ઞના  
સ્તંભની નીચે છે. ’ આટલું સાંભળતાં તરત જ, એજ પગે પાછો પોતાને  
ઘેર પહોંચ્યો. ઘેર આવ્યો અને તેણે યજ્ઞના થાંભલાને ઉખાડી નાંખ્યો.  
તેની નીચેથી ભગવાન શ્રી શાન્તિનાથ સ્વામીની પ્રતિમા નીકળી, જેને  
જોઈને તેને ઘણું આશ્ચર્ય થયું. તે પાછો ગુરુજીની પાસે આવ્યો અને  
ગુરુજીને તે પ્રતિમા દેખાડી. ત્યારે ગુરુએ કહ્યું : બુદ્ધો, જેવી શાન્ત મુદ્રા  
આ પ્રતિમાની છે તેવી શાન્ત મુદ્રામાં રહેવાનું તમે સ્વીકાર કરે તો  
તત્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય. સિજ્જનભવે પ્રતિમાનું દર્શન શાન્તચિત્તથી કર્યું  
અને દર્શન કરતાં જ તેને પ્રતિષેધ (જ્ઞાન) થઈ ગયો. એનું મિથ્યાત્વ  
નષ્ટ થઈ ગયું. અને તે મિથ્યાત્વ છોડીને પોતાને ઘેર આવ્યો. એણે  
પોતાની ગર્ભવતી સ્ત્રીને કહ્યું કે ‘ હવે હું દીક્ષા ગ્રહણ કરું છું. તું હવે  
ઘર સંભાળજે. ’ એમ કહીને તેણે દીક્ષા ગ્રહણ કરી. અને તે પછી ગુરુ-  
જીની પાસે જઈને શાસ્ત્રનાં બારે અંગનું અધ્યયન કર્યું. ગુરુજીએ પણ  
તેને આચાર્યપદવીથી અલંકૃત કર્યા. પ્રભવસ્વામી કાલક્રમે સમાધિ લઈને  
દેવલોકને પ્રાપ્ત થયા.

અહિં પાછળ તે ગર્ભવતી સ્ત્રીને પુત્ર અવતર્યો જેનું નામ “ મનક ”  
પાડવામાં આવ્યું. છોકરો ધીરે ધીરે આઠ વર્ષનો થયો. એક દિવસ

आणक 'मनक' पोताना साथीओ साथे रभतो હતો તેવામાં કેટલાક સાથીઓ તેની સાથે લડી પડ્યા. તેમાંથી એક આણકે કહ્યું: "અરે ન બાપા ! તું મને શું મારતો હતો ?" આ વાત સાંભળીને મનક પોતાની માની પાસે આવ્યો અને બોલ્યો 'માતાજી, મારે પિતા છે કે નહીં ?' મા રેતી રેતી બોલી: 'બેટા, બાપ વિના આણક કેમ થાય ?' આણકે કહ્યું: 'તો પછી મારા પિતાજી ક્યાં છે ?' મા બોલી: 'બેટા, તું જ્યારે ગર્ભમાં હતો ત્યારે એક જૈન સાધુએ તેમને બ્રમમાં તાબી દીધા હતા અને સાધુ બનાવીને તેમને પોતાની સાથે લઇ ગયા હતા. હવે સાંભળ્યું છે કે તારા પિતા તો સાધુઓના મોટા ગુરુ છે.'

મનકે જ્યારે આ બધું સાંભળ્યું ત્યારે તે માતાની રુદ્ધ લડને પોતાના પિતાને મળવા નીકળ્યો.

[હિન્दी] अपने सुना कि गुरु सिज्जंभवसरीजी पांउलीपुर में विषय में हैं। -- मनक पांउलीपुर गया। वह वहाँ के नगर द्वार पर बैठा। गुरु बाहर से मगरम में से कि दरवाजे पर ही इस बालक से मिले। मनक ने उन साधु को दन्तन में देखा कि बताइये इनमें सिज्जंभव सरीजी कौन हैं। साधुओं ने कहा यहां ही हैं: दन्तन में उपयोग दृष्टि से गुरु ने अपने पुत्र को पहचान लिया। वे उसे उपाश्रय में ले लिये। उन्होंने उससे पूछा, "तू यहां क्यों आया है ?" मैं आपसे मिलने के लिए आया हूँ। " तब सिज्जंभवसरी ने कहा, "अगर तू दान्तविक मिलाप करना चाहता है तो तुझे आश्रयो का न्याय करना पड़ेगा। तब 'मनक' ने गुरु मगरम में प्रविष्टोप पास दीक्षा स्वीकार की। दूसरे साधुओं को भीतर जा भेद मालूम नहीं हुआ। उन्हें यह भी पता न चला कि मनक स्वयं सरीजी का पुत्र हैं। अब गुरु ने उपयोग दृष्टि से देखा तो उसे मालूम हुआ कि मनक की आश्रम निर्देशना ही प्रमाण है। यह जानकर उन्होंने सब साधुओं के सामने साधुओं के आचरण की बात भी साधुओं से युक्त " दन्तविकालिन दन्त " बताया। यह सब सुन कर मनक ने भीतर सीमाश। तदनन्तर मनक ने चान्द्रि धर्म की आश्रमवासीन मन्त्रिने मन्त्र दिया और वह देवतोर को प्राप्त हुआ। अपने अन्तर्गत की प्रकृति का उद्घाटन देवतोर सरीजीकी आश्रम में हुआ था मनें। यह देवतोर का दन्तन मन्त्र मनें 'मगरम ! आप जैसे दिव्य पुरुष भी नगर के वसीन ने अपने ने के वसीन मनें होने तो आदर्श की बात क्या : गुरु ने कहा, 'मनक' नहीं है। मन्त्र

આશ્ચર્ય કી વાત હૈં, “ સાધુ બોલે, મહારાજ ! કયા આશ્ચર્ય હૈં ? તવ ઘરિજીને કહા, “ઇસ સાધુને સ્વલ્પ દિનૌં મે હી અપની આત્મા કા કલ્યાણ કર દિયા ।”

ઇતના કહ કર મનક કા સારા પિછલા વૃત્તાન્ત કહ મુનાયા ।

[ગુ] તેણે સાંભળ્યું કે ગુરુ સિજ્જંભવસૂરિજી પાડલીપુરમાં વિચરી રહ્યા છે. મનક પાડલીપુર ગયો, અને નગરના દ્વાર પર બેસી ગયો. ગુરુજી બહારથી પાછા આવી રહ્યા હતા. દરવાજામાં જ તે બાળકને મળ્યા. મનકે સાધુઓને વંદન કરીને પૂછ્યું કે કહે, આમાં સિજ્જંભવ-સૂરિજી કોણ છે ? સાધુઓએ કહ્યું ‘આ રહ્યા.’ પછી શ્રુત ઉપયોગ દષ્ટિથી ગુરુએ પોતાના પુત્રને ઓળખી લીધો. તે તેને ઉપાશ્રયમાં લઇ આવ્યા. તેમણે તે બાળકને પૂછ્યું : ‘તું અહીં શા માટે આવ્યો છે ?’ બાળક બોલ્યો : ‘હું તમને મળવા આવ્યો છું.’ ત્યારે સિજ્જંભવસૂરિએ કહ્યું કે ‘જે તું ખરેખર જ મને મળવા આહતો હો તો તારે બધા આશ્રવોનો ત્યાગ કરવો પડશે.’ મનકે ગુરુમહારાજ પાસેથી ઉપદેશ ગ્રહણ કરીને દીક્ષા લીધી. બીજા સાધુઓને અંદરના ભેદની કાંઈ ખબર પડી નહિ. તેમને એ પણ ખબર ન પડી કે મનક સૂરિજીનો પુત્ર છે. હવે ગુરુએ જ્યારે ઉપયોગદષ્ટિથી જોયું ત્યારે તેમને જણાયું કે મનકનું આયુષ્ય હવે ફક્ત છ મહિનાનું જ બાકી રહ્યું છે. આ જાણીને તેમણે બધા શાસ્ત્રોના સારરૂપ અને સાધુઓના આચારરૂપ સાતસો ગાથાઓવાળું ‘દશવૈકાલિક સૂત્ર’ રચ્યું. આ સૂત્ર તેમણે મનકને છ મહિનાની અંદર શીખવી દીધું. ત્યાર પછી મનકે ચારિત્રધર્મની આરાધનાપૂર્વક સમાધિ લીધી અને કાળ કરીને દેવલોકને પામ્યો. તેની અમરલોકની પ્રાપ્તિનો વૃત્તાંત દિવ્યદષ્ટિથી જોઈને સૂરિજીની આંખોમાં આંસુ આવ્યાં. આ જોઈને બીજા સાધુઓ બોલ્યા : હે મહારાજ ! આપ જેવા વિસ્મયપુરૂષ પણ જે મોહને વશ થઈ જાય તો બીજાઓ થાય તેમાં શું આશ્ચર્ય ? “ ગુરુએ કહ્યું : એ મોહ નથી પણ આશ્ચર્યની વાત છે ” સાધુઓએ કહ્યું : ‘મહારાજ, શું આશ્ચર્ય છે ?’ ત્યારે સૂરિજીએ કહ્યું કે આ સાધુએ વણા ઓછા વખતમાં જ પોતાના આત્માનું કલ્યાણ કરી લીધું. આમ કહીને તેમણે મનકની આખી વાત તેમને કહી મંબળાવી.

[દિવ્ય] તર માધુર્ગોને કહા, “ હે મહારાજ ! આપને હમૈં તૌં યહ વાત કર્મી

नहीं जनाई ?" गुरु ने कहा कि अगर मैं आपको पहले ऐसा जना देता तो हमकी आत्मा का कल्याण नहीं होता । फिर उन्होंने कहा, यह "दशवैकालिक सूत्र" मनक के लिए ही बनाया था अतः अब इसे नष्ट कर दें । तब श्री नम्रते अर्जुन की कि यह ग्रन्थ आने वाले समय में स्वल्प वृद्धिवाले जीवों के उपयोग में आवेगा तब हमसे महान उपकार होगा । संघ के द्वाग ऐसी चिन्ता करने पर गुरु महागजनें उस ग्रन्थ को कायम रखा । कई वर्षों के बाद श्री सिज्जंभवसूरीजी भी भव्य जीवों को प्रतिबोध देते हुए समाधि से काल धर्मानुसार देवलोक को प्राप्त हुए । अतः श्री जिन प्रतिमा के दर्शन के लाभ से मिथ्यात्व नष्ट हो जाता है । और मन निर्मल हो जाता है । हम लिए हम पर्युषण महापर्व में दर्शन, पूजा अवश्य करना चाहिये जिससे सुख की प्राप्ति हो ।

[ इति श्री जिनप्रतिमा-दर्शनोपरि-सिज्जंभवसूरी-कथनम् ]

[शु०] त्थारे साधुओओ कहुं: 'हे भट्टाराज ! आये तो नमने आ बात थारैय पणु कही नहि । "गुरुओ कहुं" के ते हुं नमने परोक्षी आ जणावी हेत तो तेना आत्मानुं कल्याणु न धान." पछी तेना, कहुं के आ दशवैकालिकसूत्र भे मनकने भाटे ज रन्धुं हुं, तेदी तरे तेना नाश करी नाभवो लेछओ, त्थारे श्री संधे तेमने अरज करी के "अथ एवं जे समय आवशे, तेमां थोड़ी बुद्धिवाणा छवना उचितमां आवशे तो तेनाथी तेमना उपर मोटा उपकार थो." सुं हुं नमने चिन्तती थतां गुरुभट्टाराजे ते अंधने रोवा दीधा.

केटलाओके वर्षा पछी श्री सिज्जंभवसूरी पणु भव्य छवने प्रति-  
भाध देता थका समाधिथी क्षणधर्म प्रमाणे देवलोके, अरज करी.

श्री जिन भगवाननी प्रतिमाना दर्शनना क्षान्दी निराला नष्ट न  
मय छे अने मन निर्मल थम जय छे, कोटि, अर पणु-पुनः दर्शन,  
दर्शन, पूजा, अवश्य करवां लेछओ, तेदी सुखनी अति धन.

[ इति श्री जिनप्रतिमा दर्शन माहात्म्यनां सिज्जंभवसूरी कथनम् ]



पशु तुल्य है। अगर कोई प्राणी बिना मन के भी भगवान की वाणी को सुनता है वह भी रोहिण्या चोर की तरह आत्मा का कल्याण कर लेता है।

### रोहिण्या चोर की कथा :—

राजगृही नगरी के बाहर 'वैभारगिरि' नाम का एक पर्वत था। उस पर्वत की सीमा में बहुत सुन्दर एक गुफा थी। उस गुफा में महापापी, चंडाल स्वभाववाला, परस्त्रीगामी, परधनावहारक सर्व प्रसिद्ध "लोहखुर" नामका एक चोर रहता था। वह चोर राजगृही में निरन्तर चोरिया किया करता था परन्तु किसी के भी दृष्टिगोचर नहीं होता था। इस चोर के पुत्र का नाम 'रोहिण्य' था। यह रोहिण्य भी धीरे २ चौर्य कार्य में प्रवीण हो गया। एकवार लोहखुर विमार पड़ा। वह मरने जैसा हो गया। उसने अपने पुत्र रोहिण्य को अपने पास बुलाकर कहा, "प्रीणाति यः सुचरितैः पितरं स पुत्रः" जो अपने पिता को अपनी करनी से प्रसन्न करें वही पुत्र है। अतः हे पुत्र ! मैं तुम्हें एक बात कहता हूँ जो तू उसे माने तो मेरा पुत्र है। पुत्र ने कहा "पिताजी ! कहिये ऐसा कौन सूखे हूँ जो अपने पिता की आज्ञा नहीं माने, आप जो कहेंगे वही मैं करूँगा। आपकी आज्ञा कभी भी नहीं छोड़ूँगा। पिता ने कहा, "हे पुत्र ! यहाँ एक "महावीर स्वामी" नाम का ऐन्द्र जालिक आया है वह समोसरण में बैठ कर लोगों को इकट्ठा करके धर्मोपदेश देता है, उस की बात तू कानों से मत सुनना। पुत्र ने कहा कि हे पिताजी ! मैं उनकी बातें नहीं सुनूँगा। आप आनन्द में रहो। पुत्र का ऐसा वचन सुनकर लोहखुर प्रसन्नचित्त हो प्राणों को छोड़ दिया।

[गु०] वणी आ पव आवे त्पारे भगवाने उपदेशेलां शास्त्रीनी वाणी सांभली न्हय. जे भाणुसोअे जिन भगवाननी वाणीने सांभली नथी ते मानवश्ये पशु जेवा छे डोछ प्राणी अनिच्छाअे पशु जिन भगवाननी वाणी सांभली ले, ते रोहिण्या चोरनी जेम तेना आत्माउ' पशु इड्याणु थछ जय छे.

### रोहिण्या चोरनी कथा.

राजगृही नगरीनी बहार 'वैभारगिरि' नामने अेक पर्वत छते. ते पर्वतनी तण्टीमां वणी सुंदर अेक गुफांमां महा पापी अने अंधण जेवा स्वभाववाणो, परस्त्रीगामी, भीजना धननु'हरणु करवावाणो अने

લોકોમાં ગવાયેલો એક પ્રસિદ્ધ 'લોહપુર' નામનો ચોર રહેતો હતો. તે ચોર રાજગૃહીમાં હંમેશ ચોરીઓ કર્યા કરતો હતો. પણ કોઈની નજરે પડતો નહોતો. આ ચોરના પુત્રનું નામ 'રોહિણ્ય' હતું. આ રોહિણ્ય પણ ધીરે ધીરે ચોરવિદ્યામાં પ્રવીણ થઈ ગયો. એકવાર લોહપુર ખીમાર પડ્યો, તે મરવા લેવો થઈ ગયો. તેણે તેના પુત્ર રોહિણ્યને પાસે બોલાવીને કહ્યું : "પ્રીણાતિ યઃ સુચરિતઃ પિતરં સ પુત્રઃ" "જે પોતાના પિતાને પોતાનાં કામોથી બુશ કરે તે જ સાચો પુત્ર છે. મારે હું પુત્ર ! હું તને એક વાત કહું છું, તે તું માને તો મારો સાચો પુત્ર કહેવાય." પુત્રે કહ્યું : "પિતાજી, કહો, એવો કોણ મૂખ હશે જે પોતાના પિતાનું કદ નહિ માને ? આપ જેમ કહેશો તે પ્રમાણે જ હું કરીશ. આપની આજ્ઞાનું કદી ઉલ્લંઘન નહીં કરું" પિતાએ કહ્યું : "હું પુત્ર, આતી" "મહાવીર સ્વામી" નામનો એક ઇન્દ્રજાળી આવ્યો છે, તે સંભાવસંગ્રહમાં બેસીને લોકોને ભેગા કરીને ધર્મપ્રદેશ આપે છે; તેની વાત કદી સાંભળતો નથી." પુત્રે કહ્યું કે "પિતાજી, હું તેની વાત કદી નહીં સાંભળું. મારા નિશ્ચિત રહેજો." પુત્રનું આવું વચન સાંભળીને "લોહપુર" પ્રમદા મર્યા અને પોતાના પ્રાણનો ત્યાગ કર્યા.

[હિન્દી] મગને' કે અનન્તર વહ નરક લોક વો પ્રાપ્ત થયા । "મગને" એ એસે પાપી મી અનેક હૈં જો સ્વયં ધર્મ વમી મી નહીં સુનતે ડોંગ હો ધરમ ને, ઉસે મી મના કરે, ઉન પાપિયોં કે લિખ નરક કે ગિરાય સૌન મા દિખાવે ।" અવ રોહિણ્ય મી પિતા વી ઔર્ધ્વદૃષ્ટિક ક્રિયા વર્મ ને નિહત હો અને સૌને મને વગને લગા । એક વાર મહાવીર સ્વામી વિહાર વગને વગને રોષિયેન રિત મગને ને નિકલતા થા ઉસી માર્ગ મેં મમોમગન પરિપદ રમટી રતે. ઉમને સારે દેવ પ્રાપ્ત વિયા । જનને મેં હી મામને' રોહિણ્ય આળ । ઉમને' મમોમગ દેવ, જર વિચાર વગને લગા કિ વહી પેન્ડજાલિક મહાવીર સ્વામી હૈં । ઉન સમી વગને વગને ને વહ વહી હો પિતાજી વી આજ્ઞા વા મગ હો જાપસા । કે મહાવીર હૈં જાપસા । પા ઉર દુસરા વગના મી નહીં હૈં પર મી સ્વકા સ્વકા વગને ને સુનતે હો જાપસા હૈં । મેંસા વિચાર વગને વગને મેં ઉંચી સત્ત્વ લોક મેં જોડા । વિન્દુ મેંસોમગને ઉમને પાસ મેં વાંચા નમ ગયા । હમઃ વહ વગને ને જાપસા ને સમઃ જર વગને વહ રાખમે બેઠા નિમલને લગા વહી જાપસા મહાવીર ને સ્વકા વગને વગને

પડે, ૧. દેવતા આંખે નહીં (ટમકારતે) ફુસ્કાતે હૈં । ૨. દેવતાઓં કી ફુલમાળાં નહીં કુમ્હલાતી હૈં । ૩. દેવતા પૃથ્વીસે ચાર અંગુલ ઝંચે રહતે હૈં । ૪. દેવતાઓં કે શરીર મેં પસીના હોતા નહીં હૈં । યે ચાર વચન ભગવાન કે રોહિણેય કે કાંતોં મેં પડે । ત્વ વહ સોચને લગા કિ હાય ! હાય ! મેંને પિતા કી આજ્ઞા કા ઉછંપન કિયા । કાંટા નિકાલનેં કા તો પરિશ્રમ કિયા પરન્તુ મહાવીર કે વચનરૂપ કાંટા લગ ગયા । અવ વ્યા કરેં । વહ જ્યોં જ્યોં પછતાતા હૈં ત્યોં ત્યોં મહાવીર કે સુનેં હુય વચન રોહિણેય કે હૃદય મેં પકેં હોતે જાતે હૈં । અવ વહ કઠોર હૃદય કાકે રાગ્રહી નગરી મેં ચોરી કરનેં કે લિયે ગયા ।

[ગુઁ] મર્યા પછી તે નરકમાં ગયો. સંસારમાં એવા પાપી લોકો અનેક છે, જેઓ પોતે ધર્મકથા કહી સાંભળતા નથી પણ જે સાંભળે છે તેને પણ મના કરે છે. એવા પાપી લોકો માટે નરક સિવાય બીજું કયું ઠેકાણું છે ?

હવે રોહિણેય પણ તેના પિતાની ઉત્તરક્રિયા સમાપ્ત કરીને ફરીવાર પોતાના ચોરીના ધંધામાં લાગી ગયો. એકવાર મહાવીરસ્વામી વિહાર કરતા હતા, તેમાં રોહિણેય જે માર્ગે નીકળતો હતો તે માર્ગમાં જ તેમના ઉપદેશની પરિપદ ભેગી થઈ, અને તેઓ ધર્મોપદેશ દેવા લાગ્યા. એટલામાં સામેથી રોહિણેય આવ્યો આવતો હતો. તેણે સમોસરણ બેઠને વિચાર કર્યો કે આજ તે ઇન્દ્રજાળી મહાવીરસ્વામી છે. જે તેની વાણી મારા કાને પડી ગઈ તો પિતાજીની આજ્ઞાનો ભંગ થશે અને મને પાપ લાગશે. પણ હવે જવાનો બીજો કોઈ માર્ગ પણ નથી અને અહીંથી પસાર થઈશ તો આનાં વચનો કાને પડી જશે તો તે ઠીક પણ નહિ થાય. એવો વિચાર કરીને કાનોમાં આંગળીઓ ભરાવીને તેણે ત્યાંથી દોટ મૂકી. પણ દેવયોગે તેને પગમાં કાંટો વાગ્યો, તેથી તે ચાલવામાં અસમર્થ થઈ ગયો. તે જ્યારે એક હાથે કાંટો કાઢવા લાગ્યો ત્યારે ભગવાનનાં નીચેનાં વચનો તેને કાને પડ્યાં : (૧) દેવતાઓની આંખો કમ્પતી નથી. (૨) દેવતાઓની પૃથ્વીની માળાઓ કદી કસમાતી નથી. (૩) દેવતાઓ પૃથ્વીથી ચાર આંગળ ઊંચે રહે છે. (૪) દેવતાઓના શરીરમાં પરમેશ્વર થતો નથી. આ ચાર ભગવાનનાં વચનો રોહિણેયના કાને પડ્યાં ત્યારે તે વિચાર કરવા લાગ્યો : હાય હાય ! મેં મારા પિતાની આજ્ઞા

‘द्विधनं कथं’। पगने कांटे में काढी नाभयो पणु भटावीरना वयन  
इपी कांटे भारा हृदयमां पेसी गयो। एवे छुं शुं करुं! ते जेम जेम  
पस्तातो जेतो एतो तेम तेम भटावीरस्वामीनां सांभणोनां वयने। तेना  
हृदयमां उतरिने पाकां थतां जतां एतां, छतां ते कठोर हृदय करिने राज-  
शुलीमां थोरी करवा गयो।

[हिन्दी] उसी दिन नगर के सारे साहूकारोंने दकदक होकर श्रेणिक गणा ने  
निवेदन किया, हे राजन्! आपके राज्य में चोगे का उपद्रव व्याप्त बढ़ गया है।  
घरमें बैठे हुए ही हमें दग्ध बनाता जा रहा है। यह गुन गजाने कोतवालको बुला-  
कर कहा, “क्यों जी! नगर में यह क्या उत्पान है? तुम चोर को पकड़ नहीं  
सकें।” कोतवालने कहा, “महागज! मुझे मालूम है यह चोर गेहूँने है।  
परन्तु यह चौर्य कार्य में इतना दक्ष है कि पकड़ में नहीं आ रहा है। यह भी  
पता नहीं चलता कि यह कब आता है और कब जाता है। मैं तो इसे पकड़ने  
में अपने को असमर्थ पाता हूँ। आप चाहें तो मुझे कोतवाल पदसे हटाने का इरादा  
हो। तब राजाने अभयकुमार की तरह देखा, तब अभयकुमार ने कहा, “हे  
चोर को सात दिन में पकड़कर के हाजर कर दूंगा, अगर मैं ऐसा न कर सकूँ तो  
चोर की गजा मुझे मिले।” ऐसी प्रतिज्ञा कर उमने नगर में सर्वत्र दण्डाय  
का पता लगाने हेतु नियुक्त किये। तो भी नगर में चोरी तो सर्वत्र हो रही  
नहीं आया। इस तरह चौकसी रखने पर भी छः दिनों तक चोर नहीं पकड़ा गया।

ચરોં કો મેજકર સારા વૃતાન્ત જાના । ઉમનેં ચોર કા વૃતાંત સત્ય પાયા । તમ ચોરને  
પુનઃ નિવેદન ક્રિયા કિ મહારાજ ! યદિ અમયકુમાર કી વાત હી રચની હો તો  
આપ મહે હી મૃત્યુ દણ્ડ દે દો ।

[ગુ.] તે જ દિવસે શહેરના બધા શેઠિયાઓએ ભેગા થઈને શ્રેણિક  
રાજાને ફરિયાદ કરી કે “હે રાજા ! આપણા રાજ્યમાં ચોરોનો ઉપદ્રવ  
ધણે વધી પડ્યો છે. ઘરમાં બેઠા બેઠા અમે દરિદ્ર બનતા જઈએ છીએ.”  
આ સાંભળીને રાજાએ કોટવાળને બોલાવ્યો અને કહ્યું : ‘કેમ ભાઈ !  
શહેરમાં આ શો ઉત્પાત છે ? તમે ચોરને પકડી શકતા નથી ?’ કોટ-  
વાળે કહ્યું : ‘મહારાજ, મને ખબર છે કે એ ચોર શેઠિયો જ છે, પણ  
ચોરવિદ્યામાં એ એટલો પ્રવીણ છે કે અમારી પકડમાં આવતો નથી.  
એ પણ ખબર રહેતી નથી કે એ કયારે આવે છે, ને કયારે જાય છે.  
હું તેને પકડી શકીશ નહિ એમ મને લાગે છે. આપ ચાહો તો મને  
કોટવાળ પદેથી મુક્ત કરી શકો છો.’ ત્યારે રાજાએ અભયકુમાર સામે  
બોલ્યું. અભયકુમારે કહ્યું : ‘હું આ ચોરને સાત દિવસમાં પકડીને આપની  
સમક્ષ હાજર કરીશ. જો હું એમ ન કરી શકું તો ચોરને જે સજા થાય  
તે મને મળે.’ આવી પ્રતિજ્ઞા કરીને તેણે ચોરને પકડવા માટે શહેરમાં  
સર્વત્ર ચોરીદારો ગોઠવી દીધા. તો પણ શહેરમાં ચોરી થઈ અને ચોર  
હાથ પણ ન આવ્યો. આવી રીતે ચોકસાઈ રાખવા છતાં છ દિવસ સુધી  
ચોર હાથમાં આવ્યો નહીં. સાતમે દિવસે બધા રસ્તા ઉપર ચોરીદારો  
ગોઠવ્યા અને તે ઉપરાંત મહોદ્દે મહોદ્દે પણ ચોરીદારો ગોઠવી દીધા.  
શહેરના કોટની બહાર પણ માણસો ગોઠવ્યા હતા. સાંજ થતાં જ ચોર  
ચોરી કરવા માટે શહેરમાં ધુસ્યો. સૈનિકોએ તેને આકારથી ઓળખ્યો.  
જેવો તે કોઈ શેઠિયાના ઘરમાં ચોરી કરવા ધુસ્યો તેવો જ લોકોએ  
જોરબંધાર કરી મૂક્યો. જૂમખરાડા થતાં જ ચોર ઘરો ઉપરથી વાંદરાની  
જેમ હુલ્લો હુલ્લો કોટ સુધી ગયો અને કોટ ઉપરથી બહાર ફેરી પડ્યો.  
તરત જ સૈનિકોએ તેને પકડી લીધો, અને અભયકુમાર પાસે હાજર  
કર્યો. અભયકુમાર પ્રસન્ન થયા. તે તેને રાજા સમક્ષ લઈ ગયા. રાજાએ  
ચોરને પૂછ્યું કે “તું ક્યાં રહે છે ?” “મહારાજ ! હું સાલગાંવનો રહે-  
વાશી છું; મારું નામ દુર્ગચંદ છે. મારે ઘર દીકરીનાં લગ્ન છે તેથી  
ચીજ-વસ્તુ લેવા માટે શહેરમાં આવ્યો હતો અને સાંજે મારે ગામ જઈ

रयो हतो त्यां सैनिकोये “ओर, ओर,” कहीने भने पडरी लीधा. एवे आपनी छच्छाभां आवे तेम कशे. भने दंड देवो होय तो आप भासिक छे, हुं शुं करी शकुं !” राजोये गुप्तचरोने मोडलीने अधी दृष्टिकत जशी. तेभना कहेवा उपरथी ओरनी बात साची जलाध. त्यारे ओरे करी निवेदन कथुं के “भडाराज, छतांय आपने अभयकुमारनी बात भाची लागती होय तो आप भने मृत्युदंड आपी शोको छे.”

[हिन्दी] राजा विचार करने लगा कि, “अपने अन्याय कैसे करें ?” उन्होंने अभयकुमार की तरफ देखा। अभयकुमारने विचार किया कि यह चोर राजा है और साथ ही साथ कपटी भी है अतः इसी के मुख ने मन्त्र स्वीकार करना चाहिये। ऐसा विचार कर राजा से कहा, “हे राजन् ! मैंने गन्तरी की है, वह तो माह्वार है इसकी इज्जत कम हुई अतः मैं इसका सम्मान करने जिज्ञा करता।” इतना कहकर वह चोर को अपने महल में ले गया। वहां उसने उसे गुप्त मोर्चा में मन्त्र किया और मौका देखकर ‘चन्द्रहास्य’ मदिरा पिला दी। इसने मोर्चा करने र ही उसे नींद आ गई। तत्काल अभयकुमार ने एक आदाम को दरबार की

તેમણે અભયકુમારની સામે જોયું. અભયકુમારે વિચાર કર્યો કે આ ચોર પાકો છે અને સાથે સાથે કપટી પણ છે; એટલે હવે તો તેને મોઢે જ સાચું કહેવરાવવું જોઈએ. આવો વિચાર કરીને તેણે રાજાને કહ્યું: “મહારાજ, મેં ભૂલ કરી છે. આ તો શાહુકાર છે. તેની બદનામી થઈ તેથી હું હવે તેનું સન્માન કરીને પછી તેને વિદાય આપીશ.” એમ કહીને તે ચોરને પોતાના મહેલમાં લઈ ગયો. તેનો સત્કાર કરીને તેને સુંદર ભોજન કરાવ્યું; અને લાગ જોઈને તેને ‘ચંદ્રહાસ્ય’ મદિરા પાઈ દીધી. આથી ભોજન કરતાં કરતાં જ તેને ઊંઘ આવી ગઈ. તરત જ તેણે એક હવેલીને દેવલોક જેવી શણગારી : એક ચોરડામાં અનેક પ્રકારનાં ચિત્રો ચીતરાવ્યાં, ઠેકાણે ઠેકાણે મોતીની ઝાલરો લટકાવી અને પુલની માળાઓના ઢગલાના ઢગલા ચારે બાજુ લટકાવી દીધા, ઠેકાણે ઠેકાણે સુગંધિત ધુપથી વાતાવરણને સુવાસિત બનાવી દીધું. સુગંધી અત્તરો છંટાવ્યાં. હવેલી ઉપર સુંદર ધ્વજો ફરકાવી, સુંદર ચંદરવા બંધાવ્યા અને હવેલીના મધ્યભાગમાં અનેક તોરણો યુક્ત એક મંડપ બંધાવ્યો. તેમાં એક ખુબ સુંદર છત્રપલંગ બિછાવ્યો; અને પછી સર્વાંગસુંદર સોળ વરસની સુંદરીઓ બોલાવીને તેને શૃંગાર સજાવી હાથમાં મૃદંગ આપી અને વગાડવાની આજ્ઞા કરી ઉપરાંત આઠ વેશ્યાઓને બોલાવીને ગાયન-વાદન ચાલુ કરાવ્યાં. પછી મૂર્ચ્છિત અવસ્થામાં જ તે ચોર રોહિણીયને તે મહેલમાં સૂવરાવી દીધો. બે ચાર ઘડી જતાં જ્યારે તેનો નશો ઊતર્યો અને તેણે આંખો ઉઘાડીને જોયું તો સાક્ષાત્ દેવલોક જેવું બધું નજરે પડ્યું. તે વિચાર કરવા લાગ્યો કે હું ક્યાં આવી ગયો ! શું મને સ્વપ્ન તો નથી આવ્યું ! એવો વિચાર કરી રહ્યો હતો એટલામાં અભયકુમારે શીખવ્યા પ્રમાણે બનાવટી દેવ-દેવીઓએ આવીને “જય જય નંદા, જય જય ભદ્રા” એવા શબ્દોથી જય જયકાર કરી એને ઘેરી વળ્યા અને નાટક કરવા તૈયાર થયા.

[હિન્દી] તત્કાલ હી एक “गुरु स्थानिक देवता” आया और कहने लगा कि ‘हे देवानांप्रिय ! तुम यहां देवलीक में देवतारूप में उत्पन्न हुए हो, अतः अब से आप हम विमान के मालिक हो । अब आप अपने पूर्वमर को कहिये । आपने पिछले मर में क्या धर्म और कर्म किये जिसमे आप देवता बनें, सो जल्दी कहों, कि आप देवताओं के योग्य भोगों का उपभोग करेंगे । वह चोग गुरुस्थानिक देवता

कैसे वचन सुनकर विचार करते लगा कि "क्या यह देवलोक है या अमय-कुमार की कपट क्रिया है ?" ऐसा विचार करते ही महावीर के वचन याद आयें। उनमें निश्चय किया कि अगर महावीर स्वामीने जा बातें कही थी वे हममें मिल जाय तो देवलोक है नहीं तो अमयकुमार रचित कपटलीला है। ऐसा निश्चय कर उसने देवताओं की तस्फ गौर से देखा। तो देखा वे देव और देवियों अति मटका रही हैं, उनके शरीर पर पर्सीना हैं, गले में रही हुई फूलमालाएँ कुम्हनी गई हैं उनके पैर भूमी से लगे हुए हैं। भगवान के कथनानुसार एक भी देव उसमें नहीं मिल रही थी। तब चोर उस मायाजाल को जान गया। अतः देवा, अरे नाटककारो ! मैंने तो पूर्वभवं में खूब दान दिये हैं, झील पाले हैं, गुरुकुल की सेवा की है, अरिहंत देव की पूजा की है, नान व्ययनों से रतिन होकर उन और नियमों का पालन किया है, कई मन्दिरों में जिर्णोद्धार किये हैं, तन्मन्त्रि पृथक् कार्यों ने ही मैं देवता बना हूँ तब गुरुस्थानिक देवताने कहा, "तब वचन में भी कोई पाप किया हो तो कहो ?" तब बोले वरा, "नहीं ! तुम सब सत्य हो, विचार तो करो कि मैंने श्रावक कुल में जन्म लिया है, जहाँ वचन का क्या काम ? मैंने जन्म से लेकर मृत्यु तक छानखान जल पिया, स्नान किया, छाने जलगा स्पर्श तक नहीं किया। निगन्तर पोषण, प्रतिक्रिया मिले हैं। मैंने न भ्रम किया है।"



માઇ ગઇ છે અને તેમના પગો પણ જમીનને અડે છે. ભગવાનના કહેવા પ્રમાણેની એક પણ વાત મળતી આવતી નહોતી, એટલે ચોર આ માયા-જળને પામી ગયો, અને બોલ્યો : ‘અરે નાટક કરનારા લોકો, મેં તો પૂર્વભવમાં ઘણું દાન આપ્યું છે, સદ્ગુરુની સેવા કરી છે, અરિહંતદેવની પૂજા કરી છે. સાત વ્યસનોથી મુક્ત રહીને ત્રત અને નિયમોનું પાલન કર્યું છે. કેટલાંયે મંદિરોનો જીર્ણોદ્ધાર કર્યો છે, વગેરે ઘણાં પુણ્ય-કર્મોને કારણે જ હું દેવ તરીકે જન્મ્યો છું.’” ત્યારે ગુરુસ્થાનિક દેવ-તાએ કહ્યું : “નાનપણમાં પણ કેઇ પાપ કર્યું હોય તો કહો.” ત્યારે ચોરે કહ્યું : ‘અરે, તમે લોકો મોટા મૂર્ખ છો. વિચાર તો કરો કે મેં શ્રાવક-કુળમાં જન્મ લીધો હતો એટલે ત્યાં પાપ હોયજ ક્યાંથી ? મેં જન્મથી માંડીને મૃત્યુ સુધી ગળીને જ પાણી પીધું છે અને સ્વપ્નમાં પણ અણગળ પાણીને સ્પર્શ સુદ્ધા નથી કર્યો. હંમેશાં પૌપદ્ય અને પ્રતિક્રમણ કર્યાં છે અને સાધુઓની સંગતિ કરી છે.”

[હિન્દી] તब देवताने फिर कहा, “कोई छोटी बड़ी चोरी की हों तो याद करों” चोर ने कहा, “अरे भद्र ! चोरी करने वाला मनुष्य देवलोक में कैसे अव-तरित हो ? तुम इतना भी नहीं जानते तो कैसे देवता हो ? भला बताइये तो क्या कोई भी पत्थर की शिला पर बैठकर समुद्र के पार पहुंच सका हैं ? ऐसी बातें जब चोरने की तो अभयकुमार ने विचार किया कि इस चोरने मेरा कपट जान लिया है तो अब यह टगा नहीं जायगा, ऐसा विचार कर चोर से कहा, “बाह रे बाह ! तू भारी चतुर हैं, तुमने मेरी बुद्धि को भी दबा दिया हैं, परन्तु अब मच कहो कि देवलोक है या नहीं ? इस बात की तुम्हें कैसे खबर हुई ? तब उस चोगने मनमें सोचा कि हाय ! हाय ! मेरे पिता को धिक्कार है जो उन्होंने मुझे गलत समझाया, मैंने बिना मनकें भगवान के वचन सुने तो भी मैं आज जिन्दा रह गया अगर तन मन से सुने होते तो निश्चय ही आत्मा का कल्याण हो जाता। अब भगवान के पास जाकर धर्मोपदेश सुनकर दीक्षा लेकर श्री भगवान की सेवा में लूंगा। इतना विचार करके वह अभयकुमार से बोला, “हे अभयकुमार ! यह बात श्री त्रिलोकीनाथ भगवान श्री महावीर स्वामी जी के प्रभाव से मैंने जानी हैं।” इतना कहकर उसने अपनी चोरी की सब बातें प्रगट पन से कहीं और मर्च धन बता दिया, फिर बोला कि अब मुझे भगवान के पास जाकर दीक्षा ग्रहण करना है। चोर के मुख से यह बात सुनकर अभयकुमार चोर को श्रानिक गजा के पास ले गया,

ગજા ને ચોર સે પૂછા કિ હે ચોર ! તુમને ચોરી કી ક્યા ? ચોર ને કજા, “ હા મહાગજ ચોરી કી । ” તવ રાજા ને ચોર કો માગ હાલને કી આજા ડી ।

[ગુરુ] ત્યારે દેવતાએ કરી કહ્યું : ‘કોઈ નાતી-માઠી ચોરી કરી હોય તો યાદ કરો.’ ચોરે કહ્યું : ‘અરે ભલા ભાઈ ! ચોરી કરવા વાળો માનુષ દેવલોકમાં જન્મે જ કેમ ? તમે એટલું પણ જાણતા નથી તો પછી કેવા દેવ છો ? શું કોઈ પથ્થરની શિલા ઉપર બેસીને અમુકને તરી શક્યો છે ?’ આવી વાતો જ્યારે ચોરે કહી ત્યારે અભયકુમારે વિચાર્યું કે નક્કી આ મારી કપટકળા જાણી ગયો છે. દરે નેનં છી રાકાને નહિ. આવો વિચાર કરીને તેણે ચોરને કહ્યું : “ વાલ રે વાલ ’ તું બાલુ ચતુર છો ; ને’ તો મને પણ કાવવા ન હોઈ. પણ દરે આત્મ કો કે નેનં ને .

શ્રી મહાવીર સ્વામીજી કો નમસ્કાર કરકે કહા, “હે ભગવાન ! આપકી વાણી હૈ સો મિથ્યાત્વરૂપ તિમિર કો નાશ કરને કે લિખે સ્વર્ગસમાન હૈ, કિન્તુ મેરે પિતાજી કે આદેશ સે મૈને ઉસે સુના નહીં ઓર વિના મન કે થોડી સી વાણી કાન મેં પડી જિસસે જીવિત વચા સો આપને મુજે યહાં જીવિત રક્ષા તો અવ નરક સે ભી વચાઓ, તવ ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામી ને વ્રહુત મધુર વચનોં સે ઉત્તર દિયા, “અરે ભગ્ય ! ઇમ અપાર પારાવાર રૂપ સંસાર મેં સ્વજન સમ્વન્ધી વગેરહ હૈ સવ સ્વાર્થ કે સાધક હૈં, કોઈ કિસી કે કામ મેં નહીં આતા, જો ધર્મ કાર્ય તુમ કરંગે તો તુમ સુખી હોંગે । ઇન્કે સાથ પાંચ મહાવ્રત પાલોંગે તો કર્મકાય કરકે મોક્ષ સુખ પાઓંગે ।” ભગવાન કા યહ ઉપદેશ સુનકર રોહિણેય ચોર પ્રતિવોધ પાકર ભગવાન સે બોલા, “હે ભગવાન ! ચારિત્ર રૂપ રત્ન દિલાઓ ! ઉસકે ઇસ તરહ વિનય કરનેં પર ભગવાન ને ઉસે દીક્ષા દી ઓર રોહિણેય ને અપને કુટુમ્બ કો પ્રતિવોધ દેકર દીક્ષા દિલાઈ ।

કોઈ ૨ પરતો મેં લિખા હૈ કિ અભયકુમાર કી ટગાઈ મેં રોહિણેય ચોર જવ નહીં આયા તવ અભયકુમાર ને શ્રેણિક રાજા સે ઉસે મુક્ત કરાયા ઓર કહા વિના અપરાધ યહ મારનેં યોગ્ય નહીં હૈં । ચોર ને વિચાર કિયા કિ મેં શ્રી વીર પ્રભુ કે વચનોં સે જીવિત રહા હું । એમા વિચાર કર ભગવાન કો જાકર વન્દન કિયા, ભગવાન ને ઉસે ધર્મ સુનાયા, ઉનમેં પ્રતિવોધ પાકર દીક્ષા લેનેકા મન હુઆ । ભગવાન સે કહા કિ મેરે દીક્ષા તો લેની હૈં પરન્તુ શ્રેણિક રાજા સે કુછ વાત કહના હૈં મો કહકર વાપિસ આકર દીક્ષા લંગા । એમા ભગવાન કો કહકર વહ શ્રેણિક રાજા કે પામ આયા ઓર બોલા, હે રાજન ! રોહિણેય ચોર જિસે કહતે હૈં વહ મેં હું ।

[ગુઠ] અવસર જોઇને અભયકુમારે રાજાને હાથ જોડીને વિનંતી કરી કે “હે મહારાજ ! આ ચોરનો ભાવ દીક્ષા લેવાનો છે.” રાજાએ કહ્યું “વળું સારું.” પછી ચોરે જ્યાં જ્યાં ધન દાટ્યું હતું તે બધું બતાવી દીધું અને જેતું જેતું હતું તેને સોંપી દીધું. રાજાએ પણ ચોરની દીક્ષાનો ઉત્સવ ખુબ ધામધુમથી કર્યો.

રોહિણેય ભગવાન મહાવીરસ્વામીને નમસ્કાર કરીને કહ્યું : ‘હે ભગવાન આપની વાણી મિથ્યાત્વરૂપ અધિકારનો નાશ કરવામાં સ્વર્ગ સમાન છે, પણ મારા પિતાજીની આજ્ઞા હતી તેથી તે મેં સાંભળી નહિ. છતાં અન્નજનનાં થોડી વાણી જે વાણી કાને પડી ગઈ તેનાથી આજે હું જીવતા રહ્યો છું. આપે મને આમાંથી બચાવ્યો છે ને હવે મને નરકમાંથી

કોઈ કોઈ પ્રતોમાં એલું લખ્યું છે કે-ત્યારે અભયકુમારને ત્યાં ગેલિંગ્ય ચાર ન સપડાયો ત્યારે અભયકુમારે ઐગ્નિક રાજ્યને કબજે લેવા મુક્ત કરાવ્યો અને કહ્યું કે અપરાધ વિના આને શાંતિ મળે. ત્યારે વિચાર કર્યો કે-હું શ્રી વીરપ્રભુનાં વચનના આગવીને, ત્યાં જ નથી છું તો પણ હું તેમને વંદન કરવા બહિષ્કાર કરું, ભગવાને તેને કબજે લેશે કંપો, તેથી પ્રતિજ્ઞાધારીને તોણ દીક્ષા લેવાનો પ્રયત્ન કરીને નને પ્રાર્થના કરી કે મારે દીક્ષા લેવી છે, પણ તે દીક્ષા લેવાની શક્તિ મળતી નથી. પાત્ર વાત કરેલી છે તે પછી આવીને દીક્ષા લેવાની શક્તિ મળતી નથી. પાત્રને કહીને તે ઐગ્નિક રાજ્ય પાસે આવ્યો અને ગેલિંગ્ય ચાર જેને કહે છે તે હું જ છું.

જીવોં કા નિસ્તાર હો ગયા હૈં । દેશ્વો રોહિણેય ચોર ને વિના ભાવ સે ભગવાન કા ઉપદેશ સુના તો મી અછ્છી ગતિ કો પ્રાપ્ત હુઆ ।

કહા મી હૈં કિ—

મિથ્યામત નાસવે કો જ્ઞાન કે પ્રકાસ વે કો, આપાપર ભાસવે કો ભાનસી વચાની હૈં ।  
છહો દ્રવ્ય જાનવે કો વંધ વિધિ ભાનવે કો, આપાપર ઠાનવે કો પરમ પ્રમાની હૈં ॥  
અનુભો વતાય વે કો જીવ કે જતાયવે કો, કાહુ ન સતાય વે કો ભવ્ય ઊર આની હૈં ।  
જહાં તહાં તારવે કો પાર કે ઉતારવે કો, સુખ વિસ્તારવે કો યહૈં જિન વાની હૈં ॥૧॥  
[કવિત્ત ૩૧ સો]

ઇસ પ્રકાર કી શ્રી તીર્થંકર ભગવાન કી વાળી હૈં । ઇસલિએ પર્યુષણ મહા પર્વ આને પર ભગવાન કી વાળી અવશ્ય શ્રવણ કરના ચાહિવે । જિસસે ઇસ ભવ મેં આત્મા કા અલ્યાણ હો જાય ।

[ ઇતિ દ્વિતીય દિવસે દ્વિતીય—વ્યાખ્યાનમ્ ]

[ગુ૦] મહાવીરસ્વામીનાં વચનો મેં સાંભળ્યાં તેથી હું અભય-કુમારની જાળમાં ફસાયો નહીં. હવે હું મહાવીરસ્વામીની પાસે દીક્ષા લેવાનો છું તેથી આપના અધિકારીઓને ભારી સાથે મોકલો, હું બધું ધન બતાવી દઈશ. રાજાએ અભયકુમારને મોકલ્યા. ચોરે તેમને બધું ધન બતાવી દીધું. રાજાએ જેનું જેનું ધન હતું તે સૌ સૌને સોંપી દીધું. ચોરે પોતાના કુટુંબને પ્રતિબોધ આપ્યો અને પોતે પરિવાર સહિત મહાવીરસ્વામીની પાસે ગયો અને સપરિવાર દીક્ષા ગ્રહણ કરી. તેનો ઉત્સવ શ્રેણિકરાજાએ ઊજવ્યો. રોહિણેયે દીક્ષા લીધા પછી ખુબ જય અને તપ કર્યા અને સમાધિપૂર્વક અનશન કરીને સારી ગતિને પામ્યો.

હે ભવ્ય છવો ! આવી ભગવાનની વાણી સાંભળીને અનેક છવોનું કહ્યાણ થઈ ગયું છે. જુઓ, રોહિણેય ચોરે ભાવ વિના પણ ભગવાનનાં વચનો સાંભળ્યાં છતાં પણ તે સારી ગતિને પામ્યો.

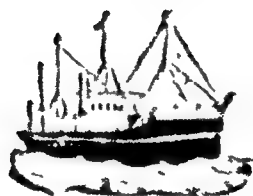
કહું છું કે—

મિથ્યામત નામવે કો, જ્ઞાનકે પ્રકામવે કો આપાપર ભામવે કો ભાનસી વચાની હૈં ।  
છહો દ્રવ્ય જાનવે કો, વંધવિધિ ભાનવે કો આપાપર ઠાનવે કો પરમ પ્રમાની હૈં ॥

અનુભો વતાયવે કો, જીવકે જતાયવે કો કાદુ ન સતાયવે કો મન્ય હા જાની હૈ।  
જહાં તહાં તારવે કો, પારકે ઉતારવે કો મુલકે ચિન્નારવે કો યહી જિન્નગની હૈ॥  
[કવિ ૩૧ નો]

આવી રીતની શ્રી તીર્થંકર ભગવાનની વાણી છે. એટલા માટે  
પૃથુપણ મહાપર્વ આવે ત્યારે ભગવાનની વાણી અવશ્ય શ્રવણ કરવી  
જોઈએ; જેથી આ ભવમાં આત્માનું કલ્યાણ થઈ જાય.

[ આ પ્રમાણે બીજા દિવસે બીજું વ્યાખ્યાન પણ મળે. ]



## तृतीय व्याख्यान-प्रारम्भ

[हिन्दी] पर्युषण पर्व के अनेक भवों को नष्ट करे ऐसी भावना करनी चाहिये। अहो ! यह चतुर्गति रूप विकराल संसार असार है। इस संसार में स्वजन, सम्पत्ति, ऋद्धिबृद्धि, यह सब अनित्य है, देखो ! भावना भावने हुए भी छः खण्ड का स्वामी भरत चक्रवर्ती सुखी हुआ। जिसका कथानक कहते हैं :—

इस जम्बूद्वीप के दक्षिणार्ध में भरत खण्ड में अयोध्या नाम की एक नगरी थी। उसमें राजा भरत चक्रवर्ती राज्य करता था। उसके समीप में चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख घोड़े, चौरासी लाख रथ, और छियानवे करोड़ पैदल सैनिकों की फौज थी। नवनिधान, चौदह रत्न थे। बत्तीस हजार मुकुट बद्ध राजा उनकी सेवामें थे। छियानवे करोड़ ग्रामों का वह मालिक था। उसके एक लाख वानवे हजार रानियां थी। उनके साथ वह आनन्द विलास किया करता था। इस तरह अनेक ऋद्धियों से सम्पन्न वह राजा राज्य का परिपालन करता था। इसी तरह राज्य चलाते उसे ८३ लाख वर्ष व्यतीत हो गये। एक पूर्व सित्तर लाख करोड़ वर्ष और छप्पन करोड़ वर्ष मिलाने से होता है। इतने पूर्वतक उसके स्वास्थ्य में जरा सी भी हानि नहीं हुई। सिर दर्द तक नहीं हुआ। एक दिन वह श्री भरत चक्रवर्ती स्नान मज्जन कर वस्त्राभूषणों से सुमज्जित हो अपने आरीमा भवन में गया। आरीमा भवन काच का बना विशाल महल था। इस महल में ५०० धनुष माप तक लम्बा चौड़ा और रत्नों से खचित एक काच था उस दर्पण में राजाने अपने स्वरूप को देखा। उसे देखकर वह परमानन्द को प्राप्त हुआ। शरीर की शोभा निहागने निहागने उसकी दृष्टि अपनी हाथों की अंगुलियों पर पड़ी। वहां उसने देखा कि सबसे छोटी कनिष्ठिका अंगुलि में एक मुद्रिका नहीं है, बाकी सब अंगुलियां मुद्रिकाओं से सुमज्जित हैं। अतः यह कनिष्ठिका अंगुली असुन्दर लग रही है। तब भगवतीने विचार किया अरे ! यह सब शरीर की शोभा आभूषणों पर आश्रित है।

## तीसरा व्याख्यान :—

[गु०] पर्युषण पर्व आवे त्पारे अनेक भवे नष्ट थाय अत्री भावना भावनी जेअये. अरे, आ चतुर्गति इय विकराल संसार छे.

આ સંસારમાં સ્વજન, સંપત્તિ, શિદ્ધિ, સિદ્ધિ આ બધું અનિત્ય છે. જુઓ, ભાવના ભાવતાં ભાવતાં છ ખંડનો સ્વાર્થી ભરત ચક્રવર્તી મુખી થયા. જેનું કથાનક નીચે મુજબ છે :-

આ જંબુદ્વીપના દક્ષિણભાગમાં ભરતખંડમાં અયોધ્યા નામે એક નગરી હતી. તેમાં રાજા ભરત ચક્રવર્તી રાજ્ય કરતા હતા. તેની પાસે ચોરાશી લાખ હાથી, ચોરાશી લાખ ઘેરા. ચોરાશી લાખ રથ. અને છત્તુ કરોડ સૈનિકોની ફાજ હતી. નવનિધાન ચોદ મનો મનો પ્રતિજ્ઞા



अहो ! इस असार शरीर पर जीवों को कितनी ममता है । इन जीवधारियों को अपना यह शरीर कितना प्यारा लगता है ? परन्तु यह शरीर पके हुए पत्ते की तरह चंचल है, चाहे जितना शरीर पर चन्दन लगाया जाय अथवा मृगमद आदि सुगंधित द्रव्य लगाओ पर इसकी दुर्गन्धि मिट नहीं सकती । शरीर रूप खड़े के भीतर यह जीव भडसूरा जानवर की तरह पड़ा है । मैंने इसी शरीर के लिये पृथ्वी पर ६० हजार वर्ष तक अनेक राज्यों को पराजित किये । उनसे संग्राम किये परन्तु मेरे तो एक भी काम नहि आयेगे । बाहुबली जैसे ९९ मेरे छोटे भाइयों को धन्य है, जिन्होंने संसार के जाल से अपने को विमुक्त करके दीक्षा स्वीकार की ।

[गु०] जेठ, आ अधा आलूपणो उतारी नांभवाथी शरीरनी शोभा केवी लागे छे ? ओणु विचार करीने सुगट, दु'उल, आलुअध, डार, डडां, षेरभा वगेरे अधां आलूपणो ओक पछी ओक उतारी नांभ्यां. तयारे झगलु भासभां वृक्षनी शोभा जेवी देभाय छे तेवी शरीरनी शोभा देभावा लागी. भरतलजे पोताना शरीरनी आ स्थिति जेधने विचार कर्यो के अरे, आ असार शरीर उपर लवाने केटली भभता छे ? लव धारीओने पोतानुं शरीर केटलुं वहालुं लागे छे ? परंतु आ शरीर पाकेला पांढडा जेखुं अंयल छे. आ शरीर पर गमे तेटलुं अंदन लगा-एवाभां आवे अथवा इस्तुरी वगेरे सुगंधित द्रव्यो लगाएवाभां आवे छतां तेनी दुर्गंध भटती नथी. शरीर इपी पिंजरनी अंदर आ लव भरवा पडेला जनवरनी जेम पड्यो छे. मे' आज शरीर भाटे पृथ्वी उपर साड हजार वर्ष सुधी अनेक राजओने पराजित कर्यो. तेभनी साथे लडाओ करी, पलु भारा तो कामभां ओभानो ओक पलु न आव्यो. आहुअली जेवा भारा नव्यालु नाना लडाओने धन्य छे, जेभागे संसारनी लजभांथी पोताने मुक्त करीने दीक्षा ग्रहण करी.

[हिन्दी] उन लोगों ने अपने कर्मों का क्षय किया और अक्षय सुख प्राप्त किया । मैं अभी तक उस मोहजाल में फंसा हुआ हूँ । यह गजलक्ष्मी, यह पुत्र-वम्हा, ये सब चंचल और अस्थिर हैं । पिता-माता, स्त्री, भाई, बहिन, पुत्र-पुत्री, धन, दासी, घोड़े, गधे, पैदल और सेवक आदि सभी भवरूप कृप में पड़े हुए को उगारने में मदद नहीं दोगे । सब अपने अपने स्वार्थ के माधक हैं । अरे ! मैं निराश हूँ । देवों में पिताजी श्री रिपदेव स्वामिने संसार के सब जन्तुओं का

ताग दिया, परन्तु उन्होंने मुझे पापी समझकर मेरा उद्धार नहीं किया। परन्तु स्वयं-  
देवस्वामी तो गगनोप रहित हैं, उनके लिये सब जीवों पर समान भाव है। ये  
गजान-सम्बन्धी वर्ग कोई भी मेरे नहीं हैं, मेरी आत्मा स्फुटिक रूप से समान  
निर्मल है। दर्शनादि गुण युक्त हैं, परपुद्गल से भिन्न हैं, आर्त गैड ध्यान से द्रोहादि  
क्रान्तों ने यह आत्मा पाप कर्म युक्त हो कर भवभ्रमण करता है। धर्मध्यान से यह  
आत्मा पापकर्म रहित होता है। अरे चेतन ! तू किर्मा का नहीं, तेरा जन्म ही  
नहीं, निष्कवल बन कर तू अपने गुणों में गमन कर जिससे तेरा ध्यान का उद्धार  
हो। इस तरह से अनित्य भावना (भाने भाने) भावने भावने शुद्धभाव से उद्धार  
चरण पर चेतन की परिणति चढ़ी। योगी की निश्चयता ही नहीं। धर्म धर्म  
चढ़े और तेरहवें गुणध्यान पर चढ़ने ही योगध्यान उद्धार गता। यह योगी  
लोकों में रहे हुए सारे पदार्थ सम्पूर्ण रूप से दिखने लगे। योगी की योग धर्म  
जीको सौधमंद् ने आकर ओया और गतापनि दी। जिने तेरा योग धर्म  
ग्रीकार की। देवताओ ने दीक्षा एवं योगध्यान का रूप दिया। योग धर्म  
मतागजने ग्राम ग्राम में विचार किया और जनेत योग धर्म का योग धर्म



મંદિર બનાવ્યું તથા ભરતજીની સાથે સાધુઓએ પણ જેમણે અનરાત કર્યું હતું તેમનો એક સ્તુપ બનાવ્યો.

શ્રી ભરતજી મહારાજ સત્યોત્તરલાખ પૂર્વ સુધી કુમાર તરીકે રહ્યા. એક દબાર વર્ષ સુધી મંદલિક રાજ તરીકે રહ્યા અને છ લાખ પૂર્વમાં એક દબાર વર્ષ ઓછાં રહ્યાં ત્યાં સુધી ચક્રવર્તી પદ ભોગવ્યું. એક લાખ પૂર્વ સુધી તે કેવળજ્ઞાનીપણામાં રહ્યા. તેમનું આયુષ્ય ૮૮ લાખ કેરલ થયું જે તેમણે કરી પણ મુશ્કેલી વિના ભોગવ્યું.

આનો અર્થ એવો છે કે તે ભગ્યો. શ્રી ભગવત ચરિત્રની કથામાં ભગીને જે આત્મામાં વૈરાગ્યભાવ લાવશે અને ભગવતને જે અનંત અવિચલ મુખને પ્રાપ્ત કરશે.

ભરતજીના પુત્ર સૂર્યયશા રાજાને પોતાના પ્રાણથી પણ પ્યારી ઉર્વશીએ તપ કરવાની ના પાડી હતી છતાં પણ તેમણે તપ-અનુષ્ઠાન ન છોડ્યાં તેમ શ્રાવકોએ પણ તપ વગેરેનો ત્યાગ ન કરવો જોઈએ.

### શ્રી ભરત પુત્ર સૂર્યયશા કી કથા :—

અયોધ્યામાં નગર્યાં સૂર્યયશા નૃપ આસીત્, મ ચ ત્રિગંડભૂમિસ્વામી નીતિ-  
વિત્ અશ્વઙ્ગાસનો દુષ્ટાન્ વૈરિણઃ સ્વયં નીતવાનિન્દ્રેણોપદૈકિતં મુકુટં શિરસિ  
ધૃતવાન્, તસ્ય મુકુટસ્યેવ માહાત્મ્યાચ્ચ સ નૃપઃ સુરસેવ્યોઽપ્યમૃત્તસ્ય રાજો રાધાવેધપણાત્  
પ્રાપ્તા કનકવિદ્યાધરપુત્રી ‘જયશ્રી’ પટ્ટરાજી વભૂવ, અન્યાન્યપિ તસ્ય વહ્નિ કલત્રાપિ  
આસન્ ।

[હિન્દી] જમ્બૂદ્વીપ કે દક્ષિણાર્ધ ભારત મેં વારહ યોજન લંબી ઓર નૌ યોજન  
ચોડી અયોધ્યા નામ કી એક નગરી થી । ઉસમેં શ્રી ભરત ચક્રવર્તી કા ગદીધારી  
સૂર્યયશ રાજા રાજ્ય કરતા થા । ઇસ રાજા કો સ્વયં ઇન્દ્ર ને હી ઉત્સવ કરકે  
સિંહાસન પર બિઠાયા થા । ઇન્દ્ર નેં અત્યન્ત સુન્દર દેવ સમ્બન્ધી મુકુટ ઇસે દિયા ।  
જિસે મસ્તક પર ધારણ કિયા ઓર ઉસી મુકુટ કે તેજ પ્રતાપ સે સૂર્ય જૈસા તેજસ્વી  
દિગ્વાઈ દેને લગા । અતઃ ઉસ રાજા કા નામ “સૂર્યયશ” પડા । યહ રાજા ત્રીન  
ગંડ કા સ્વામી, સવ પ્રકાર કી નીતિ જાનને વાલા, અશ્વંડ શાસન કા પ્રવર્તક થા ।  
રાજા કા રાજ્ય નિષ્કંટક થા । ઉસનેં અપને મમી વૈરિયોં કો વશ મેં કર લિયા થા ।  
ઇન્દ્રદત્ત મુકુટ કે પ્રભાવ સે યહ રાજા દેવતાઓં મેં પૂજ્ય હુઆ । ઇમ રાજા નેં ગદ્યા  
વેધ કો કરકે કનક વિદ્યાધર કી પુત્રી “જયશ્રી” સે વિવાહ કિયા । યહી ઇમ  
રાજા કી પટગણી થી । યોં તો ઇસ રાજા કે અન્ય મી વહુત સ્ત્રિયાં થી । વહ ઉનકે  
માથ ગૃહમ્થજનોચિત મોગો કો મોગતા થા ।

### શ્રી ભરતપુત્ર સૂર્યયશાની કથા

જમ્બુદ્વીપના દક્ષિણ ભાગમાં ભરતખંડમાં બાર યોજન લાંબી અને  
નવ યોજન પહોળી અયોધ્યા નામની એક નગરી હતી. તેમાં ભરત  
ચક્રવર્તીની ગાદી પર સૂર્યયશા રાજા રાજ્ય કરતો હતો. તે રાજાને સ્વયં  
ઇન્દ્રે ઉત્સવ કરીને ગાદી ઉપર બેસાડયો હતો. ઇન્દ્રે તેને દેવાને યોગ્ય  
અત્યંત સુંદર મુકુટ પણ આપ્યો હતો. જેને તેણે મસ્તક ઉપર ધારણ

કર્થો અને તે મુગટના તેજના પ્રતાપથી તે સૂર્ય જેવો તેજસ્વી દેખાવા લાગ્યો. તેથી તે રાજનું નામ 'સૂર્યયશા' પડ્યું. આ રાજ્ય મહુ જાણેલા રવામી. બધા પ્રકારની નીતિને બાણુવાચાળો અને અપાર રાજ્ય-નનો પ્રવર્તક હોતા. રાજનું રાજ્ય નિષ્કંટક હતું. તેણે તેના બધા દુરભ-નોને વશ કરી લીધા હતા. ઇન્દ્રે આપેલા મુગટના પ્રભાવથી આ રાજ્ય દેવોમાં પણ પૂજ્ય થયો. આ રાજ્યે 'રાધાવંધ' કરીને કનક ચિહ્નવર્તી પુત્રી જયશ્રી સાથે વિવાહ કર્યો હોતા. તે જ રાજની પત્ની હતા. આમ તે રાજને બીજા વર્ણીયે રાણીઓ હતી અને તે તેજની મેળ જીવરથને ઉચિત ભોજો ભોગવતા હતા.

अयोध्या नगरीमां 'सूर्ययशा' राजने धर्मक्रिया करवाभां दक्ष जेधने अत्यंत आश्चर्य थयुं अने ओ आश्चर्यथी यकित थधने तेणे पोतानुं माथुं उलाव्युं.

[सं०] तदोर्वशी देवी विश्ववशीकरणसामर्थ्यं विभ्राणा अकस्मात्सुरेन्द्रशिरः-  
कम्पं दृष्ट्वा प्रोवाच, "स्वामिन्! साम्प्रतं शिरःकम्पनकारणं तु न किमपि दृश्यते  
ततः किं निमित्तं तुष्टेन नाथेन शिरःकम्पः कृतस्तदा सुरेन्द्र उवाच "मयाधुना  
ज्ञानदृष्ट्या भरतक्षेत्रे ऋषभस्वामिनः पौत्रो भरतचक्रिणः पुत्रोऽयोध्याधिपः सूर्ययशा  
नाम राजा सात्त्विकानां शिरोमणिर्दृष्टः ।

[हिन्दी] तब उर्वशी देवी जो पूरे संसार को वशीकरण करने में समर्थ थी  
अकस्मात् राजा को आश्चर्य से शिर कम्पित करते देखकर बोली, "हे स्वामी!  
अभी २ कोई ऐसा गीत या नाटक आदि तो हुआ नहीं फिर आपने यह प्रमत्ता-  
वस्था में शिर कम्प क्यों किया? तब सुरेन्द्र ने कहा, "अभी मैंने ज्ञानदृष्टि में  
भरतक्षेत्र में श्री ऋषभस्वामी के पौत्र और भरत चक्रवर्ती के पुत्र अयोध्या के स्वामी  
सूर्ययश नाम के राजा को सात्त्विक राजाओं के शीर्ष स्थान पर देखा हूँ।

[शु०] त्यारे उर्वशीदेवी जे सभस्त संसारनुं वशीकरण करवाभां  
समर्थ होती ते अकस्मात् धन्ने आश्चर्यथी माथुं उलावतो जेधने बोली  
"हे स्वामी! उभलां उभलां ओखुं डोढ गीत के नाटक थयुं नथी. छतां  
प्रसन्न थधने आपे माथुं डेभ उलाव्युं? त्यारे सुरेन्द्रे क्युं: 'उभलां मे'  
ज्ञानदृष्टिथी भरतक्षेत्रमां श्री ऋषभस्वामीना पौत्र अने भरत चक्रवर्तीना  
पुत्र अयोध्याना स्वामी सूर्ययशा नामना राजने अथा सात्त्विक राज-  
आना अग्रणी तरीके जेया.

[सं०] स चाष्टमी-चतुर्दशी-पर्वणोत्तमः कृतबहुयत्नः सुरैरपि चालयितुं न  
शक्यते । यद्वि सूर्यः पूर्वदिशमतिक्रम्य पश्चिमायामभ्युदेति तथा मेरुर्गर्तः कम्पते,  
ममृद्रो वा मर्यादां त्यजेत्, कल्पवृक्षो वा निष्फलो भवेत्, तथाप्येव कण्ठगर्तः  
प्राणैरपि जिनाजायन् ग्वहृतं निश्चयं न मुञ्चति ।

[हिन्दी] यह राजा आठम, चौदश, उपवासादि तब यन्नपूर्वकः करता हैं, पोष्य,  
प्रतिरुमन करता हैं, ग्राम में दौर वजा कर उसकी उद्घोषणा करता हैं, धार्मिक

मोनों को सूचित करता है कि आज पर्वी है अतः नमी पोषण प्रतिफल आदि  
 न्य करें। इन तरह वह तपस्यापूर्वक पर्वगन्धन करना है। यदि हम पूर्व दिशा को  
 छोड़ कर पश्चिम दिशा में उगे और मेरु पर्वत हवा से हिलने लगे, समुद्र मर्यादा  
 छोड़ दे कल्पवृक्ष निष्फल हो जाय तो भी तथा हमारे स्वयं के प्राण कष्ट में आ  
 जाय तो भी यह जिनाजा की तरह अपने निश्चय को नहीं छोड़ेगा। इन तरह का  
 यह निश्चयी मनुष्य जन्म में होना भारी आश्चर्य है यह देख कर ही यह कही जा  
 सकेगा कि यह है।



[ગુ૦] ઇન્દ્રના આવાં વચનો સાંભળીને મનમાં કાંઈક વિચાર કરીને ઉર્વશીએ જવાબ આપ્યો: ‘હે સ્વામી, યોગ્ય-અયોગ્યના જ્ઞાનયુક્ત આપને મનુષ્યના નિશ્ચયની પ્રશંસા કરવી શું યોગ્ય છે? માણસોનું સપ્તધાતુ નિર્મિત શરીર અન્ન ઉપર નભે છે, તેથી તે આટલો દૃઢનિશ્ચયી બની શકે નહીં. મારાં ગીતો સાંભળતાં દેવતા વગેરે મુખ્ય મુખ્ય લોકો પણ પોતાની સૂઝબૂઝ ખોઈ બેસે છે, તેઓ વિચલિત થઈ જાય છે, તેમના ગુણો નષ્ટ થઈ જાય છે. તો પછી આની તો શું ગણતરી? મારે હું ત્યાં જઈને શીઘ્ર તેનો વ્રતભંગ કરાવીશ. ”

[સં૦] इति प्रतिज्ञां विधाय रम्भया सहिता उर्वशी हस्तेन वीणां दधाना स्वर्गा-  
द्भूमिमवतरति स्म । अयोध्यानिकटोद्याने च श्रीऋषभस्वामिनश्चैत्ये मोहोत्पादकम-  
त्यद्भुतं रूपं कृत्वा गायतिस्म । तद्गानमोहिताः पश्चिमृगसर्पाद्या अपि आलेख्य-  
लिखिता इव पापाणघटिता इव वा निश्चलनेत्रास्तस्थुः ॥

[હિન્દી] ऐसी प्रतिज्ञा करके उर्वशी देवी रम्भा नाम की अप्सरा के साथ हाथ में वीणा ले कर स्वर्ग से भूमि पर आई । अयोध्या के निकट बगीचे में श्री ऋषभदेव स्वामी के मन्दिर में मोह को उत्पन्न करने वाले अत्यन्त मनोहारी रूप धारण कर मधुर स्वर से गीत गाने लगी । उस के गीत राग से मोहित पक्षी, हिरण, सर्प आदि जन्तु भी चित्र लिखित से रह गये । अथवा पत्थर की मूर्तियों की तरह अपलक नेत्रवाले हो गये । वे सब दत्त चित्त हो कर गीत सुनने में मग्न हो गये ।

[ગુ૦] આવી પ્રતિજ્ઞા કરીને ઉર્વશીદેવી રંભા નામની અપ્સરાની સાથે હાથમાં વીણા લઈને સ્વર્ગમાંથી પૃથ્વીપર આવી, અને અયોધ્યાની પાસેના બગીચામાં શ્રી ઋષભદેવ સ્વામીના મંદિરમાં ખોદ ઉત્પન્ન કરવા-  
વાળું અત્યંત મનોહારી રૂપ ધારણ કરીને મધુર સ્વરથી ગાવા લાગી. તેના ગીતરાગથી મોહિત થયેલાં પશુ, પક્ષી, હરણ, સર્પ વગેરે જીવ-  
જંતુઓ પણ ચિત્રમાં ચીતર્યા હોય તેવાં સ્થિર થઈ ગયાં. અને પત્થરની મૂર્તિની જેમ જરા પણ હાડ્યા વગર અપલક નેત્રવાળાં થઈ ધ્યાન પૂર્વક તેનું ગીત સાંભળવામાં મસ્ત થઈ ગયાં.

[મં૦] इत्थ श्री सूर्ययगा अथं वाहयिन्वा पश्चाद्बलमानः पथि तयोगतिमधु-  
गानघर्षीन् शुश्राव । तदा वाजिगजपत्नयः पदमपि यानेऽसमर्था अभूवन्, एतत्स्वरूपं

एषा नृपोऽमात्यं प्रति सादरमुवाच, “ भो मन्त्रिन् । मंजारे नादममः सुखदः कोऽपि न दृश्यते, यद्व्यात्पणवोऽप्यमी ईदृग्मोहिताः सन्ति । नादेन देव-दानव-दूर-जगि-न्यादयः सर्वेऽपि प्रायो व्रजीभवन्ति । ततो वयमपि कृपमप्यामिनं नमस्कृतुं तत्रैवं यामस्तत्र गता एतद्गोयस्वादमपि लप्स्यामहे ।

[हिन्दी] दूर से श्री सूर्ययज्ञा राजा भी घोड़े के खिलाफ बाण चलाता था तो रामने में उसने भी कानों को भीड़ी लगने वाली वृद्ध में आनन्द व उत्साह व्यक्त करने वाली गीत की ध्वनि सुनी । इन गान की ध्वनि सुनकर इन गान राजा के घोड़े, हाथी और मनुष्य सब एक पांव भी आगे बढ़ने के लगे हुए । ऐसा देखकर राजाने आदर पूर्वक अपने प्रधान से कहा “ इन गान के लो-के समान सुख देनेवाली कोई वस्तु नहीं दिखाने देती, जिन्हें हम सब भी तब से मोहित हो जाते हैं । गीत ने देवता, दानव, राजा व जीव सब को स्वर्ग में ले जाती है । अब अपन भी श्री कृपम देवराजसे ले ईदृग्मोहिता वृद्धों की इस गीत के रस का स्वाद भी लें ।

मंत्रिणे आदिष्टवान् । मञ्चपि नृपादेशात्तयोः समीपं गत्वा सुधामधुरया वाचा संभाष्य  
इत्थमालपत् । हे कन्यके ! युवां के ? युवयोः पतिः कः ? किमर्थमिहागमनं चैत्ये ?  
तत्सर्वं वदत । अथ मन्त्रिवचः श्रुत्वा तयोरेका उवाच आवां मणिचूडविद्याधरराजस्य  
पुत्र्यौ, आवाल्यात् कलास्वेवादरवत्यौ अभूतां, क्रमेण यौवनं प्राप्ते वीक्ष्यास्मत्पिता वर-  
चिन्तां कर्तुं लग्नः । आवां स्वसदृशं पतिमलभमाने स्याने २ अर्हचैत्यानां नमस्याभि-  
निजं जन्म सफलं कुर्यहे ।

[हिन्दी] ऐसी मन्त्रणा करके उसके गान से मोहित राजा, मन्त्री के साथ  
जिन चैत्य के भीतर गया । वहां सुन्दरता में कामदेव की पत्नियों के समान दिव्य  
सौन्दर्य वाली, हाथ में वीणा लेकर सरस रागयुक्त गाती हुई ऐसी दो कुमारी कन्याओं  
को देखा । उन्हें देखते ही उनके स्नेह युक्त फेंके गये काम वाणों से विद्ध हृदय-  
वाला राजा विचार करने लगा । इनका यह अत्यन्त अद्भुत और सुन्दररूप किस  
पुण्यवान् प्राणी के भोग योग्य है ? अब राजा बारम्बार अपनी आंखों से उनके रूपको  
देखता हुआ भगवान के चरणों की वन्दना करके चैत्य से बाहर आया । वहां एक  
स्थान पर बैठकर इन कुमारिका के कुल आदि को जानने के लिये मंत्री को आज्ञा दी ।

પાતાની આંખોથી તેમના રૂપને નિરખતો ભગવાનના ચરણોમાં વંદન કરીને મંદિરની બહાર આવ્યો. ત્યાં એક રથાત ઉપર બેસીને આ કન્યાઓના કુળ વગેરે જાણી લાવવાની મંત્રીને આજ્ઞા મળી.

પ્રધાન પણ રાજ્યની આજ્ઞા મળતાં તેમની પાસે ગયો. ત્યાં જઈને તેણે મધુર વાણીથી આ પ્રમાણે પ્રશ્ન કર્યો: 'હું કન્યાઓ તમે કોણ છો? તમારા પતિ કોણ છે? શા માટે તમે અહીં મંદિરમાં આવ્યા છો? બધું મને કહો.' પછી મંત્રીનાં વચનો આભળીને તેમમાંથી એક કન્યા કહ્યું: 'અમે મણિચૂર વિદ્યાધરરાજની પુત્રીઓ છીએ. જાનકાદેવના મંજીત વગેરે કુલાઓમાં અમને આદર છે. ક્યેં કરીને અમે જ્યાં જ્યાં જઈએ અમારા પિતાએ અમારે યોગ્ય વરની શોધ કરી. પણ તે નિષ્ફળ ગયા. આથી અમે અમારે યોગ્ય પતિ ન મળે ત્યાં જ આવીને ભગવાનનાં મંદિરમાં જઈને ભગવાનનાં ચરણોમાં વંદન કરીએ છીએ.

मंत्रिणे आदिष्टवान् । मंत्र्यपि नृपादेशात्तयोः समीपं गत्वा सुधामधुरस्या वाचा संभाष्य इत्थमालपत् । हे कन्यके ! युवां के ? युवयोः पतिः कः ? किमर्थमिहागमनं चैत्ये ? तत्सर्वं वदत । अथ मन्त्रिवचः श्रुत्वा तयोरेका उवाच आवां मणिचूड़विद्याधरराजस्य पुत्र्यौ, आचाल्यात् कलास्वेवादरवत्यौ अभूतां, क्रमेण यौवनं प्राप्ते वीक्ष्यास्मत्पिता वर-चिन्तां कर्तुं लग्नः । आवां स्वसदृशं पतिमलभमाने स्थाने २ अर्हचैत्यानां नमस्याभि-निजं जन्म सफलं कुर्वहे ।

[हिन्दी] ऐसी मन्त्रणा करके उसके गान से मोहित राजा, मन्त्री के साथ जिन चैत्य के भीतर गया । वहां सुन्दरता में कामदेव की पत्नियों के समान दिव्य सौन्दर्य वाली, हाथ में वीणा लेकर सरस रागयुक्त गाती हुई ऐसी दो कुमारी कन्याओं को देखा । उन्हें देखते ही उनके स्नेह युक्त फेंके गये काम वाणों से चिद्ध हृदय-वाला राजा विचार करने लगा । इनका यह अत्यन्त अद्भुत और सुन्दररूप किस पुण्यवान् प्राणी के भोग योग्य है ? अब राजा बारम्बार अपनी आंखों से उनके रूपको देखता हुआ भगवान के चरणों की वन्दना करके चैत्य से बाहर आया । वहां एक स्थान पर बैठकर इन कुमारिका के कुल आदि को जानने के लिये मंत्री को आज्ञा दी ।

प्रधान भी राजा की आज्ञा से उनके पास गया । वहां उसने उनसे मधु-वाणी से इस प्रकार प्रश्न किये । हे कन्याओं ! तुम कौन हो ? तुम्हारे पति कौन हैं ? किस लिये तुम यहां चैत्य में आई हो । यह सब मुझे बताओ । इसके बाद मंत्री के वचन सुनकर उन दोनों में से एकने कहा । हम मणिचूड़ विद्याधरराज की पुत्रियां हैं, वचन से ही मंगीत एवं कला में आदर वाली हैं, क्रम से हम जवानी को प्राप्त हो गई, यह देखकर हमारे पिताने हमारे योग्य वर की खोज की, किन्तु वे असफल रहे । हम भी अपने योग्य पति के अभाव में स्थान स्थान पर अर्हत् चैत्यों में जाकर भगवान् को वन्दन कर अपना जन्म सफल कर रही हैं ।

[गु०] आवी भत्रणा करीने उर्वशीना गानथी मोहित थयेले। राजा पोताना मंत्री साथे मंदिरमां गयो। त्यां जधने सुंदरतामां काम-देवनी पत्नीयो लेवा सौंदर्यवाणी अने हाथमां वीणा लधने सरस रागथी गाती थे हुंवारी कन्याओने राजाये लेधे। तेने लेधने ज तेभागे ईडला स्नेहयुक्त कामभागीथी वींधायेला हृदयवाणो राजा विचार करवा लाग्यो। आ कन्याओनुं अत्यंत अद्भुत अने सुंदर रूप कथा पुण्य-शाणी प्राणीना भाज्यमां भोगववानुं लब्धुं हसे ? हवे राजा बारबार

પાનાની આંગણથી નેમના રૂપને નિરૂપના ભગવાનના અંગે આ વદન કરીને મંદિરની બહાર આવ્યા. ત્યાં એક સ્થાન ઉપર બેસીને આ કન્યાઓના કુળ વગેરે બાબતી સાચવાની મંત્રીને આજ્ઞા કરી.

પ્રધાન પણ રાજની આજ્ઞા મળતાં નેમની સાથે ઉભા થઈને નેમને મધુર વાણીથી આ પ્રમાણે પ્રશ્ન કર્યો: 'તે કન્યા કે નેમને કોઈ નવામાં પતિ કોણ છે? આ માટે તમે અહીં અંદરના રાજાને કહે, 'મધુ' મને કહે.' પછી મંત્રીના વચને અંતરજને પેદા થઈ કન્યાને કહ્યું: 'અંતર મનિષ્યુર વિશાલમ્બાજની પુત્રીએ કહેલું નેમને કે આ અંગીત વગેરે કથાઓમાં આમને આદર કે શ્રદ્ધા કરીને સ્વયંવર આટલે અમારા પિતાએ આમને આજ્ઞા કરી કે આ કન્યાને જે નિઃકળ જણા, આથી અંતર અમારે સાચા નિર્ણય કરીને આજ્ઞા આપે તો ભગવાનના મંદિરના આજ્ઞા મળવાનું નેમને આજ્ઞા આપે કન્યાએ કીધી.

અવ મેરા તો યહ નિશ્ચય હૈ કિ આપ દોનોં પર શ્રી ઋષભદેવ સ્વામી પ્રસન્ન હૈ, અતઃ અકસ્માત્ આપકો સૂર્યયશા જૈસા રાજા વર રૂપ સે પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । મંત્રી કે એસા કહનેં પર ઉન્હોંનેં કહા કિ હમ તો એસા પતિ ચાહતી હૈં જો હમારે કથનાનુસાર ચલે, હમારે આધીન રહે । મંત્રીનેં કન્યાઓં કે વિચાર રાજા સે કહે, ઓર રાજાનેં મી કહા કિ જિસ તરહ યે કન્યાએં કહેંગી વૈસા હી કરુંગા । જવ દોનોં ઓર સે પરસ્પર વાતેં હો ગઈ તો વહાં હી શ્રી જિનેશ્વર આદિનાથ કે સમ્મુખ હી ઉન્કા વિવાહ હો ગયા ।

[ગુ.] માનવજન્મ વારંવાર મળવો કઠણ છે. આ અયોધ્યા નગરી પણ તીર્થ જેવી છે. તેથી અહીં શ્રી ભરત ચક્રવર્તીએ બનાવેલા આ ચૈત્યમાં આદિ જિનેશ્વરનું વંદન કરવા માટે અમારું આગમન થયું છે.

આવી રીતે જ્યારે તેમણે મંત્રીને પોતાની હકીકત કહી ત્યારે મંત્રીએ કહ્યું: ‘આપ આ સૂર્યયશા રાજાની સાથે વિવાહ કરી લ્યો તો ઘણું સારું થશે; કારણ કે આ રાજા ઋષભદેવ સ્વામીનો પૌત્ર અને ભરત ચક્રવર્તીનો પુત્ર છે. એટલું જ નહિ પણ એ બધી કલાઓમાં પ્રવીણ છે અને તેનો પૂરો જાણકાર છે. તે સુંદર છે અને સદ્ગુણોથી યુક્ત તથા બળવાન પણ છે. મને તો લાગે છે કે તમારા બન્ને પર ઋષભદેવ સ્વામી પ્રસન્ન છે એટલે અનાયાસે જ તમને આ સૂર્યયશા જેવો રાજા વરતા રૂપમાં પ્રાપ્ત થયેલ છે.’

મંત્રીનું આવું કહેવું સાંભળીને તેમણે કહ્યું: ‘અમે તો એવો પતિ ઇચ્છીએ છીએ કે જે અમે કહીએ તેમ કરે અને અમારે આધીન રહે.’

મંત્રીએ કન્યાઓનો વિચાર રાજાને કહ્યો ત્યારે રાજાએ કબૂલ કર્યું કે જે પ્રમાણે કન્યાઓ કહેશે તેમ જ હું કરીશ. જ્યારે બન્ને બાળુઓથી પરસ્પર વાતો થઈ ગઈ ત્યારે ત્યાંજ શ્રી જિનેશ્વર આદિનાથની સામે જ તેમનો વિવાહ થઈ ગયો.

[મં.] તત્ત્વયોઃ પ્રીતિગ્માકૃષ્ટો ભૂપતિઃ સંસારે તદ્ભોગમેવ સારં મન્યમાનોઽહ-  
નિયં તામ્યાં મહ વિવિધાન્ ભોગાન્ શુભ્રાનો વિમ્મૃતાન્યકૃત્યઃ સુલેન કાલં નિનાય ।  
પરદા મંધ્યામમયે તામ્યાં પન્નીમ્યાં યુતઃ સૂર્યયશાન્યો મવાશં યયૌ । તદા “ મો લોકાઃ !  
શ્વેત્કૃષ્ણપર્વ માવિ તત્ત્વદાગધને સાદર્શન્યમિતિ પટહોઽધોપળાં તામ્યાં કપટઘ્નીમ્યાં





इरेवा भारे प'यभी श्रेष्ठ छे. आ पर्वना द्विसेाभां इरेलु' पुण्य स्वर्ग' अने भोक्ष आपवावाणु' अने सुण देनारु' होय छे.

[सं०] तस्माच्चतुष्पर्व्यामखिलं गृहव्यापारं परित्यज्य शुभं कर्म विधेयम् । पुन-  
श्चतुःपर्व्यां स्नान स्त्रीसंग-कलह-द्यूत-क्रीडापहास्य मात्सर्य-क्रोधादि-कपाय-संग-प्रमा-  
दादि न किमपि कर्तव्यं, प्रियेष्वपि ममता न विधेया, परमेष्ठि-स्मरणादि-शुभ-  
ध्यानवता भाव्यं सामायिकं पौषधं च पष्टाष्टम-प्रमुखं तपश्च कर्तव्यं जिनपूजाश्च विधेया  
इत्थमेतानि पर्वण्याराधयन् जनः पुण्यान्यर्जयति ततः क्रमेण कर्माणि क्षपयित्वा मुक्तिं याति ।

अतो हे कान्ते ! सप्तम्यां प्रयोदश्यां च लोकप्रबोधाय अयं पटहोद्बोधो मदा-  
देशात् प्रजायते । अयोर्वशी एतन्नृपवचः श्रुत्वा तन्निश्चयचमत्कृतापि मायावचनरप्रप-  
ञ्चन जगाद, 'हे नाथ ! इदं मनुष्यत्वमिदं रूपमिदं राज्यं सर्वं तपःकलेशादिभिस्त्वया  
कथं विडम्ब्यते ! यथेच्छं सुखानि भुंक्ष्व पुनर्मानवो भवः क्व ? राजसद्भोगाश्च क्व ?

[हिन्दी] इसलिये चारों पर्वों में सारे गृह व्यापार (कर्म) छोड़कर शुभ कर्म  
करने चाहिये । क्योंकि इन दिनों में थोड़े से धर्म आराधन कर्म करने से भी मनुष्य  
को अधिक फल की प्राप्ति होती है । वह नरक और तिर्यंच के बंध से मुक्त हो जाता  
है, शुभायु उसे मिलती है, देवलोक की प्राप्ति होती है । अतः मानवों को अन्य  
व्यापार (कर्म) रोकने चाहिये । फिर इन चारों पर्वों में शरीर शुश्रुषार्थ स्नान नहीं  
करना चाहिये, परस्त्री व स्वस्त्री का गमन का त्याग करना चाहिये । लोगों की  
मजाक उड़ाना, उनसे हंसी करना, उनकी मस्करी करना यह सब छोड़ना चाहिये ।  
गाली गलौच करना, जुआ खेलना, वैरभाव करना, ईर्ष्याभाव करना, क्रोध आदि  
कपायों को भी छोड़ देना चाहिये । दुष्ट आदमियों की संगति नहीं करनी चाहिये ।  
धर्म के कार्यों में प्रमाद (गफलत) नहीं करना चाहिये । अपने स्नेहीजनों में ममता  
भाव भी नहीं रखना चाहिये । इन दिनों में ॐ नवकार मंत्र का ध्यान, जप व आरा-  
धना करनी चाहिये । निरतिचार सामायिक, पौषध करना, छठ अट्टमादि तपस्या  
कर्म देवों के लिये करना चाहिये । फिर जिन भगवान की पूजा व उनको वन्दन  
करना चाहिये । स्वामिवच्छल, नवकारसी, प्रभावना आदि धर्म कार्य करना चाहिये ।  
शास्त्र व व्याख्यान सुनना चाहिये । इस तरह के धर्मकृत्य इन पर्वतिथियों का  
आगधना कर्तव्य है यदि मनुष्य करे तो उसमें धर्म और पुण्य के अंकुर की वृद्धि  
होती है । अनुक्रम से चिकने कर्मों को समाप्त कर वह मोक्ष को प्राप्त करता है ।

इस लिये कान्ते ! मानव और तेरम के दिन लोगों को प्रबोध देने के लिये

मेरी आज्ञा ने वह शिरोधार्य पीठा। राजा के इन वचनों को सुनकर श्री हनुमान्  
निश्चय को समस्तगत स्वयं चमत्कृत होना एवं श्री उर्वरी कण्ठ वचनों के शब्दों के  
शोभा के नाथ ! यह अनुष्ठान कितना दुर्लभ है ? फिर ऐसा सुन्दर नाम तो सदा  
लक्ष्मी, ये उच्चम योगप्रियाय, ये मय दाम्पत्य कण्ठ मिलने के नाम तो सदा सदा  
वरेण कर्मके इन प्राण साधनों और नामधियों को स्मरण करना चाहिये । ये नाम  
आप को स्वेच्छानुसार सदा भोग योगिनी, ये सदा सदा सदा सदा सदा सदा  
मिलने हैं ? ( हर्षलये अहं आप इस उद्देश्य के बना कर तो श्री हनुमान्  
श्री नमोऽर्पणं धर्मं धर्मं धर्मं धर्मं )

વચનો સાંભળીને અને તેનો દૃઢ નિશ્ચય જાણીને પ્રભાવિત થતી ઉર્વશી પ્રપંચથી કપટ વચનો બોલી : ‘ હે નાથ, આ મનુષ્યજન્મ કેટલો દુર્લભ છે ? પછી આવું સુંદર રૂપ, આ રાજ્યલક્ષ્મી, આવા ઉત્તમ ભોગવિલાસ-આ બધું વારંવાર ક્યાં મળે છે ! મારે આપ તપરૂપી ક્લેશ કરીને આ બધી પ્રાપ્ત થયેલી સામગ્રીઓ તથા સાધનો નકામા ગુમાવો નહીં. હે રાજા ! આપે તો સ્વેચ્છાનુસાર આ સુખો ભોગવવાં જોઈએ. આવાં રાજ્ય-સુખ અને ભોગો વારંવાર થોડાં જ મળે છે ? મારે આપ આ ઉદ્ધેષ-પકને મના કરી દેા અને તમે પોતે પણ તપ વગેરે ધર્મકર્મને છોડી દેા.”

[સં૦] અથ કર્ણયોસ્તસ્રપુતુલ્યં તસ્યા વચનં શ્રુત્વા નૃપ ઉવાચ રે રે ! ધર્મનિન્દા-માલનસ્વભાવે ! અધમે ! इयं तव वाणी मनागपि विद्याधरकुलाचारोचिता न दृश्यते । तव सकलं चातुर्यं धिक्, रूपं वयः कुलं च धिक्, येन त्वं जिनपूजादिकं सद्धर्मकृत्यं निन्दसि, पुनर्मनुष्यत्व-सद्रूपारोग्य-राज्यादीनि तपसा प्राप्यन्ते तत्तपः कः कृतज्ञो नारा-धयेत् ? यो नाराधयेत् स कृतघ्न एव, धर्माराधनतो हि देहस्य विडम्बनं न स्यात् । धर्मं विना केवलं विषयैस्तु विडम्बनमेव, तस्माद्यथेच्छं धर्मः कर्तव्यः । पुनः पुनर्मानवो भवः क्व ? व्रतधारका मृगसिंहादिवाला अपि अष्टम्यां पाक्षिके चाहारं न गृह्णन्ति, तर्हि अहं कथं गृह्णामि ?

[हिन्दी] इसके बाद कानो में तपावे हुए सीसे को उडेलने के समान कर्ण कटु उन वचनों को सुनकर राजा बोला, “अरे ! रे ! धर्मनिन्दा से मलिन स्वभाव वाली ! हे नीच ! यह तुम्हारी वाणी थोड़ी सी भी विद्याधर कुल स्वभाव के अनु-रूप नहीं है । तुम्हारी सारी चतुराई को धिक्कार हैं, तुम्हारे रूप को, तुम्हारी उम्र को धिक्कार हैं, तुम्हारे कुल को धिक्कार हैं, जो तुम जिनपूजादिक सद्धर्मकृत्यों की निन्दा करती हो । यह मनुष्यजन्म और यह सुन्दर रूप, यह राज्य और यह तपस्या, जिस तप के प्रभाव से प्राप्त होती हैं उस तपस्या को कौन अधम व मूर्ख पुरुष नहीं करें ? अर्थात् अधम और मूर्खों को छोड़कर सभी उसकी आराधना करते हैं । जो आदमी धर्म की आराधना नहीं करता हैं वह कृतघ्न है । यह निश्चय हैं कि धर्म की आराधना से मनुष्यों को किसी तरह की विडम्बना नहीं हो सकती । धर्म के बिना विषयों की आराधना तो एक तरह की विडम्बना ही हैं ( क्योंकि राज्य सम्पत्ति अस्थिर हैं, इस पृथ्वी पर अनेक राजा हो गये हैं । उन्होंने राज्य के लिये उनकी स्त्रा के लिए अनेक मंग्राम भी समय २ पर किये हैं परन्तु राज्यलक्ष्मी

आज तक गई नहीं । ) हमसे धर्मपालन ही श्रेष्ठ है यही उत्तम है चाहे कितना सम्पन्न  
 रूप मिलना दुर्लभ है । ( कोई पूर्व पुण्ययोग से ही यह गजगति प्राप्त हो ही ले  
 अगर अब भी धर्मकृत्य नहीं करेंगे तो सब करेंगे । ) देखो मृत्यु सिद्ध अति पत  
 और परी भी अष्टमी और चतुदशी को आहार ग्रहण नहीं करेंगे तो मैं समझता  
 हूँ कि हम सब रूप धर्म को कैसे छोड़ें । अतः मैं इन दिनों में बहुत सा  
 धर्म कर सकता हूँ ।

कुर्वे, हे स्त्री ! गम राज्यं ग्रयातु प्राणक्षयोऽस्तु परं पर्वतपसोऽहं भ्रष्टो न भवामि । तत इत्थं क्रोधाकुलं नृपवचः श्रुता उर्वशी मोहमायां प्रकुर्वन्ती पुनरुवाच, स्वामिन् ! भवतः कायक्लेशो मामूदिति प्रेमरसत एव मयैतद्वचः प्रोक्तं, तस्मात् क्रोधावसरोऽत्र नास्ति । पूर्वं तु आवाभ्यां पितृवचः विमुखीभ्यां स्वच्छन्दचाचारी नृपतिर्न वृतः साम्प्रतं पूर्व-कर्मपरिपाकात् त्वं वरो वृतस्तेनावयोः संसारसौख्यं शीलं च सर्वमकस्माद् गतं यदि स्वाधीनपुंस्त्रियोर्योगो भवेत्तदा सांसारिकसुखं स्यात्, अन्यथा रात्रिदिवसयोगवद्विडम्बनमेव ।

[हिन्दी] जो मनुष्य ज्ञानवान है और धर्मााराधन से विमुख है उसके ज्ञान को धिक्कार है, जो लोग श्री आदिनाथ स्वामी से प्ररूपित पर्व और धर्म की आराधना नहीं करते उन्हें धिक्कार है, मैं उन श्री आदिनाथ स्वामी के इस धर्म को चाहें प्राणों का नाश हो, मेरा राज्य चला जावे तो भी नहीं छोड़ सकता । हे स्त्री ! मैं किसी भी हालत में तप भ्रष्ट न होऊंगा । इस तरह के क्रोध से भरे हुए राजा के वचनों को सुनकर मोहरूप माया फैलाती हुई वह उर्वशी फिर मधुर वाणी से कहने लगी । हे स्वामिन् ! आप अपनी काया को क्यों व्यर्थ ही क्लेश दे रहे हो । मैंने जो कुछ कहा आपके शरीर को कष्ट न हो यह जान कर ही कहा था । इसमें क्रोधित होने की क्या बात है ? अब यह अवसर क्रोध करने का नहीं है । हे राजन् ! पहले तो हमने अपने पिता के वचनों को न मानने की गलती की, फिर स्वाधीनतासे किसी राजपुत्र से शादी नहीं की, और अब पूर्व जन्मों के कर्मविपासे आप का वरण क्रिया, इससे हमारे संसार मन्त्रन्धी सारे सुख नष्ट हो गये और अकस्मात् हमारा शील भी गया । यदि स्त्री और पुरुष में परस्पर स्वाधीनता हो तो संसार के सुखों का आनन्द के साथ उपभोग हो सकता है । अब तो रात दिन केवल विडम्बना ही अवशिष्ट रह गई है ।

[गु०] જે મનુષ્ય જ્ઞાનવાન છે અને ધર્મના આરાધનથી વિમુખ છે તેના જાનને ધિક્કારે છે. જે લોકો શ્રી આદિનાથસ્વામીએ પ્રબોધેલાં પર્વ અને ધર્મની આરાધના નથી કરતા તેમને ધિક્કાર છે. હું આ આદિનાથસ્વામીએ કહેલા ધર્મને મારા પ્રાણનો નાશ થશે, મારું રાજ્ય આશ્રય બંધે તેા પાત્ર નહીં છોડું. હે સ્ત્રી, હું ક્રોધપણ હાલતમાં તપભ્રષ્ટ નહીં થાઉં.” આ જ્ઞાતનાં ક્રોધથી ભરેલાં રાજાનાં વચનો સાંભળીને મોહકપી માયા ક્લેશવતી ઉર્વશી કહી મધુર વાણીથી કહેવા લાગી: ‘હે સ્વામિન ! આપ આપની કાયાને શા માટે નકામો ક્લેશ આપો છો ? મેં જે કાંઈ

કર્મ ને તમારા શરીરને તકલીફ ન પડે એ ઉદ્દેશથી કર્યું હતું. કેમ કે  
કોઈપણ થવાની કંઈ વાત છે? આ અવગર કોઈ કરવાનો નથી. તેમ જ  
જોઈએ તો અમે અમારા પિતાનાં વચ્ચેના ન માનવાની વાત કરી. તેમ જ  
સ્વતંત્ર વિચારથી કોઈ રાજપુત્રની સાથે લગ્ન ન કર્યો એવાં કેટલાંક  
કર્મોના ઉદ્દેશથી આપતું વચ્ચું કર્યું; એથી અમારા અંગનાં વચ્ચે  
નહીં થઈ જાય અને અમારું શીલ પણ જાય. તે જુદાં અને એ  
અંગ સ્વાર્થીન હોય તો જ અંગનાં અંગનાં અંગનાં એવાં કેટલાંક  
એ તો રાત-દિવસ મુશ્કેલીઓ જ પાડી રહ્યાં છે.

એમનાં એવાં વચનો સાંભળીને તેમના પર મોહિત થયેલ તે રાજાએ પોતાનાં વચનો યાદ કરીને કહ્યું: “હે પ્રિયે, મારા દાદાએ જે ધર્મ ઉપદેશ્યો હતો અને મારા પિતાએ જે ધર્મનો સ્વીકાર કર્યો હતો, હું તેનો પુત્ર થઈને એ ધર્મનો લોપ કેમ કરું?”

[સં૦] હે હરિનાથિ ! મમ સકલાં પૃથ્વીં, કોશં, ગજાશ્વાદીંશ્ચ સર્વાં ત્વં સ્વયં ગૃહાણ પરં યેન ન સૌખ્યં ન ચ ધર્મસ્તદકૃત્યં માં મા કારય । તતઃ સાપિ હપાદ્વિહસ્ય કોમલવાण्या પ્રોવાચ, “હે રાજન્ ! ભવાદૃશાં સત્યવચનમેવ સદ્મુક્તં યતો યેન પાપિના સ્વાઙ્ગીકૃતો વિઘાતઃ કૃતઃ સોઽશુચિસ્તસ્ય ભારતપૃથિવી અતિ-ચિઘતિ । હે નાથ ! યદિ ત્વયા ઇદમપિ કાર્યં ન સિદ્ધયતિ, તદા રાજ્યાદિદાતૃત્વં કથં સેત્સ્યતિ ?

[હિન્દી] હે મૃગ કી तरह ચંચલ નેત્રોંવાલી ! પ્રિયે ! તુમ મેરા સારા રાજ્ય, સારી પૃથિવી, સારા રાજાના, હાથી, ઘોડે આદિ સર્વ સમ્પત્તિ લે લો પરંતુ જિસસે સુખ ઓર ધર્મ કા નાશ હો એસે અકૃત્ય કરને કા મુઝે ન કહો । (હે પ્રાણિયોં ! દેરો સૂર્યયશ રાજા ધર્મ કે નાશ સે વચને કો અપના સર્વસ્વ દેને કો તત્પર હો ગયા, ઇસ સે આપ સવ કો સોચના ચાહિયે કિ ઇન ઉર્વશી અપ્સરાઓં પર રાજા કા ઇતના મોહ થા ફિર મી વહ ધર્મ કે પર્વ કે દિનોં કા ત્યાગ કરના નહીં ચાહતા પ્રત્યુત ઉસકે વદલે મેં અપનેં પ્રાણ ઓર સમ્પત્તિ દેના સ્વીકાર કરતા હૈ । જો પ્રાણી ધર્મ કો પ્રાપ્ત કરકે કિસી કે મી કહનેં સે ઉસે છોડ દેતે હૈં, ઓર શ્રી અગ્નિહંત ભગવાન કી સાક્ષી મેં લીઁ હૃડે સૌગંધ કી પરવાહ નહીં કરતે, ઉન્હેં નરક કે ભયંકર કષ્ટ ભોગને હી પડેગે, અતઃ ભગવંતોં કા કથન હૈ કિ જો કિસી કે કહને સે ધર્મકૃત્ય નહીં છોડેગા વહી પ્રાણી મુક્તી હોગા ” )

રાજા કે એસે વચન મુનકર ઉર્વશિયાં હંસકર બોલી “હે મહારાજ ! આપ તો જો કુછ વચન નિઠાલતે હૈ વે સવ સત્ય હી હૈં, હમ આપ કી કિતની પ્રશંસા કરેં ? જો પ્રાણી સ્વયં સ્વીકૃત વચનોં કી પરિપાલના સે ભ્રષ્ટ હો જાતે હૈં, વે અશુચિ (અશુદ્ધ) હૈં । એમે પાપિયોં કે ભાર સે પૃથ્વી કો મી કષ્ટ લગતા હૈ । (વહ કહતી હૈ કિ યદ પાપી મુજે ભાગલાન કરના હૈં, એમે માનસોં કા મુખ દેખના મી ટીક નહી ।)

હે સ્વામી ! યદિ આપમે જરા મા મી કામ સિદ્ધ નહીં હુઆ તો રાજ્યાદિ દેને કા કામ તો હી હી કેમે મકતા હૈ ?

[ગુરુ] હે મૃગતા જેવાં ચંચલ નેત્રોવાળી ડિયા. તું મારું મન  
 ગત્ય. આખી પૃથ્વી, સમરન ખજાનો. દાથી. ઘાણ વડેને મારું મન  
 જલે છે. પણ જેતાથી સુખ અને ધર્મનો નાશ થાય તેવાં મારું મન  
 મને ન હોય. "



कुछ गवां बैठी । आप का तो कोई पता भी नहीं है ) हे नाथ ! यदि आप पर्व भंग करना न चाहें तो मेरे सामने आदिनाथस्वामी के मन्दिर को गिरा दीजिये । उनके ऐसे वचन सुनकर वह राजा वज्र से चोट खाकर आदमी जैसे बेहोश हो जाता है ठीक उसी तरह राजा भी मूर्च्छा को प्राप्त हो कर जमीन पर गिर पड़ा । तब राजा के सेवकों और मन्त्रियों ने आकुल—व्याकुल चित्त से शीतल जल आदिके उपचार से राजा की मूर्च्छा दूर की ।

[गु०] हे राज ! तमारे भातर न अमे अमारा पिता विद्याधरनां अश्वर्या छोडी दीधां, ( राज्य तो भारा पितानुं पणु भोटुं हतुं. ) तो हवे राज्य वगेरेने शुं करीये ? ( अमे तो आपनी उपर विश्वास राभीने ये अधुं गुभावी जेठां, अने आप तो हवे आम डहो छो ! ) हे नाथ, जे हवे आप पर्वभंग करवा न खाहता हो तो भारी सामे आदिनाथ स्वामीनुं भदिर तोडी पाडो. ”

येनां आपां वयनो सांभणीने ते राज वज्रना आघातथी भाणुस जेम जेहोश थधने पडी जय तेम मूर्च्छा पाभीने जमीन उपर पडी गयो. तयारे राजना सेवकोये अने मंत्रीओये आकुल—व्याकुल थधने शीतल जल वगेरेना उपचारथी राजनी मूर्च्छा दूर करी.

[मं०] अथ सूर्ययशा नृपः स्वपुरस्थितां तां स्त्रियं दृष्ट्वा कुपितो जगाद, “ रे अधमे ! अयं तवाचारो वाण्या मत्पुरः स्वकुलाधमतां विकिरति यत उद्गार—वदाहारो भवेत् । त्वं विद्याधरपुत्री न किन्तु चाण्डालपुत्री दृश्यसे । मया मणिभ्रमेणैव काचखंडादस्त्रक्रे । यो देवस्त्रैलोक्यनाथस्त्रैलोक्यवन्दितरतत्प्रासादभङ्गकृत् कोऽपि कथं भवेत् ? तस्मात् हे स्त्री ! स्वयं स्ववचसा वद्धं मामनृणं कर्तुं धर्मलोपं विनाज्य—घाचस्व ? पर्वलोपं चेत्यध्वंसं चाहं सर्वथा न करोमि । तच्छ्रुत्वा सापि ईषद्विहस्य पुनस्तमुवाच हे नाथ ! अन्यदन्यदिति च तद्वचो दूरतो याति । यदिदं त्वं नाज्ञीकर्ता तर्हि त्वं स्वयं स्वपुत्रस्य शिरश्छित्त्वा सद्यो मयं देहि ! अथ राजा विमृश्य वदतिस्म हे मुलोचने मत्पुत्रो मत्तोऽभवत् तस्मान्मम शिस्तव करतलस्थमस्तु ।

[हिन्दी] इसके बाद सूर्ययशा राजाने मामने बैठी हुई उन अप्सराओंको देखा, उन्हें देखते ही राजा क्रोध से तप गया और कठोर वचनों से बोला, “ अरे अधमे ! ये तुम्हारे वचन आचार को तथा तुम्हारे कुल की अधमता को दिखाते हैं । तुम

शिशुओं की पुत्रियाँ नहीं हो, किन्ती चाण्डाल की पुत्रियाँ हो ! ऐसे मन्दिर के  
 शोक में कांच के टुकड़ों का आदर दिया । अने पण्डितों ! जो देव-देवियों की  
 लोक के स्वामी हैं और तीनों लोकों में पण्डित हैं, उनके मन्दिर को देने में  
 क्या है ? हम लिये हैं स्त्री ! मैं स्वयं अपने ही वचनों में कहने वाले हूँ कि  
 अतः तुम मुझे छुट और धर्म लोप के कृत्य करने का मन करो, दमोदर के मन्दिर  
 अनाद हो और मांगो ।

पर्वों का लोप और चैन्य का भ्रम तो मैं किसी तरह नहीं कह सकता --  
 मन्दिर वह भी सुसज्जित और पितृ-दोला, "हो नाथ" आदि से पूजा-पाठ --  
 करने वाले हैं । परन्तु एक का भी पालन नहीं कर सकते हैं । अतः मैंने  
 आप अपने ही हाथों ने अपने पुत्र का शिर काट कर देना ही कहा है ।  
 राजा ने धैर्य भाग्य कर कहा । "हो मन्दिर" ऐसा ही कहेंगे ।  
 मैं अतः मेरा जिर ही मैं नष्ट होपता । ।"

[सं०] इत्युक्त्वा नृपः करेण खड्गं गृहीत्वा यावत् स्वशिरःछेदार्थमुद्यतो भवति तावदेव सा तस्य खड्गधारां वचन्ध । न पुनस्तस्य सत्त्वस्य, ततो राजा खड्गधारा-  
बन्धनाद्विलक्षः सन् कण्ठनालविडम्बकं नवं नवं खड्गं गृहीतवान् । यदासौ भूपति-  
र्मनागपि सत्त्वान्न चचाल तदा ते स्त्रियौ स्वकीयं रूपं प्रादुर्भूत्यान्यादराज्जय जयेत्यु-  
चतुः पुनः ।

जय त्वं वृषभस्वामि-कुलसागरचन्द्रमः ।

जय सत्त्वतां धर्य ! जय चक्रीशनन्दन ! ॥ १ ॥

[हिन्दी] यह कहकर राजा ने तलवार हाथ में ली । वह ज्योंही अपने सिर को काटने को तत्पर हुआ त्योंही उस अप्सरा ने उस तलवार की धार बांध दी । राजा ने तलवार के वार को व्यर्थ जाते देख कर नई नई कई तलवारें मंगवाई, और सिर काटने का प्रयत्न किया परन्तु असफल रहा । अब राजा अपने वचन के भंग के भय से उदासीन हो गया पर राजाने अपना सत्त्व नहीं छोड़ा । यह देखकर वे दोनों अप्सराएं अपने मानवी रूप को छोड़ कर देव रूप से प्रगट हुई और आदर से राजा की जयजयकार करने लगी ।

हे ऋषभदेवस्वामीजी के कुल रूप सागर में उत्पन्न चन्द्रमा के समान यशस्वी सूर्ययश राजा ! हे सत्यवंत ! हे धैर्यवन्त पुरुषों में श्रेष्ठ ! हे चक्रीश नन्दन ! (चक्रवर्ती राजाओं के स्वामी श्री भरत चक्रवर्ती के पुत्र ! ) तुम्हारी जय हो ! जय हो ।

[गु०] आभ डल्लीने राज्ञे तलवार हाथमां लीधी. ते जेवा पोतानुं माथुं डायवा तेयार थये तेवी ते अप्सराओये तलवारनी धार भांधी दीधी. राज्ञे तलवारना वारने व्यर्थ जेतो जेधने नवी नवी भील डेटलीये तलवारे मंगावी अने पोतानुं माथुं डायवानो प्रयत्न कर्यो पण तेमां निष्फल गयो. हवे राज पोताना वचनभंगना लयथी उदासीन थय गयो, छतां पण तेगे पोतानुं सत्त्व छोड्युं नही. आ जेधने ते अन्ने अप्सराओ पोतानुं मानवीर्य छोडीने देव रूथी प्रगट थय अने आदरपूर्वक राज्ञेना जयजयकार करवा लागी.

“ हे ऋषभदेव स्वामीजीना कुण्डली सागरमां उत्पन्न थयेल चंद्रमा जेवा यशस्वी सूर्ययश राज, हे सत्यवंत ! हे धैर्यवाणा पुरुषोमां श्रेष्ठ ! हे चक्रीश नन्दन ! (चक्रवर्ती राजाओना स्वामी भरत चक्रवर्तीना पुत्र) तमारे जय हो, जय हो !

[illegible]

કરવા અને અમારા મનની ખાતરી કરવા માટે અમે સ્વર્ગમાંથી પૃથ્વી ઉપર આવ્યા છીએ. પરંતુ હે રાજન્! હે જગત્પ્રભુકુલાવતંસ! ( ત્રણે લોકના સ્વામી શ્રી ઋષભદેવના કુળના મુગટ સમાન ) હે વીર, તમારી જેવા રત્નોને પેદા કરીને જ પૃથ્વી રત્નપ્રસવા કહેવાય છે. (તમારે આ મનુષ્યાવતાર ધન્ય છે. તમારી જેવા લોકો અમારા દેવતાથી પણ વિચલિત થતા નથી. હે રાજન્! અમે તમારી અવજા કરી હોય, તમારે કોઈ અવિનય થયો હોય તો ક્ષમા કરજો. આપ મોટા છો, અને અમારાથી ભૂલ થઈ ગઈ છે, આ પ્રમાણે અપ્સરાઓએ ક્ષમાયાચના કરી.)

આ પ્રમાણે તે બંને રાજની સ્તુતિ કરી રહી હતી તે વખતે દેવેન્દ્ર પોતે ત્યાં પધાર્યા, અને જ્યજ્ઞકારના ધ્વનિ સાથે જ આકાશમાંથી પુષ્પ વૃષ્ટિ થઈ. ત્યારે ઇન્દ્રે ઉપહાસપૂર્વક તે બંને પ્રતિજાબ્રૂષ્ટ અપ્સરાઓને જોઈ. અપ્સરાઓએ રાજના ગુણોનું ગાન કર્યું. પછી સૂર્યશા રાજને શ્રેષ્ઠ મુગટ, કુંડલ, અંગહાર વગેરે આભૂષણો આપ્યાં અને તે બંને અપ્સરાઓ સાથે સ્વર્ગમાં ગયા. ( જુઓ, ધર્મમાં તત્પર તથા દૃઢ રહેનાર લોકોને ઇન્દ્ર વગેરે દેવતાઓ પણ નમે છે. )

[સં૦] સૂર્યયજ્ઞારાજા અપિ સત્યપ્રતિજ્ઞાઃ સન્ સન્નીત્યા પૃથ્વીં પાલયતિ સ્મ ।  
અથ સ રાજા ભરતેશવન્ પૃથ્વીં જિનગૃહમણ્ડિતાં કુર્વન્ શ્રીમંધ્યાત્રયા જન્મ પવિત્ર-  
યન્ શ્રીયુગાદિજિનચરણવન્નિત્યં ચતુર્દશ્યષ્ટમીપર્વ આરાધયામાસ, તથા વ્રતધારિણઃ શ્રાવ-  
કાન મ્વગૃહે ભોજયામાસ ।

[હિન્દી] સૂર્યયજ્ઞ રાજા મ્હો સત્યપ્રતિજ્ઞા સે પ્રમત્ત હોકર શ્રેષ્ઠ નીતિ સે પૃથ્વી કો પાલન કરને લગા । હસકે વાદ ઉસને ભરત ચક્રવર્તી કી તરહ પૃથ્વી મેં કઈ જૈનમન્દિર વનવાયે ઓર ઉસકી શોભા વઢાઈ । કઈ તરહ કી સંઘ યાત્રાએ નિકાલ કર અપને જન્મ કો સફલ કિયા । શ્રી આદિનાથ સ્વામી કે ચરણ કમલ કી તરહ નિત્ય ચતુર્દશી, અષ્ટમી આદિ પર્વો કી આરાધના કી તથા વ્રતધારણ કરનેવાલે શ્રાવકો કો અપને ઘર મોત્રન કમયા ।

[ગુ૦] સૂર્યયજ્ઞ રાજ પણ સત્ય પ્રતિજ્ઞ થઈને શ્રેષ્ઠ નીતિથી પૃથ્વીનું પાલન કરવા લાગ્યો. ત્યાર પછી તેણે ભરત ચક્રવર્તીની જેમ ઘણાં જિન-મંદિરો બંધાવ્યાં અને તેની શોભા વધારી. કેટલીયે સંઘયાત્રાઓ કાઢી



કરને' સે માનવોં કો નિશ્ચય હી મહાન સુખ કી પ્રાપ્તી હો જાતી હૈં । યહ શ્રી વીતરાગદેવ કી વાણી હસ લોક ઔર પરલોક મેં સુખ સમાધિ કો પ્રાપ્ત હો । “હસ પર્વ કે આરાધન સે હસ લોક મેં યશ, કીર્તિ ઔર પરલોક મેં વારહ દેવલોક, નવ ગ્રંથેયક, પાંચ અનુત્તર વિમાન તક પરમ્પરા સે મોક્ષ ઔર શાશ્વત અવંડ સુખ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ।

[ ઇતિ તૃતીય-વ્યાખ્યાનમ્ ]

[ગુન] એટલા માટે હે ભવ્ય જીવો ! શ્રી પર્યુપણ મહાપર્વ આવે ત્યારે પૌપધ સામાયિક કરવાં અને ત્યાગના પરચક્રખાણ લેવાં. વિકથા ન કરવી. વિકથા કરવાથી પ્રયોજન વિનાનાં નિખિડ કર્મખંધ થાય છે. ધર્મના દિવસોમાં પાપકર્મના માર્ગો છોડી દેવા જોઈએ. એકાગ્ર ચિત્તથી ‘કલ્પસૂત્ર’નું શ્રવણ કરવું જોઈએ, કારણ કે આ સૂત્રના શ્રવણથી અવશ્ય આત્માનું કલ્યાણ થાય છે. વળી આ સૂત્રનો મહિમા (મહોત્સવ) કરવો જોઈએ, જેનાથી ઘણા જીવોને પ્રતિષેધ મળે અને જૈનધર્મનું અનુમોદન થાય. “જુઓ, જૈન લોકો કેવા ધર્મી છે, એમનો ધર્મ કેવો સારો છે.” વગેરે ધર્મકૃત્યો કરીને આ પર્વની આરાધના કરવી. આમ કરવાથી મનુષ્યોને નિશ્ચય મહાન સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. આથી વીતરાગદેવની વાણી આ લોક અને પરલોકમાં સુખ સમાધિને અપાવે છે. આ પર્વના આરાધનથી આ લોકમાં યશ, કીર્તિ અને પરલોકમાં આર દેવલોક, નવ ગ્રંથેયક, પાંચ અનુત્તર વિમાન સુધી પરંપરાથી મોક્ષ અને શાશ્વત અખંડ સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે.

[ ઇતિ તૃતીય વ્યાખ્યાન સમાપ્ત ]







કલ્યાણુજી પાઠકે પ્રસન્નચિત્ત થઇને આ અષ્ટાક્ષિકાની સંસ્કૃતમાં રચના કરી. આ સંસારરૂપી સમુદ્રમાં અનેક શ્રીમંત અને ગુણશાલી લોકો થઇ ગયા. એ તપસ્વી લોકોમાં શ્રી જિનહર્ષસૂરિ શ્રેષ્ઠ થયા. જેમના અનેક શિષ્યો જૈનધર્મમાં આદર કરીને સુંદર કથાના વાંચનાર થયા. તેઓના ચરણકમલોમાં તેમના જ આશીર્વાદથી યુક્ત પાઠક શ્રી ક્ષમાકલ્યાણુજીએ આ ગ્રંથ શ્રદ્ધાવાન અને સુંદર મનવાળા પાઠકો અને શ્રાવકોની પ્રીતિને માટે રચ્યો.





(ગુ૦) શ્રી સુધર્મારિવામીની પરમ્પરામાં ક્રમશઃ શ્રી રત્નસૂરિય થયા. તેના શિષ્ય ક્ષમા ગુણને ધારણ કરવામાં નિપુણ શ્રી ક્ષમાસૂરિય થયા. તેમના પાટે શ્રીમદ્ દેવેન્દ્રસૂરિય થયા. અને તેમના પદ્મવિભૂષક વિદ્યાવન્ત નિપુણ શ્રી કલ્યાણસૂરિય થયા. એમના શિષ્ય શ્રી પ્રમોદ-સૂરિય થયા. જે ભવ્યજનોના ઉદ્ધારક હતા. તેમના શિષ્ય શ્રીમદ્ રાજેન્દ્રસૂરિય થયા. જેમણે બાળ જીવોના હિતના માટે અને કુદ્ધી આદિ સંઘની વિનંતિથી વિક્રમ સં૦ ૧૯૨૭માં આ અષ્ટાહિકા વ્યાખ્યાનનો ભાષાનુવાદ કર્યો.

રસનયન પૂરણ ચક્ર વપે વાસસિયાણા રહી;  
શ્રીમદ્ ચતીન્દ્રસૂરિય અનુચર જયન્ત મધુકર સંગ્રહી.  
નિર્વિઘ્નતાએ આજ આ ગુર્જર ગિરા અનુવાદને;  
સંપૂર્ણ કરતાં સહજ ભાવે મેળવ્યો આહ્વાદને. ॥



## પર્યુષણ પર્વની સંજ્ઞતા

લેખક:-સુનિરાજ શ્રી જયંતવિજયજી મહારાજ ‘મધુકર’

અનાદિ કાળથી ચાલતું આવ્યું છે સંસારનું આ ચક્ર!  
રાગની સુવાણી સેજમાં સુવાડતું આવ્યું છે જગતના જીવમાત્રને!  
દેવની આગમાં બાળતું આવ્યું છે આત્માના વિશુદ્ધતમ ગુણોને!  
પરમ્પરાની સર્જયેલી અજ્ઞાનની અધિકતા અને સમ્યગ્જ્ઞાનની ન્યૂનતા! અશ્રદ્ધાની અખુટતા અને શ્રદ્ધાની નિર્મળતા! ચારિત્રની ઉણપ, દુશ્ચારિત્રની વિપુલતા! પછી....

ચત્તપૂર્વક સાધનામાં સંજ્ઞતા મળવાના બદલે અનાદિનો ટેવાયેલ આત્મા નિષ્જ્ઞતા સિવાય કંઈપણ પામી શક્યો નહિ!

રાગની બાહુલતા અને દેવની વિપુલતાનું આ પરિણામ છે.

જીવનું જીવત્વ કળી શકાતું નથી અને પોતામાં પોતાનાથી ભગી શકાતું પણ નથી.

જરૂરી જગ્ગર ભીંસમાં જીવનની નાવડી ભવ નિર્થકતાના આવારે આવીને કાળી રોંદે છે.



પ્રસુપ્ત અવસ્થાવાળા જાણવા. જેઓ ક્યારેય આંખ ઉઘાડીને પોતાની સ્વયંની અવસ્થા, સદવસ્થા કે દુરવસ્થાનો વિચાર સુદ્ધાંય કરી શકતા નથી.

જેઓ આસક્તિથી છુટવા મથતા નથી છતાં આસક્તિની ભયંકરતાને જાણતા હોય છે, તે જીવોને સુપ્ત સ્થિતિવાળા કહ્યા છે. જેઓ જાણવા છતાંય આચરવાની તત્પરતા દાખવી શકતા નથી.

જેમને આસક્તિ, મિથ્યાત્વમયી પરિણતિ તથા સંસારનાં બંધનોનું જ્ઞાન થાય અને જેઓ એ બંધનોથી જેમ બને તેમ છુટવાનો પ્રયત્ન કરતા હોય છે, યથાશક્ય છુટતા જાય છે, તે જીવોને જાગૃત દર્શાવાળા કહેલા છે જેઓ બંધનથી મુક્તિનો અધિકાર મેળવી લે છે.

જેઓ મિથ્યાત્વથી મુક્તિ મેળવીને, આસક્તિને અગળી કરીને સમ્યક્ત્વના ભાવથી ઓતપ્રોત થયેલા છે, લૌકિક અને લોકોત્તર ભાવોને સમ્પૂર્ણપણે સમજી લીધા છે જેણે, એ બધાય જીવોને ઉત્થિત એટલે ઉભા થયેલ સમજવા જોઈએ. જેમને ચરણ, કરણ અને મનમાં અપૂર્વ આહ્વાદ અને રસાસ્વાદનનો અનુભવ થાય છે.

જેઓ વિશુદ્ધ પરિણતિમાં રમણ કરતા હોય છે, તમેવ સત્ત્વં જં જિજ્ઞેષ દેવિત્વયં ના ભાવને જેમણે દ્રવ્ય અને ભાવથી પોતાના વિચાર અને આચારમાં ઉતારી લીધા હોય છે. ત્યાગમાં જેમને આનંદ આવતો હોય છે, રાગમાં નિરસતા દેખાતી હોય છે. આરાધક ભાવ પ્રગળી જતો રહે અને વિરાધક ભાવ જેમને સ્વપ્નમાં પણ સ્પર્શી શકતો નથી તે જીવોને પ્રસ્થિત થયેલ સમજવા જોઈએ.

જેમને ક્રમશઃ ગુણસ્થાનકની સ્પર્શના થતી જતાં ત્રિધીભેદ અને અપુનર્બંધક દર્શાની સ્થિતિ પ્રાપ્ત થઈ જાય છે.

પર્વાધિરાજ પર્યુપણ !

મૈત્રી, પ્રમોદાદિ ભાવોને આત્મસાત્ કરવા માટે પ્રબલ પ્રેરણા આપનાર છે.

જગો, ઉઠા! અને આગળ વધોનો શંખનાદ કરનાર છે.

ભગ્યોની ભગ્યતાને છતી કરવા અને આરાધનાના મંગળમય માર્ગે રવાની હાકલ કરતા પર્વાધિરાજ જણાવે છે કે, તમારા જીવનની શૈવ કરો અને નિદ્રાળો તો ખરા કે તમે ક્યાં છો ? તમારી



એકાન્તિક પક્ષપાત હૃદયમાં જગે છે ત્યારે આત્મા અનેકાન્તિક પક્ષકાર બનવાનું બધુંય સામર્થ્ય ગુમાવી ખેસે છે.

જ્યારે પોતાની દૃષ્ટિનું જ સમર્થન કરવાની અને અન્યનું ઉત્થાપન કરવાનું ધ્યેય રહે છે ત્યારે ગુણાનુરાગી અને ગુણપાક્ષિક બનવાની પોતાની સ્થિતિનો પોતે જ વિનાશક બની જાય છે.

દૃષ્ટિની પ્રાપ્તિ અનુભવ ઉપરથી સમજી શકાય છે. અનુભવીઓ આરાધનાને મહત્ત્વ આપે છે અને આરાધકભાવ અન્તર પ્રદેશમાં પ્રબળ બને તેવી રીતનો એમનો વ્યવહાર હોય છે.

ગુણી વિના ગુણ ન હોય એટલે આધારાધેય ભાવનો સમન્વયાત્મક દૃષ્ટિકોણ જ્યારે બની જાય છે ત્યારે કોઈના પ્રત્યે અણુગમે કે સૂક્ષ્મને ઉત્પન્ન થવાનો અવકાશ રહેતો નથી.

જ્યારે દૃષ્ટિ વિકલ બની જાય છે ત્યારે પોતાની વિકલતાનો ખ્યાલ રહેતો નથી અને સર્વત્ર પોતા સિવાય બીજામાં વિકલતા દૃષ્ટિગોચર થતી દેખાય છે.

પરિણામે ઉહાપોહ અને અજ્ઞાપા સિવાય બીજું કંઈ રહેતું જ નથી. મનની વિહંગતા, તનની અચળતા અને વચનની વિસંવાદિતા વધતી જતાં ધાર્યા કરતાં સ્થિતિ ઉલટી થતી દેખાય છે.

સાધક, આરાધક અને શાસનના અદના ઉપાસક બનવા માટે દૃષ્ટિની વિશાળતા હોવી જોઈએ.

અસત્યમાં પણ અસત્યરૂપે સત્ય તો સમાયેલું છે.

નૈગમ નયનો અભ્યાસી અને જ્ઞાતા જગત્માં થતી કોઈપણ સ્થિતિને વિકાસ માટેનો પ્રારંભ માને છે. પરંતુ એ સ્થિતિ એવંભૂત નય તરફ આગળ વધનારી હોવી જોઈએ. સંપૂર્ણ અશુદ્ધિથી પરિપૂર્ણ શુદ્ધિ તરફ જવાની જે ક્રિયા-પ્રક્રિયા છે તેને નયવાદ લેખ્યો છે.

કોઈપણ દૃષ્ટિની પોતાની મર્યાદા છે. પોતાની મર્યાદામાં પોતે નિશ્ચિત સત્ય હોય પરંતુ બીજાની મર્યાદાનો સંપૂર્ણ અપલાપ કરવાની વૃત્તિ દૃષ્ટિસાપેક્ષની નહિ દૃષ્ટિનિરપેક્ષની સમજવી જોઈએ.





हमारे प्रकाशनों को मंगवा कर अनुपम  
लाभ प्राप्त कीजिये ।

जीवन मंत्र	१-००
जिनेन्द्र पूजा संग्रह (बडेटाइप)	५-००
जीवन साधना	१-००
मार्गानुसारी जीवन	१-००
सौधर्म स्वाध्याय मंजूषा	३-००
सोनेरी संभारणा	०-५०
अष्टाहिका व्याख्यान	२-००
राजेन्द्र कोश में 'अ'	५-००
ज्योतिष प्रवेश	०-७५
प्रभुगुण पुष्पांजली	१-००

-: प्राप्तिस्थान :-

श्री राजेन्द्रसूरि साहित्य प्रकाशन मन्दिर

व्य. कान्तिलाल पी. संघवी  
रतनपोल, हाथीगाना  
अमदावाद

व्य. मांगीलाल बुरड  
पो० राणापुर (म० प्र०)  
जि० झाबुआ



એકાન્તિક પક્ષપાત હૃદયમાં જાગે છે ત્યારે આત્મા અનેકાન્તિક પક્ષકાર બનવાનું બધુંય સામર્થ્ય ગુમાવી બેસે છે.

જ્યારે પોતાની દૃષ્ટિનું જ સમર્થન કરવાની અને અન્યનું ઉત્થાપન કરવાનું ધ્યેય રહે છે ત્યારે ગુણાનુરાગી અને ગુણપાક્ષિક બનવાની પોતાની સ્થિતિનો પોતે જ વિનાશક બની જાય છે.

દૃષ્ટિની પ્રાપ્તિ અનુભવ ઉપરથી સમજી શકાય છે. અનુભવીઓ આરાધનાને મહત્ત્વ આપે છે અને આરાધકભાવ અન્તર પ્રદેશમાં પ્રબળ બને તેવી રીતનો એમનો વ્યવહાર હોય છે.

ગુણી વિના ગુણ ન હોય એટલે આધારાધેય ભાવનો સમન્વયાત્મક દૃષ્ટિકોણ જ્યારે બની જાય છે ત્યારે કોઈના પ્રત્યે અણુગમો કે સૂક્ષ્મને ઉત્પન્ન થવાનો અવકાશ રહેતો નથી.

જ્યારે દૃષ્ટિ વિકલ બની જાય છે ત્યારે પોતાની વિકલતાનો ખ્યાલ રહેતો નથી અને સર્વત્ર પોતા સિવાય બીજામાં વિકલતા દૃષ્ટિગોચર થતી દેખાય છે.

પરિણામે ઉહાપોહ અને અજ્ઞાપા સિવાય બીજું કંઈ રહેતું જ નથી. મનની વિહંગતા, તનની અચળતા અને વચનની વિસંવાદિતા વધતી જતાં ધાર્યા કરતાં સ્થિતિ ઉલટી થતી દેખાય છે.

સાધક, આરાધક અને શાસનના અદના ઉપાસક બનવા માટે દૃષ્ટિની વિશાળતા હોવી જોઈએ.

અસત્યમાં પણ અસત્યરૂપે સત્ય તો સમાયેલું છે.

નૈગમ નયનો અભ્યાસી અને જ્ઞાતા જગત્માં થતી કોઈપણ સ્થિતિને વિકાસ માટેનો પ્રારંભ માને છે. પરંતુ એ સ્થિતિ એવંભૂત નય તરફ આગળ વધનારી હોવી જોઈએ. સંપૂર્ણ અશુદ્ધિથી પરિપૂર્ણ શુદ્ધિ તરફ જવાની જે ક્રિયા-પ્રક્રિયા છે તેને નયવાદ લેખ્યો છે.

કોઈપણ દૃષ્ટિની પોતાની મર્યાદા છે. પોતાની મર્યાદામાં પોતે નિશ્ચિત સત્ય હોય પરંતુ બીજાની મર્યાદાનો સંપૂર્ણ અપલાપ કરવાની વૃત્તિ દૃષ્ટિસાપેક્ષની નહિ દૃષ્ટિનિરપેક્ષની સમજવી જોઈએ.

દક્ષિણાવર્તનની અવસ્થા માટે તેા જૈન જગતમાં એક તહિ અનેક  
અવસ્થાઓમાંથી પસંદ કરવામાં આવેલા છે.

એવેલી દેવેલી રાત્રની સીંચી ગાત્રી આજ્યાયિકાને કાણુ તથી  
જાત્રી જૈન સિદ્ધાન્તના પ્રતિષ્ઠાપનને માટે અપાના આ દિશાન્તનું અનુ-  
સાર કરવાની જુલિ પ્રણામ કરીને તેા જૈનમાન્યની પ્રત્યેક વાતને સમ-  
જાતી ગણા કરી શકે અને અનેક જનની વ્યર્થની અવશ્યુત પકડથી  
આત્મા મુક્ત થાય માને.

માત્ર આમ અપાના પ્રથાનક આજ જગતને જુલુવર કરે છે.

આવીથી આજ આજુ છે. ન્યાયે સર્વોર્થ કારક મંડળ છે. એ  
અનુચિતિનું કારણથી માનીને સીંચી દેવાય કરવે. ન્યાયે અનેક પ્રકારના  
અનુચિતિના આગળી મારાય છે. આ તે દક્ષિણાવર્તની રાત્ર-૧



हमारे प्रकाशनों को मंगवा कर अनुपम  
लाभ प्राप्त कीजिये ।

जीवन मंत्र	१-००
जिनेन्द्र पूजा संग्रह (बडेदाह्य)	५-००
जीवन साधना	१-००
मार्गानुसारी जीवन	१-००
सौधर्म स्वाध्याय मंजूषा	३-००
सोनेरी संभारणा	०-५०
अष्टाद्विका व्याख्यान	२-००
राजेन्द्र कोश में 'अ'	५-००
ज्योतिष प्रवेश	०-७५
प्रभुगुण पुष्पांजली	१-००

-: प्राप्तिस्थान :-

श्री राजेन्द्रसूरि साहित्य प्रकाशन मन्दिर

व्य. कान्तिलाल पी. संघवी  
रतनपोल, हाथीगाना  
अमदावाद

व्य. मांगीलाल वृरड  
पो० राणापुर (म० प्र०)  
जि० झाबुआ

